

बेस्टसेलर 'मैं मन हूँ' और 'मैं कृष्ण हूँ' के लेखक
दीप त्रिवेदी द्वारा लिखित

व्यंग अपने चरम पर!

मुझे सहिष्णुता मत सिखाओ

-भारत



दीप त्रिवेदी

बेस्टसेलर 'मैं मन हूँ' और 'मैं कृष्ण हूँ' के लेखक
दीप त्रिवेदी द्वारा लिखित

व्यंग अपने चरम पर!

मुझे सहिष्णुता मत सिखाओ

-भारत



दीप त्रिवेदी

मुझे सहिष्णुता मत सिखाओ - भारत

अनुक्रमणिका

- | नं. | प्रस्तावना |
|-----|-----------------------------------|
| 1. | लेखक का परिचय |
| 2. | मशहूर वक्ता |
| 3. | लेखक की कलम से... |
| 4. | कॉपीराइट पेज |

मुझे सहिष्णुता मत सिखाओ - भारत

लेखक का परिचय

दीप त्रिवेदी



दीप त्रिवेदी एक प्रसिद्ध लेखक, वक्ता और स्पीरिच्युअल सायको-डाइनेमिक्स के पायनियर हैं जो कि एक व्यापक दृष्टिकोण से ना सिर्फ लिखते हैं, बल्कि विभिन्न विषयों पर लेक्चर्स भी कंडक्ट करते हैं. इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्हें पढ़ने व सुनने-मात्र से मनुष्य में आमूल सकारात्मक परिवर्तन आ जाता है. वे अपने कार्यों द्वारा आजतक हजारों लोगों को सुख और सफलता के मार्ग पर लगा चुके हैं.

दीप त्रिवेदी ने अपने इन कार्यों द्वारा प्रकृति, उसके नियम, उसका आचरण, उसकी सायकोलोजी और उसके मनुष्यजीवन पर पढ़नेवाले प्रभाव को बड़ी ही गहराई से समझाया है. जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं है जिसे उन्होंने न छूआ हो. वे कहते हैं कि सायकोलोजी के बाबत कम ज्ञान और कम समझ होना ही मनुष्य-जीवन के तमाम दुःखों और असफलताओं का मूल कारण है.

बेस्टसेलर 'मैं मन हूँ' और कई अन्य किताबों के लेखक, दीप त्रिवेदी की खास बात यह है कि वे जीवन के गहरे-से-गहरे पहलुओं को छूते हैं और उन्हें सरलतम भाषा में लोगों के सामने प्रस्तुत करते हैं जिससे कन्फ्यूजन की कहीं कोई गुंजाइश ही नहीं बचती है.

मनुष्यजीवन की गहरे-से-गहरी सायकोलोजी पर उनकी पकड़ का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि मनुष्य के जीवन पर सर्वाधिक 12038 कोटेशन लिखने का रेकार्ड उनके नाम पर दर्ज है. साथ ही मनुष्यजीवन पर सर्वाधिक लेक्चर्स देने का रेकार्ड भी उन्हीं के नाम पर है और यह दोनों रेकार्ड एशिया बुक ऑफ रेकार्ड्स और इंडिया बुक ऑफ रेकार्ड्स में दर्ज हैं. इसके अलावा, 'भगवद्गीता' पर सर्वाधिक लेक्चर्स देने का रेकार्ड भी उन्हीं के नाम पर है और यह भी एशिया बुक ऑफ रेकार्ड्स और इंडिया बुक ऑफ रेकार्ड्स में दर्ज है, जिसमें उन्होंने 58 दिनों में गीता पर 168 घंटे, 28 मिनट और 50 सेकंड तक एक लंबी चर्चा करी है. साथ ही अष्टावक्र गीता और ताओ-ते-चिंग पर भी सर्वाधिक लेक्चर्स देने का रेकार्ड उन्हीं के नाम पर एशिया बुक ऑफ रेकार्ड्स और इंडिया बुक ऑफ रेकार्ड्स में दर्ज है. ये सारे लेक्चर्स भारत में लाइव ऑडियन्स के सामने दिये गए थे. इसके अलावा भगवद्गीता और ताओ-ते-चिंग के सायकोलोजिकल पहलुओं पर उनके योगदान के लिए यूके की वर्ल्ड रेकार्ड्स यूनिवर्सिटी ने दीप त्रिवेदी को ऑनरेरी डॉक्टरेट की उपाधि भी प्रदान की है.

वे अपने लेख और लेक्चर्स में जिस अनोखी स्पीरिच्युअल-सायकोलोजिकल भाषा और एक्सप्रेसन का इस्तेमाल करते हैं उससे उन्हें पढ़ने तथा सुनने वालों में उसका तात्कालिक प्रभाव भी होने लगता है और यही बात उन्हें इस क्षेत्र का पायनियर बनाती है.

इनके बारे में और अधिक जानने के लिए विजिट करें : www.deeprivedi.com

दीप त्रिवेदी - मशहूर वक्ता

दीप त्रिवेदी सायको-स्पीरिच्युअल कॉन्टेंट, आवाज, भाषा और एक्सप्रेसन का ऐसा मिश्रण प्रस्तुत करते हैं जिससे उन्हें देखने और सुनने वालों में तत्काल परिवर्तन आता है. सैकड़ों लोग सिर्फ उन्हें सुनने-मात्र से परिवर्तित हो चुके हैं. इसी वजह से उन्हें स्पीरिच्युअल सायको-डाइनेमिक्स का पायनियर भी कहा जाता है.

दीप त्रिवेदी जीवन से जुड़े हर विषय पर प्रकाश डालते हैं. जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं है जिसे उन्होंने न छूआ हो. वे विभिन्न विषयों पर बोल चुके हैं जैसे भगवद्गीता, ताओ-ते-चिंग, अष्टावक्र गीता और:

प्रकृति के नियम

टाइम एण्ड स्पेस

धर्म

डीएनए-जीन्स

जीवन की राह

डे-स्लीप

मन और बुद्धि

व्यक्तित्व

हीनता

डर

गिल्ट

इन्वोल्वमेंट

पक्षपात

अपेक्षा

स्वीकार्यशक्ति

नेचरल इंटेलिजेंस

ट्रान्स्फॉर्मेशन

विवाह

स्वतंत्रता

भविष्य

हिपोक्रेसी

क्रिएटिविटी
कोन्सन्ट्रेशन
सुख और सफलता
समृद्धि
अच्छा-बुरा
भगवान
अहंकार
क्रोध
सेल्फ-कॉन्फिडेंस
प्रेम
कन्प्यूजन

लेखक की कलम से...

जब अमेरिका के राष्ट्रपति ओबामा ने अपनी भारत-यात्रा के दौरान 'भारत को सहिष्णुता' का पाठ पढ़ाने की कोशिश की तो मैं आश्चर्यचकित रह गया. ...और यह किताब उसी आश्चर्य की कोख से निकली है. उनका यह बयान सुनते ही एक साथ कई प्रश्न मेरे जहन में घूमने लगे. सबसे पहली बात तो यह कि क्या वाकई भारत में इतनी असहिष्णुता व्याप्त है कि ओबामा को भारत को सहिष्णुता पर सबक देना पड़ जाए? और फिर क्या ओबामा सहिष्णुता का अर्थ भी समझते हैं या नहीं? सवाल तो यह भी कि क्या पश्चिमी देश इतने सहिष्णु हैं कि उनका कोई व्यक्ति भारत की धरती पर आकर उसकी ही सहिष्णुता पर उंगली उठा जाए? सवाल तो यह भी जहन में उठा कि किसी भारतीय लाल ने ओबामा की नसीहत का मुंह-तोड़ जवाब क्यों नहीं दिया?

...सो बस इन्हीं सब सवालों के उठते मैंने सहिष्णुता पर पूरी किताब ही लिख डाली. और जब पूरी किताब लिखी तो इसमें पूरे विश्व की सहिष्णुता को नापा भी. क्योंकि जब कोई दूसरा आकर हमें सहिष्णुता का पाठ पढ़ाए तो यह जानना जरूरी हो ही जाता है कि अन्य देश कितने सहिष्णु हैं. साथ ही यह बात भी काबिले गौर है कि सहिष्णुता के एक नहीं हजारों पैमाने हैं. दरअसल तो सहिष्णुता से ज्यादा व्यापक और महत्वपूर्ण दूसरा कोई शब्द हो ही नहीं सकता है. क्योंकि मनुष्य हो या परिवार, देश हो या समाज; उसके सुख और समृद्धि का आधार ही सहिष्णुता है. अतः मैंने इस किताब में सहिष्णुता की वास्तविक परिभाषा को भी विस्तार से समझाने का प्रयास किया है. इसके साथ ही इसमें मैंने विश्व में स्थित विभिन्न समाज, संप्रदाय तथा संस्कृति की सहिष्णुताओं को भी अच्छे से नापा-तौला है. भारत के तो वर्तमान प्रधानमंत्री से लेकर अतीत के सभी प्रमुख प्रधानमंत्रियों की अपने पद की गरिमा के प्रति सहिष्णुता को भी पूरा-पूरा परखा है.

हां, एक बात अवश्य है कि विषय की मांग को देखते हुए इस किताब की भाषा थोड़ी कटाक्षपूर्ण है. कई जगह करारे व्यंग भी कसे गए हैं. लेकिन इसमें किसी व्यक्ति, समाज या संप्रदाय को बुरा मानने की आवश्यकता नहीं है. क्योंकि एक बात तय है कि मैंने सबकुछ करुणावश तथा बिना पक्षपात के ही कहा है. हां, एक बात और कि अपनी बात कहते वक्त इस किताब में मैंने कई दृष्टांतों, तथ्यों तथा आंकड़ों का भी सहारा लिया है. क्योंकि इस किताब को यदि सहिष्णुता का वास्तविक पैमाना मापने की मशीन कहा जाए, तो भी गलत नहीं होगा. मुझे उम्मीद है कि इससे हरकोई अपनी व्यक्तिगत सहिष्णुता भी अच्छे से नाप-तौल सकेगा. और यह जरूरी भी है. क्योंकि अंत में तो जीवन के सुख और सफलता का पूरा दारोमदार सहिष्णुता पर ही टिका हुआ है. व्यक्ति हो, समाज हो या देश हो, आगे वही बढ़ा है जो सहिष्णु है. यहां यह भी स्पष्ट कर दूं कि मैंने यह किताब विश्व की तस्वीर बदलने हेतु लिखी है. उम्मीद करता हूँ कि मेरा यह रोचक प्रयास ना सिर्फ आपको पसंद आएगा,

बल्कि मेरा यह प्रयास आपको, आपके परिवार को, आपके समाज और देश को नई
ऊंचाइयां छूने में सहायक भी सिद्ध होगा.

बस इसी उम्मीद के साथ मैं यह किताब आपको समर्पित करता हूँ.

आपका अपना,

भारत

दीप त्रिवेदी

कॉपीराइट

मुझे सहिष्णुता मत सिखाओ - भारत

प्रथम संस्करण : 2017

भारत में मुद्रित

संकल्पना, चित्रण व साज-सज्जा:

आत्मन इनोवेशन्स

प्रकाशन का स्थान- मुंबई

www.aatmaninnovations.com

प्रकाशक की पूर्व लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक के आंशिक/संपूर्ण हिस्से का पुनरुत्पादन, भविष्य में पुनःप्राप्ति हेतु संग्रहण या अन्य किसी भी माध्यम से प्रसारण करने हेतु किसी भी साधनों यथा इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग के द्वारा करना सर्वथा निषिद्ध है.

© Aatman Innovations Pvt. Ltd.

मैं भारत हूँ... आप सभी लोग आश्चर्यचकित होंगे कि करोड़ों वर्षों में नहीं और आज ही क्यों मैं सबके सामने प्रकट हुआ हूँ, और वह भी कुछ कहने के लिए. ...तो इसके लिए मैं अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति बराक ओबामा को धन्यवाद देना चाहता हूँ. वैसे उनसे मुझे एक शिकायत भी है. साथ ही, उन्हें मैं एक नसीहत भी देना चाहता हूँ.

निश्चित ही...आप कहेंगे कि यह क्या बात हुई? एक ही व्यक्ति को धन्यवाद भी, उससे शिकायत भी और उसे नसीहत भी.... हां, क्या करूं? बात ही कुछ ऐसी है. और फिर मैं हूँ भी तो विशाल हृदय. आपके लिए धन्यवाद देना, शिकायत करना या नसीहत देना अलग-अलग भाव हो सकते हैं, परंतु मुझ विशाल-हृदय भारत के लिए तो यह सब एक ही बात है. मेरे हृदय में तो सबके प्रति प्रेम व करुणा ही है, फिर चाहे वे मेरी धरती की संतानें हों या किसी अन्य धरती की. क्योंकि अंत में तो वे सब भी हैं तो किसी-न-किसी धरती की ही संतानें. और फिर मैं तो माता व पिता दोनों हूँ. मनुष्य पैदा भी मेरी छाती पर होते हैं और पलते भी मेरी छाती पर ही हैं. सो, मेरी करुणा का आयाम समझना तो यूं भी हर किसी के बस की बात नहीं. खैर होगा, अभी तो पहले सीधे मैं ओबामा से बात कर लूं, जिनकी वजह से मैं आप सबके सामने प्रकट हुआ हूँ.

...तो मिस्टर ओबामा! आप भारत आए, मैंने और मेरी संतानों ने ना सिर्फ आपका शानदार स्वागत किया बल्कि आपको अपने सर-आंखों पर भी बिठाया. बिठाना ही चाहिए, यही भारतीय परंपरा है. यूं भी विश्व के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र के राष्ट्राध्यक्ष होने के नाते आप इस शानदार स्वागत के योग्य भी थे. और फिर आपका जाती व्यक्तित्व भी तो शानदार है. अतः आपका शानदार स्वागत होना ही था, तथा वह करके मेरी संतानों ने मेरा सर ऊंचा ही किया है. सो यह कोई खास बात नहीं. खास बात तो वहां से शुरू हुई जब भारत से जाते-जाते आपने मेरी संतानों को सहिष्णुता सिखाने की कोशिश की. हो सकता है कि आप वह वक्तव्य देकर भूल भी गए हों. सो, आपको आपका वह वक्तव्य मैं याद दिला देता हूँ. आपका वक्तव्य था कि “हर व्यक्ति को ये अधिकार है कि वह अपनी धार्मिक मान्यताओं का पालन बिना किसी उत्पीड़न, भय और भेदभाव के करे. भारत तभी तक प्रगति कर सकेगा जब तक उसे धर्म के आधार पर कुचला नहीं जाएगा. भारत के संविधान के 25 वें अनुच्छेद में कहा गया है कि सभी लोगों को अपने विचारों को व्यक्त करने की स्वतन्त्रता है. साथ ही भारत के संविधान में सभी को यह अधिकार भी उपलब्ध है कि वे खुले तौर पर अपनी धार्मिक मान्यताओं का ना सिर्फ पालन करे, बल्कि उसका प्रचार-प्रसार भी करे.” और ठीक उसके कुछ समय पश्चात आपने कहा “लेकिन पिछले कुछ सालों से सभी प्रकार की धार्मिक मान्यताओं ने समय-समय पर दूसरे लोगों की मान्यताओं को, उनके विश्वास और उनकी परंपराओं को ठेस पहुंचाई है. असहिष्णुता की ऐसी घटनाएं गांधीजी को हैरान कर के रख देती, जिन्होंने आपके देश को आजादी दिलाई थी.”

सच कहूं तो आपके इस वक्तव्य ने मुझे गहरी चोट पहुंचाई. उसने मुझे एक ऐसी वेदना दी जिसका अनुभव मैंने अपने करोड़ों वर्षों के अस्तित्व में पहली बार किया. अब मैं तो पहले ही कह चुका हूँ कि मेरा हृदय अति विशाल है, और वह होना ही है. आखिर एक सौ बत्तीस करोड़ संतानें मेरी छाती पर पलती हैं. एकबार को अस्सी-सौ वर्ष जीनेवाले मनुष्य के हृदय तो संकुचित हो सकते हैं, परंतु करोड़ों वर्षों से उनको पैदा करने तथा पालनेवाले का हृदय कैसे संकुचित हो सकता है? सो मैं, चाहे जो हो जाए, तुम्हारे इरादे पर तो शक कर ही नहीं सकता. यह तो मैं सोच ही नहीं सकता कि यह वक्तव्य तुमने मुझे तथा मेरी संतानों को बदनाम करने हेतु या उन्हें नीचा दिखाने हेतु कहा होगा. नहीं...मैं यह मानकर ही चल रहा हूँ कि तुमने यह बात मेरी संतानों के प्रति करुणावश ही कही होगी.

बराक, तुम विश्व के सबसे बड़े पद पर बैठे व्यक्ति थे. इस छोटी उम्र में यह मुकाम पाना निश्चित ही तुम्हारे व्यक्तित्व और प्रतिभा, दोनों को दर्शाता है. लेकिन मैं स्पष्ट कहूं तो यह वक्तव्य देते वक्त तुमने अपने पद की गरिमा के प्रति तुम्हारी जो जिम्मेदारी होती है, उसका निर्वाह नहीं किया. तुमसे एक बड़ी चूक हुई. भारत की संतानों को सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने से पूर्व यह तुम्हारी जिम्मेदारी थी कि भारत की सहिष्णुता का इतिहास अच्छे से टटोल लेते. साथ ही बेहतर होता यदि तुम अन्य सभ्यताओं के इतिहास को भी थोड़ा देख लेते. अतः मैं तुम्हारी जानकारी के लिए यह बता दूँ कि मेरी संतानें शुरू से, हर युग में अन्य धरती की संतानों के मुकाबले ज्यादा सहिष्णु रही हैं. और वे एक-दो नहीं, हर मामले में सर्वाधिक सहिष्णु रही हैं. उन्होंने सहिष्णुता के मामलों में मेरा सर अन्य राष्ट्रों से हमेशा ऊंचा रखा है.

खैर, तुमने अपना वक्तव्य धार्मिक सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने पर दिया था, सो पहले मैं अपनी धरती की संतानों की धार्मिक सहिष्णुता बाबत ही बात कर लेता हूँ. और कोई भी बात समझाने का सबसे आसान तरीका होता है, उदाहरण देना. यूं भी आजकल आप सब वैज्ञानिक युग में जी रहे हैं. इस युग में मनुष्य की चेतना ने विकास की एक अद्भुत ऊंचाई छूई है. पहले का मनुष्य बातों पर अंधा विश्वास कर लेता था. परंतु आज का मनुष्य चिंतनशील है. वह बात की सत्यता सिद्ध न हो, तबतक उसपर आसानी से विश्वास नहीं करता है. करना चाहिए भी नहीं, क्योंकि यही तो वह एक गुण है जिसके बूते पर आज के मनुष्य ने प्रगति के ऊंचे-ऊंचे शिखर छूए हैं. सच कहता हूँ कि आज मैं जो प्रगति देख रहा हूँ...वह युगों हो गए, मैंने नहीं देखी. आप लोगों की यह प्रगति देख मेरा ही नहीं, हर धरती का सीना गर्व से चौड़ा हुआ जा रहा है. हां, एक बात का अफसोस कभी-कभी अवश्य होता है कि आज के इस वैज्ञानिक युग में भी अधिकांश लोग अब भी अंधविश्वासी ही हैं. मारे डर के नाना प्रकार की ऊंची, हवाई एवं झूठी बातों के शिकार हैं. और उन्हीं लोगों के कारण प्रगति में रुकावटें पैदा हो रही हैं. अब इस कारण उनका जीवन तो कष्टपूर्ण है ही है, साथ ही उनके कारण चेतनाशील मनुष्यों की मेहनत के भी वांछित परिणाम नहीं आ रहे हैं. वरना

आज के मनुष्यों की चेतना को देखते हुए मैं अपने अनुभवों के आधार पर यह कह सकता हूँ कि आज की मनुष्यता में ना सिर्फ धरती को स्वर्ग बनाने की क्षमता है, बल्कि आज की यह मनुष्यता ब्रह्मांड पर राज करने का हौसला भी रखती है. सो, बातों पर अंधा विश्वास न करना एक श्रेष्ठ गुण है. हवाई बातों से अपने को दूर रखना आज के वैज्ञानिक युग के मनुष्य का कर्तव्य है. और मैं दावे से कहता हूँ कि जब विश्व के तमाम मनुष्य यह गुण अपना लेंगे तो पृथ्वी आसमान की ऊंचाइयां छू लेगी.

खैर, मैं वापस भारतीय सहिष्णुता के इतिहास पर लौट आता हूँ. और चूंकि बात मैं वैज्ञानिक युग के मनुष्यों से कर रहा हूँ, सो मुझे अपनी धरती की सहिष्णुता के सबूत भी देने ही होंगे. और इस बात का मैं एक महान उदाहरण दू तो आज से करीब सात हजार वर्ष पूर्व “राम” करके एक व्यक्ति अयोध्या नगरी में पैदा हुआ था. वह जीते जी भी सबका लाडला था, और आज तो वह करोड़ों लोगों द्वारा भगवान की तरह पूजा भी जाता है. मैं आज तुमको उसके जीवन की एक घटना बताता हूँ. वह अपनी पत्नी सीता से बेहद प्यार करता था. लेकिन एकदिन ऐसा हुआ कि रावण नामक एक शक्तिशाली व्यक्ति की खराब नजर सीता की खूबसूरती पर पड़ी और उसने उसका अपहरण कर लिया. खैर, राम ने अपनी पत्नी को उसके शिकंजे से छुड़वाने हेतु जी-जान लगा दी और अंततः अपने शौर्य व दृढ़ इरादों की बदौलत उसने अपनी प्यारी पत्नी सीता को उसकी कैद से आजाद भी करवा लिया. हालांकि यह कार्य आसानी से नहीं निपटा, इस हेतु उसे अति शक्तिशाली रावण से एक महायुद्ध लड़ना पड़ा. ...और इसी युद्ध के दौरान उसके हाथों रावण बुरी तरह घायल हो गया. जहां तक रावण का सवाल है, वह स्वभाव से क्रूर जरूर था, परंतु साथ ही वह अति ज्ञानी व धार्मिक भी था. उसके व्यक्तित्व के इसी विरोधाभास ने उसे एक अलग ही पहचान उस समय भी दे रखी थी, और आज भी उसके व्यक्तित्व के इन दोनों स्वरूपों के आधार पर उसे अलग-अलग पहचान उपलब्ध है. जहां एक ओर उसके शैतानी मन के पुतले को उसकी मृत्यु के दिन दशहरा पर जलाया जाता है, वहीं अनेक जगहों पर उसके ज्ञानी हृदय की भगवान की तरह पूजा भी की जाती है.

सोचो मिस्टर ओबामा, मेरी संतानें इतनी सहिष्णु हैं कि एक व्यक्ति के कुकर्मी होने के बावजूद, उसके ज्ञान का ना सिर्फ सम्मान करती है बल्कि उस ज्ञान के कारण उसे भगवान की तरह पूजती भी है. और पूजते वक्त वह यह नहीं सोचती कि यह व्यक्ति वही है जिसने उनके लाड़ले राम की आदर्श पत्नी सीता का अपहरण कर उसपर जुल्म ढाए थे. ...यह तो ठीक पर इसके आगे की दास्तान उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण है. राम ने अपनी पत्नी को छुड़वाने हेतु तथा लोगों को रावण के जुल्मों से छुटकारा दिलवाने हेतु भले ही रावण को बुरी तरह घायल कर दिया था, परंतु उसके बाद उसके प्रति अपने मन की सारी कटुता भुलाकर तत्क्षण घायल रावण के ज्ञान को हाथोंहाथ उसी जगह प्रणाम भी किया था.

आपको आश्चर्य होगा कि रावण ने अपनी अंतिम सांसों “अपने को प्रणाम करते हुए” राम को देखते हुए ली थी.

सो मिस्टर ओबामा, इसे कहते हैं सहिष्णुता. ऐसा एक उदाहरण कभी अपने इतिहास में बताना. मेरी संतानों को यहां आकर आपने जो कुछ नसीहत दी, अच्छी ही दी..! परंतु बेहतर होता यदि पहले थोड़ा पूरी दुनिया के सहिष्णुता के इतिहास में झांक लिया होता. वैसे आपके वक्तव्य ने मुझे बुरी तरह विचलित किया हो, ऐसा भी नहीं है. क्योंकि आपकी उम्र ही क्या है, और आपका अनुभव ही क्या है? मैं यह अच्छे से समझता हूँ कि यह एक व्यावहारिक चूक है, भावनात्मक कतई नहीं. निश्चित ही तुम एक ऐसी संतान हो, जिस पर आज विश्व की हर धरती को नाज है. तुमने अपने देश के प्रति तो अपने कर्तव्यों का निर्वाह किया ही था, साथ ही सबसे शक्तिशाली राष्ट्र के राष्ट्राध्यक्ष होने के नाते विश्व के प्रति भी अपनी कई जिम्मेदारियों को तुमने बखूबी निभाया था. अतः मुझे तुमसे कोई विशेष शिकायत नहीं. तुमने जो कुछ कहा, कह दिया. कोई खास बात नहीं. परंतु सच कहूं तो मुझे असल वेदना तो इस बात से पहुंची है कि मेरी धरती की संतानों ने अपने असहिष्णु होने की बात किसी के मुख से सुन कैसे ली? किसी ने इसका हाथोंहाथ मुंहतोड़ जवाब क्यों नहीं दिया? मेरी एक भी संतान की छाती छप्पन इंच की क्यों नहीं निकली? और जहां तक तुम्हारा सवाल है मिस्टर ओबामा, तो तुम इसे मेरे द्वारा बात शुरू करने के एक खूबसूरत बहाने के तौर पर ले सकते हो. अतः तुम्हें इसमें बुरा मानने की कोई आवश्यकता नहीं. और फिर मैं बात भी तो सीधी, स्पष्ट व सत्य ही कह रहा हूँ. मैं कोई भी बात यूं ही कहने से रहा. आखिर मैं एक विशाल हृदय धरती हूँ. और फिर यदि मैं ओबामा की बात को खेलदिली से ले रहा हूँ, तो मेरी बात को तो वैसे ही किसी को अन्यथा नहीं लेनी चाहिए. मेरी भावना किसी को चोट पहुंचाने की या नीचा दिखाने की हो ही नहीं सकती है. मैं तो जब भी और जो भी कहूंगा, मनुष्यता के उद्धार हेतु ही कहूंगा.

सो, वापस मैं मुख्य मुद्दे पर लौट आऊं. तथा मुख्य मुद्दा यही कि असहिष्णुता के नाम पर मेरी संतानों पे हमला हुआ है. और वह भी सबसे शक्तिशाली राष्ट्र के राष्ट्राध्यक्ष द्वारा. और कमाल यह कि सबसे सहिष्णु धरती को सहिष्णुता के नाम पर नसीहत दी गई है. अब संतानें भले ही चुप रह गई, परंतु ऐसे में मेरे तो चुप बैठने का सवाल ही नहीं उठता है. मुझे तो मेरे अनुभवों का सत्य उजागर करना ही रहा. मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं कोई भी बात ऐसे ही नहीं कहता हूँ. वैज्ञानिक युग में प्रकट हुआ हूँ तो सबूतों की भाषा बोलना भी अच्छे से जानता हूँ. और सबूत के तौरपर कहूं तो जीसस क्राइस्ट का नाम तो आपने सुना ही होगा. हां, वही जिनके पीछे पूरी क्रिश्चियनिटी की स्थापना हुई है. जो आज की तारीख में विश्व में सर्वाधिक पूजे जानेवाले देवताओं में से एक हैं. लेकिन यह तो आज की बात हुई. और किसी की मृत्यु के बाद उसके साथ क्या किया जाता है, इसका सहिष्णुता से कोई खास ताल्लुक नहीं. उसकी कोई बहुत ज्यादा कीमत भी नहीं. जीते-जी

यदि किसी ने अपने माता-पिता या दादा-दादी की तरफ देखा न हो, उनकी सेवा न की हो...और मृत्यु पश्चात उनके नाम पर दान दे या उनके चर्च बनवाए; या भारतीय परंपरानुसार उनका श्राद्ध मनाए, उसकी कीमत क्या? उसमें प्यार कहां झलकता है? यह नाटक उनके मृत माता-पिता या दादा-दादी को सुकून कहां पहुंचा सकता है? कहने का तात्पर्य यह कि आज जीसस क्राइस्ट के साथ क्या किया जा रहा है, उसमें मैं पड़ना नहीं चाहता. मैं ऊपरी या छिछोरी बात करने के बजाए व्यावहारिक और स्तरीय बात करने में विश्वास करता हूँ. तथा वही करने और समझाने की कोशिश कर रहा हूँ.

सो, अभी तो सीधे-सीधे मुझे यह बताओ कि जीसस कौन थे? उनका गुनाह क्या था? ऐसा तो उन्होंने क्या कर लिया था कि उनको सूली पर लटकाया जाना जरूरी हो गया था? ऐसा तो क्या हो गया था कि उनके बदन पर कीलें ठोकते-ठोकते उन्हें बेदर्दी से तड़पा-तड़पा कर मारना जरूरी हो गया था? अरे, जीसस तो एक अति प्यारे, भोले, ज्ञानी तथा करुणावान व्यक्ति थे. वे उन चन्द महान संतानों में से थे जिस पर कोई भी धरती करोड़ों वर्ष नाज कर सकती है. जीसस ज्ञान व प्यार ही तो बांट रहे थे. सत्य ही तो कह रहे थे. पाखंड व शोषण के खिलाफ आवाज ही तो उठा रहे थे. माना, बात उस समय की व्यवस्था तथा मान्यताओं के खिलाफ जा रही थी, तो भी क्या हुआ? अच्छे का स्वागत तो होना ही चाहिए. चलो इतने सहिष्णु नहीं, स्वागत नहीं कर सकते...तो भी कोई बात नहीं. ठीक है, यदि बात समझ में नहीं आती तो उपेक्षा कर लो, परंतु यह तड़पा-तड़पा कर सूली पर लटका देना!

आखिर क्राइस्ट कह ही क्या रहे थे? यही न कि मैं ईश्वर की संतान हूँ. आप सबके लिए उसका संदेश लाया हूँ. वे यही तो कह रहे थे कि मेरा विश्वास जानो; ईश्वर बिना भेद-भाव के सबको बराबरी पर प्यार करता है. उसके आशीर्वाद पाने हेतु धन या समय का व्यय करने की कोई आवश्यकता नहीं. ईश्वर के आशीर्वाद पाने हेतु मीडिएटर यानी बिचौलियों की जरूरत नहीं. अब इन सारी बातों में उनकी कौन-सी कही बात गलत थी? एक भी नहीं. परंतु क्या करें...? जीसस की सच्ची बातें बिचौलियों, यानी कहा जा सकता है कि उस समय के पादरियों को रास नहीं आई, और चढ़ा दिया उन्हीं की धरती की एक महान संतान को सूली पर. मार डाला अपनी ही धरती के महानतम चांद को. ...क्या इसे सहिष्णुता कहोगे? नहीं.... निश्चित ही जीसस के साथ किए गए व्यवहार ने असहिष्णुता की सारी सीमाएं पार कर ही ली थी. तो फिर आपने भारतवासियों को सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने से पूर्व उन लोगों को सहिष्णुता का पाठ क्यों नहीं पढ़ाया जिन्होंने जीसस के साथ ऐसा व्यवहार किया? और जहां तक मेरी धरती के संतानों की बात है, तो मेरी धरती का तो बच्चा-बच्चा सुबह-शाम यह सिर्फ कहता ही नहीं, मानता भी है कि वह ईश्वर की संतान है. सो मेरी धरती व उसके संतानों की कम-से-कम धार्मिक सहिष्णुता के मामले में तुलना कभी नहीं करी जा सकती है. और यह बात मैं ऐसे ही नहीं कह रहा, यहां के इतिहास का हर पन्ना चिल्ला-चिल्लाकर मेरी इस बात की गवाही देता है. इस बात को समझाऊं तो, वैसे कहने

को तो भारत हमेशा से हिंदू धर्म में मानते आनेवाला देश है. लेकिन यहां हर युग में हिंदू धर्म के पाखंडों तथा उसकी गलत मान्यताओं और विचारों पर हमले करनेवाले लोग आए हैं, और उन्होंने हमले किए भी हैं; लेकिन यहां किसी के साथ ऐसा कभी कुछ नहीं हुआ जो जीसस क्राइस्ट के साथ हुआ.

हालांकि मुझे मालूम है कि आप ऐसे नहीं मानेंगे. तो चलो, मैं चन्द्र उदाहरण देता हूँ. मेरी धरती पर एक संतान पैदा हुई थी, कृष्ण. और सच कहूं तो वह मेरी सबसे प्यारी, ज्ञानी व पूर्ण संतान थी. कृष्ण बचपन से ही प्रज्ञावान था. और आप मानेंगे नहीं ओबामा कि जब उसकी उम्र बमुश्किल 12 वर्ष थी, उसने उस समय की सबसे प्रचलित परंपरा 'इन्द्रपूजा' का विरोध किया था. 'इन्द्र' उस समय वर्षा का देवता माना जाता था. मान्यता यह थी कि उसकी पूजा करेंगे तो ही वर्षा होगी. अब प्रज्ञावान कृष्ण को यह बात कहां समझ में आनेवाली थी? उनका चिंतन यह कहता था कि वर्षा, जो कुदरत की देन है, जो उसके नियमों के अधीन है; भला उसका भी कोई देवता हो सकता है? और चलो है भी तो क्या? देवता तो स्वभाव से करुणावान होते हैं. सो उसे तो हर जगह, हर वर्ष, अच्छी वर्षा देनी ही चाहिए. कोई देवता हो और ऐसा सोचे कि मेरी चापलूसी करोगे तो ही वर्षा मिलेगी, मेरी पूजा नहीं करोगे तो वर्षा भेजूंगा ही नहीं; तो फिर ऐसी सोच का व्यक्ति चाहे जो हो, देवता तो हो ही नहीं सकता है. अतः हरहाल में इन्द्रपूजा नहीं की जानी चाहिए. बस उसने उस छोटी-सी उम्र में इन्द्रपूजा के खिलाफ माहौल खड़ा किया व इन्द्रपूजा रुकवा दी. और आप जानते हैं कि युगों से चली आ रही परंपरा के खिलाफ खड़े होनेवाले "कृष्ण" के साथ मेरी संतानों ने क्या किया? उनका भरपूर साथ दिया.

इसी शृंखला में एक और उदाहरण दूं तो गौतम बुद्ध का नाम भी आपने सुना ही होगा. उन्हें आज की तारीख में भगवान की तरह पूजने वालों की तादाद कोई कम तो है नहीं. आपको न मालूम हो तो बता दूं, उन्होंने भी आज से करीब पच्चीस सौ वर्ष पूर्व मेरी धरती पर ही जन्म लिया था. खैर, यह कोई खास बात नहीं, परंतु खास बात यह कि जैसे जीसस ने उस समय की एकमात्र प्रचलित यहूदी परंपरा के पाखंडों का विरोध किया था, वैसे ही बुद्ध ने अपने समय की एकमात्र प्रचलित हिंदू परंपरा के पाखंडों का पुरजोर विरोध किया था. अब बाहर से देखने पर तो दोनों बातें एक ही लगती हैं, और काफी हद तक एक हैं भी. ...परंतु फर्क धरती की अन्य संतानों द्वारा उनके साथ किए गए व्यवहार का है. जहां अन्य धरती की संतानों ने जीसस क्राइस्ट को सूली पर लटकाया, वहीं मेरी धरती की संतानों ने अपनी मान्यता तथा पाखंडों के खिलाफ बोलनेवाले बुद्ध को भगवान का दर्जा दिया. जहां जीते-जी जीसस के साथ बमुश्किल उंगलियों पर गिने जा सके, उतने शिष्य थे, वहीं हिंदू पाखंडों के खिलाफ खड़े होने के बावजूद बुद्ध के साथ धीरे-धीरेकर आधा भारत जुड़ गया था. बुद्ध के जीते-जी लाखों लोगों ने हिंदू धर्म छोड़कर बौद्ध धर्म अपनाया था. उस समय के

बड़े-बड़े राजा-महाराजा उनके प्रभाव में आए थे. और आज भी मेरी धरती पर मेरी संतानें बुद्ध को पूजती हैं. समझ में आया मिस्टर ओबामा, यह होती है सहिष्णुता.

और यह मत समझना कि ये सारे किस्से अपवाद हैं. नहीं, यहां तो हर सदी में कई ऐसे ज्ञानी लोग पैदा होते ही रहे हैं जिन्होंने अपने समय के धार्मिक पाखंडों तथा सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ आवाज बुलंद करी थी. हां कुछ नासमझ, स्वार्थी तथा कट्टर लोगों के द्वारा उनका विरोध भी होता रहा है, उन्हें सताया भी जाता रहा है, परंतु उन्हें मारा कभी नहीं गया. विशेष बात यह कि ऐसे लोगों को सतानेवालों से उनका सम्मान करनेवालों की तादाद हमेशा से ज्यादा रही है, और वह भी उनके जीते-जी. मैं यह नहीं कह रहा कि मेरी धरती पर बुद्ध का विरोध नहीं हुआ. हुआ, और खासकर पंडितों द्वारा बहुत विरोध हुआ. कई बार जीते-जी उनका अपमान भी हुआ. अब इतना तो आप जानते ही हैं कि पंडित हों, पादरी हों या मौलवी हों; इनकी दुकानें ही पाखंडों पर टिकी होती हैं. सो जब कोई पाखंड का विरोध करता है तो इन्हें लगता है कि कोई उनकी आसरे-आश्वासनों तथा पाखंडों के मायाजाल से फैलाई हुई दुकानों पर हमला कर रहा है. कोई उनकी जमीजमाई दुकानों को हिलाने की कोशिश कर रहा है. ...और बस वे उस व्यक्ति के पीछे पड़ जाते हैं. होगा, उनकी वे जानें. वैसे भी धरती चाहे कोई भी हो, आज के महान वैज्ञानिक युग में इन पाखंडियों की पकड़ वैसे ही ढीली पड़ गई है. सो, मेरी तथा तुम्हारी चल रही इस महान व ऐतिहासिक बातचीत में इन पाखंडियों को विशेष तवज्जो देना ही क्यों?

खैर, अब इसी शृंखला में आगे जो बात मैं बताने जा रहा हूँ वह आज से करीब छः सौ वर्ष पूर्व की है. उस वक्त मेरी धरती पर एक प्यारे इन्सान कबीर ने जन्म लिया था. सच कहूं तो मैंने इतने वर्षों के इतिहास में अरबों संतानें देखी हैं, पर उस जैसा...! वह अपने तरीके का इकलौता ही था. कितना भोला व सरल. खैर, कबीर का इतिहास कहूं तो वह हिंदू था या मुसलमान, यह किसी को नहीं पता था. और-तो-और, वे स्वयं भी यह नहीं जानते थे कि वे हिंदू हैं या मुसलमान? यूं भी उन्हें यह जानने में कोई दिलचस्पी भी नहीं थी. ...क्योंकि वे सच्चे भी थे और ज्ञानी भी. और इतनी बात तो तुम जानते ही होगे कि ज्ञानी सिर्फ इन्सान होता है. इंटेलिजेन्ट को भला “धर्म-जात” का भेद कहां? होगा, अभी तो कबीर की बात आगे बढ़ाते हुए यह बता दूं कि उस समय भारत में दो ही प्रमुख मान्यताएं थी, एक हिंदू तथा दूसरी मुस्लिम. अब पाखंड और संप्रदाय का तो चोली-दामन का साथ होता है, यह आप जानते ही हैं. और कबीर चूंकि ज्ञानी थे तो स्वाभाविक रूप से वे दोनों संप्रदायों में प्रचलित धार्मिक पाखंडों के खिलाफ थे. आप मानेंगे नहीं मिस्टर ओबामा कि कबीर उस बनारस नामक शहर में रहते थे, जो उन दिनों भी कट्टर धार्मिक नगरी कही जाती थी. तथा वह आज भी अपनी धार्मिक जड़ों व मान्यताओं के कारण जानी जाती है. ऐसे धार्मिक कट्टरों के बीच में कबीर ने उनकी मान्यताओं के पाखंडों पर प्रहार करते हुए हजारों दोहे कहे. और सब-के-सब सटीक व महान. इतना ही नहीं, कई तो दोनों धर्मों तथा उनकी

गलत व पाखंडी मान्यताओं पर बड़े ही करारे हमले थे. उनमें से चन्द मैं आपको बताता हूँ, शायद सुनकर आपके भी रोंगटे खड़े हो जाएं....

- A) पत्थर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहाड़.
इससे तो चक्की भली, पीस खावे संसार..
- B) पंडित मौलवी हिजड़ा, इनसे भक्ति न होय.
भक्ति करे कोई सूरमा, जो शब्द विवेकी होय..
- C) कांकर-पाथर चूनि के, मस्जिद लिया चिनाय.
तापर मुल्ला बांग दे, क्या बहरा भया खुदाय..

अब बताएं. ऐसे दोहे और वह भी आज से करीब छः सौ वर्ष पूर्व, तथा वह भी धार्मिक कट्टरता से ग्रस्त शहर में! तो क्या मेरी संतानों ने उसे मार डाला? नहीं, आपको सुनकर आश्चर्य होगा मिस्टर ओबामा कि लोगों ने उन्हें सर-आंखों पर बिठाया. वे आज भगवान की तरह पूजे जाते हैं. यही नहीं, यदि कहूं कि वे आज के भारत की धड़कन हैं, तो भी गलत नहीं होगा. न जाने कितनी म्यूजिक कंपनी ने कितने गायकों के साथ उनके दोहों के अलबम निकाले हैं. और वे सब-के-सब हमेशा बेस्ट सेलर रहे हैं. भारत में ऐसा व्यक्ति खोजना मुश्किल है जो उनके दोहे न गुनगुनाता हो. सोचो, हिंदू तथा मुसलमान दोनों की मान्यताओं, परंपराओं तथा पाखंडों पर हमला करने के बावजूद उनके खिलाफ कभी कोई आवाज यहां नहीं उठती. ...इसे कहते हैं सहिष्णुता.

यही क्यों! एक और किस्सा सुनाता हूँ. मेरी धरती पर एक संतान पैदा हुई थी दयानंद सरस्वती. वे जब चौदह वर्ष के थे तो उनके पिता उन्हें अपने साथ शिव के मंदिर ले गए थे. हिंदुओं में मूर्ति को लड्डू चढ़ाने की पुरानी परंपरा रही है. बस उसी परंपरानुसार लोग-बाग उस समय भी मंदिर में मूर्ति को लड्डू चढ़ा रहे थे. उसी दरम्यान दयानंद ने देखा कि चूहे मूर्ति को चढ़ाये लड्डू बड़े मजे से खाये जा रहे हैं. यह देख आश्चर्यचकित दयानंद ने अपने पिताजी से एक बड़ा ही सीधा सवाल किया- यह लड्डू किसको चढ़ाये गए हैं?

पिताजी ने कहा - भगवान को.

इस पर दयानंद ने कहा- तब तो चूहे उनका हक छीन रहे हैं. अब तो वे निश्चित ही क्रोधित होकर चूहे को ठीक कर देंगे.

पिताजी ने कहा - नहीं, ऐसा कुछ नहीं होनेवाला.

दयानंद ने पूछा-क्यों? क्या उनमें शक्ति नहीं? ...पिताजी की तो एक चुप, सौ चुप. अब पिताजी भले ही चुप हो गए लेकिन दयानंद समझ गए कि बाकी पत्थरों की तरह यह भी सिवाय एक पत्थर के और कुछ नहीं. बस हाथोंहाथ दयानंद को भारत की सबसे लोकप्रिय मान्यता “मूर्ति-पूजा” की व्यर्थता समझ में आ गई. फिर क्या था, बड़े होते-होते

उन्होंने मूर्तिपूजा के विरोध में आवाज बुलंद कर दी. और फिर तो देखते-ही-देखते उन्होंने मूर्तिपूजा के खिलाफ एक आंदोलन भी छेड़ दिया. कहते हैं कि उन्होंने अपने ही हाथों अनेक मूर्तियों को नुकसान भी पहुंचाया. जानते हो, मेरी संतानों ने उनके साथ क्या किया? उन्हें सर आंखों पर बिठाया. उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज भारत के गांव-गांव में फैल गए और वे आज भी भारत के हर शहर की शोभा बढ़ा रहे हैं. यहां तक कि भारत में शादी रीति-रिवाज से की गई हो या कोर्ट में रजिस्टर करी गई हो, तब तो मान्य है ही; परंतु वैसे ही यदि कोई शादी आर्यसमाज में करी गई हो तो भी उसे वैधानिक विवाह का दर्जा दिया जाता है. यह सम्मान मेरी संतानों ने उस व्यक्ति द्वारा स्थापित आर्यसमाज को दिया है, जिन्होंने उनकी सर्वाधिक मान्य परंपरा की व्यर्थता को उजागर किया. ...तो उम्मीद करता हूँ कि मेरी संतानों की सहिष्णुता का इतिहास तुम्हारी समझ में आ गया होगा. तुम्हारी समझ में यह आ ही गया होगा कि मेरी धरती कितनी सहिष्णु है.

खैर, अब एक नजर पश्चिमी असहिष्णुता पर घुमा लेते हैं. आप जानते ही होंगे कि ऐथेंस की धरती पर सोक्रेटिज नामक एक व्यक्ति पैदा हुआ था. साथ ही आप यह भी जानते ही होंगे कि उसे जहर चाटने की सजा देकर मार दिया गया था. बताइए भला क्यों? इसके लिए पश्चिमी संस्कृति की धार्मिक कट्टरता और असहिष्णुता के सिवाय और किसे जिम्मेदार ठहराया जा सकता है? क्योंकि सोक्रेटिज जैसी संतान, एक ऐसा ज्ञानी कि जिस पर कोई भी धरती नाज करे; उसे मार डाला गया! अब वे लोगों को सच्ची राह ही तो दिखा रहे थे. और तुम जानते ही हो कि लोगों को सच्ची राह दिखाने हेतु गलत मान्यताओं पर प्रहार तो करना ही पड़ता है. ...बस वही तो वे कर रहे थे, तथा वह भी ठीक तरीके से. कबीर या दयानंद की तरह उन्होंने कोई करारी भाषा या कड़े व्यवहार का उपयोग तो किया नहीं था. उन्होंने न तो कबीर जैसे कटु-सत्य दर्शाने वाले दोहे ही कहे थे, और ना तो वहां के देवस्थानों को ही हानि पहुंचाई थी. उन्होंने तो बस चन्द गलत मान्यताओं का विरोध किया था. फिर भी उन्हें जहर चाटने की सजा देकर मार डाला गया. और शायद आपने न पढ़ा हो तो वह पूरा किस्सा मैं आपको बताता हूँ. शायद इससे आपको किस प्रकार के व्यक्ति के साथ क्या किया गया था, यह समझ में आ जाएगा.

सोक्रेटीज को बात-बे-बात लोगों से चर्चा करने और उन्हें समझाने का बड़ा शौक था. वे ज्ञानी भी थे, और बात भी पक्की करते थे. तथा चूंकि उनकी बातों में सच्चाई होती थी, अतः स्वाभाविक तौर पर वे प्रचलित गलत मान्यताओं के खिलाफ भी जाती थी. बस इससे धीरे-धीरेकर धर्माचारी और शासक, दोनों उनसे भड़क गए. उन्हें ऐसी बातें न करने हेतु काफी समझाया भी गया, परंतु वे अपनी आदतों से बाज नहीं आए. आखिर कोई चारा न देख उन्हें गिरफ्तार कर अदालत में पेश कर दिया गया. अब सोक्रेटिज जैसे मुंहफट को कटघरे में खड़ा हुआ कौन नहीं देखना चाहता? सो स्वाभाविक तौर पर अदालत में काफी भीड़ एकत्रित हो गई. उधर अदालती कार्रवाई के प्रारंभ में शासक पक्ष की ओर से उनपर

लगे सारे आरोप पढ़े गए. आरोप स्पष्ट थे कि सोक्रेटिज प्रचलित परंपरा के खिलाफ लोगों को भड़काते हैं, और वह भी जबरदस्ती पकड़-पकड़कर. यह सुनते ही जज का पारा चढ़ गया, क्योंकि वह स्वयं प्रचलित परंपरा के कट्टर अनुयायी थे. इसके अलावा वे सोक्रेटिज की हरकतों से काफी-कुछ वाकिफ भी थे. इस कारण उन्हें सोक्रेटिज से कुछ नाराजी पहले से ही थी. अतः आरोप सुनाने की ही देर थी कि वे भड़क गए. और भड़कते ही बड़ी कड़क आवाज में उन्होंने सोक्रेटिज से पूछा- क्या तुम अपने पर लगाए तमाम आरोप स्वीकारते हो?

सोक्रेटिज ने हंसते हुए कहा- जी हुजूर.

जज ने कहा- ठीक है! अब तक जो हुआ सो हुआ. तुम्हारी उन सब गलतियों को नजरअंदाज किया भी जा सकता है यदि तुम यह आश्वासन दो कि आज के बाद अपनी हरकतों से बाज आ जाओगे.

सोक्रेटिज कहां बदलने वाले थे? उनका तो मकसद ही अंधकार से लोगों को छुटकारा दिलवाना था. सो उन्होंने बड़ी विनम्रतापूर्वक जज से कहा- हुजूर, मुझे नहीं लगता कि मैं बदल पाऊंगा!

जज ने कहा- सोच लो, यदि तुमने आश्वासन नहीं दिया तो मैं तुम्हें जहर चाटने का हुक्म दे दूंगा.

सोक्रेटिज ने कहा- इसमें सोचना क्या है? मैं नहीं बदलने वाला यह तय है. वहीं आप भी अपने विवेक से निर्णय लेने को स्वतंत्र ही हैं.

...बस क्रोधित जज ने उन्हें जहर चाटने की सजा सुना दी. सजा सुनाते ही सोक्रेटिज को पकड़कर हवालात में बंद कर दिया गया. उनके कुछ शिष्यों और शुभेच्छुओं को छोड़ दिया जाए तो चारों ओर उत्साह का माहौल हो गया. दूसरी ओर सोक्रेटिज के शिष्य बड़े दुःखी और चिंतित थे. वे अपना दुःख जाहिर करने या कहें कि अपना गम कम करने अपने गुरु सोक्रेटिज से मिलने नियमित रूप से जाया करते थे. और वे यह देख आश्चर्यचकित रह जाते थे कि सोक्रेटिज के चेहरे पर सजा का कोई असर नहीं था. उल्टा वे सबको आश्वासन देते हुए कहते थे- पगलों, क्यों दुःखी होते हो? जहर देना उनके हाथ में है, परंतु मरना-नहीं-मरना तो मेरे हाथ में है. चिंता मत करो, उनके जहर देने के बावजूद मैं मरने वाला नहीं.

खैर, सोक्रेटिज की इस बात से शिष्य आश्चस्त तो नहीं हो रहे थे; परंतु सोक्रेटिज से इससे ज्यादा बहस करना भी बेकार था. और फिर जहर चाटने की सजा दिए जाने के बावजूद सोक्रेटिज के चेहरे की शांति उन्हें अन्यथा भी सोचने पर मजबूर तो कर ही रही थी. ...बस इसी असमंजस व चिंताओं के बीच उनके शिष्यों का समय कट रहा था. ...और इधर देखते-ही-देखते सोक्रेटिज के जहर चाटने का दिन भी आ गया. निश्चित ही उनके काफी शिष्य इस अंतिम घड़ी में उनके आसपास एकत्रित हो गए. कई रो भी रहे थे. लेकिन इन

सबके विपरीत सोक्रेटिज तो ना सिर्फ उत्साह से भरे थे, बल्कि जहर चाटने हेतु उतावले भी हो रहे थे. उन्हें पूरा विश्वास था कि जहर उन्हें नहीं मार सकता है. इधर जहर घोलने वाला भी ऐसे वक्त सोक्रेटिज पर छापी मस्ती देखकर दंग रह गया था. यही नहीं, उसे ऐसे मस्त व्यक्ति को जहर चाटने की सजा दिए जाने का दुःख भी पकड़ लिया था. अब वह इसमें ज्यादा तो कुछ नहीं कर सकता था, परंतु जहर बड़े आराम से घोलने लग गया था. इरादा साफ था कि सोक्रेटिज जितना और जी लें. इधर सोक्रेटिज भी कम न थे. वे जहर घोलनेवाले के इरादे और भावना दोनों ताड़ गए थे. वे जहर पीने को उतावले तो इतने थे कि उनसे एक क्षण की देरी बर्दाश्त नहीं हो रही थी. उन्होंने जहर घोलने वाले से कहा भी कि...तू क्यों समय बिगाड़ रहा है? क्यों दुःखी हो रहा है? तू तो मुझे जहर चटा नहीं रहा, मुझे जहर तो परंपराओं के पिछल्लू दे रहे हैं. तू तो अपना कर्तव्य निभा रहा है. अतः तू अपना कर्म ईमानदारी से कर और जल्दी जहर घोलकर मुझे चटा दे.

आखिर जहर घुल भी गया और जहर घोलने वाले ने बड़े दुःखी मन से सोक्रेटिज को जहर चटा भी दिया. जहर बड़ा ही स्ट्रॉंग था, और उसने वाकई तेजी से असर दिखाना शुरू भी कर दिया. जैसे ही जहर उनके पांव पर चढ़ा कि उसने पांव सुन्न कर दिए. पर सोक्रेटिज को इससे कहां फर्क पड़ना था? उन्होंने तो इसपर भी अपने निराले अंदाज में कहा- मेरे पांव सुन्न हो गए हैं, परंतु मैं पूरा-का-पूरा जीवित हूँ. उधर जहर अबतक हाथ व पेट में भी फैल चुका था. यह देख सोक्रेटिज बोले कि जहर सत्तर प्रतिशत शरीर खराब कर चुका है, पर मैं पूरा-का-पूरा जीवित हूँ. आखिर जहर उनके दिलो-दिमाग पर चढ़ गया. वे पूरी तरह सुन्न हो गए. और उनके अंतिम शब्द थे- सुनो दुनियावालों, जहर करीब-करीब मेरा सौ प्रतिशत शरीर खत्म कर चुका है...परंतु मैं पूरी तरह वैसा-का-वैसा हूँ. यानी मृत्यु से बड़ा कोई असत्य नहीं है. ...बस इन शब्दों के साथ ही उन्होंने प्राण त्यागे.

...अब बताओ मिस्टर ओबामा, क्या हंसते हुए इस तरह जहर चाटनेवाला और अपनी जान देकर दुनिया को मृत्यु का सत्य बतानेवाला, गलत हो सकता है? फिर भी उसे क्या दिया, मौत की सजा! यह...असहिष्णुता है. और यह मत कह देना कि यह सब पुरानी बातें हैं. मैं अभी के चन्द उदाहरण देता हूँ. वैज्ञानिक या आर्थिक प्रगति कर लेने से सहिष्णुता जैसा महान मानवीय गुण नहीं आ जाता है. खासकर धार्मिक असहिष्णुता का तो आज भी पश्चिमी देशों में साम्राज्य है. इसका एक बड़ा ही सीधा उदाहरण देता हूँ. आपको मालूम होगा कि 31 जनवरी 2013 को अमेरिका के एक मशहूर सरकारी वकील पेट्रीक फिट्ज्जैराल्ड ने सोक्रेटिज पर एक नकली मुकदमा फिर चलाया. सिर्फ यह जानने, समझने व समझाने के लिए कि सोक्रेटिज को मौत की सजा देना, गलत था या सही? और आश्चर्यजनक रूप से इस नकली प्रक्रिया में सोक्रेटिज को फिर एक बार दोषी ठहराया गया. प्रक्रिया में दो वकीलों पेट्रीक फिट्ज्जैराल्ड तथा पेट्रीक कोलिन्स ने सरकारी वकील के तौर पर सोक्रेटिज के खिलाफ केस की पैरवी की. सोक्रेटिज का डिफेन्स डेन वेब तथा रॉबर्ट

क्लीफोर्ड ने किया. इस केस में तीन जजों की बेंच थी, जिनके नाम थे... रिचार्ड पोसनर, विलियम बऊर तथा एना डेमाकोपोलस. और जजों का फैसला 2-1 से सोक्रेटिज के खिलाफ गया. चौदह अन्य प्रतिष्ठित न्यायविदों को भी आमंत्रित किया गया था. उनका फैसला भी 7-7 की बराबरी पर रहा. और मजा तो यह कि इसके बाद वहां उपस्थित 840 अन्य लोगों की राय भी ली गई. उनकी राय जानने हेतु उन सभी को सफेद और नीले रंग के चिप दिए गए. सफेद का अर्थ था निर्दोष, जबकि नीले का अर्थ था कि सोक्रेटिज दोषी है. जब एक बैग में इन चिपों को जमा करने के बाद उन बैगों का वजन किया गया तो नीले बैग का वजन ज्यादा निकला. यानी हर स्तर पर राय सोक्रेटिज के खिलाफ रही. खैर, सरकारी वकीलों ने सोक्रेटिज को दोषी ठहराने हेतु जो चन्द दलीलें रखी थीं, वे भी कम दिलचस्प नहीं थी. उनमें से चन्द दलीलों की चर्चा करूं तो वे कुछ इस प्रकार थीं:

- (1) सरकारी वकीलों का कहना था कि सोक्रेटिज चाहे जो हो जाए, समझौता करने को तैयार नहीं थे. अब इस सरकारी वकील को कौन समझाए कि समझौता वह करे, जिसे असत्य में जीना हो. समझौता वह करे जो मौत से डरता हो. भला क्राइस्ट और सोक्रेटिज समझौता करेंगे? और फिर सत्य की राह पर चलनेवाला समझौता करे भी तो क्यों?
- (2) मुकदमें में आगे करी गई दलीलों के आधार पर सोक्रेटिज को एथेंस की युवा पीढ़ी को भड़काने के आरोप में भी दोषी पाया गया.
- (3) ...यही क्यों, तमाम दलीलों के अंत में सोक्रेटिज पर यह आरोप भी सिद्ध हो गया कि उन्होंने ग्रीस के भगवानों का मजाक उड़ाया था. यानी एक नहीं, सभी अपराधों में उन्हें इस मुकदमे में एकबार फिर दोषी पाया गया. और वह भी सबके द्वारा, तथा सब स्तर पे.

खैर, अभी तो मुकदमे की चर्चा आगे बढ़ाऊं तो इस नकली अदालत में चल रही दलीलों के दौरान एथेंस के समर्थन में बोलनेवाले एक वकील ने सोक्रेटिज की मृत्यु को जायज ठहराते हुए एक बड़ी ही दिलचस्प दलील दी. उस वकील ने कहा कि “सोक्रेटिज ने ईश्वर का अपमान करते हुए चंद्रमा को कचरा कहा था. और ईश्वर से उलझने वालों का तो यही अंजाम होना चाहिए. यूं भी भला ईश्वर किसी भी बात को भूलते थोड़े ही हैं, ईश्वर तो हर बात का बदला लेते हैं.” और यह सारी बातें किसी सामान्य बुद्धि के व्यक्ति या धर्म के पिछल्लू पादरियों ने नहीं, बल्कि आपके यहां के विचारशील समझे जानेवाले एक वकील ने की थी. अब बताओ, आपकी धरती ने ईश्वर की ऐसी तो कैसी कल्पना करी है कि वह बदला लेता है? अब उन्हें कौन समझाए कि इन्सान तक तो ठीक, पर क्या भगवान भी इतना असहिष्णु हो सकता है? जरा सोचो, थोड़ा चिंतन करो. अपने व समान मान्यता के

देशवासियों को सहिष्णुता के असली सबक सिखाओ. यूं भी एक राष्ट्राध्यक्ष होने के नाते यह तुम्हारी पहली जिम्मेदारी थी. अतः बेहतर तो यही है कि आपने जो नसीहत मेरी धरतीवालों को दी है, वह अपने तथा अपने आसपास के लोगों को दें. उन्हें सहिष्णुता की नसीहत की ज्यादा आवश्यकता है. ...खासकर धार्मिक सहिष्णुता की. जरा सोचो मिस्टर ओबामा कि चौबीस सौ वर्षों में दुनिया कितनी बदल चुकी है. बैलगाड़ी व घोड़ेगाड़ी से उठकर मनुष्य हवाईजहाज व रॉकेट के भरोसे चांद-तारों पर पहुंच गया है. हालांकि निश्चित ही इस सारे विकास में आपकी व आपके आसपास की धरती का विशेष योगदान है. परंतु बात अभी सहिष्णुता की चल रही है. और मुझे दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि धार्मिक सहिष्णुता के मामले में आपकी व आपके आसपास की धरती ने चौबीस सौ वर्ष बीत जाने के बाद भी कोई प्रगति नहीं की.

चलो एक और किस्सा सुनाता हूँ, जिससे शायद बात पूरी तरह से आपकी समझ में आ जाए. यह इतिहास का किस्सा है व ऐतिहासिक भी. महान गैलिलियो का नाम भी आपने सुना ही होगा. उन्होंने क्या किया? सोलहवीं सदी में एक महान खोज करी तथा उसकी उद्घोषणा की. अब गैलिलियो ने तो जो जाना वही कहा था कि पृथ्वी... सूर्य के चक्कर लगा रही है. परंतु उन्हें क्या मालूम था कि इस सत्य की उद्घोषणा से उनकी जान पर बन आएगी. और जानते हैं, महान सत्य कहने के बावजूद उनकी जान पर क्यों बन आयी थी? क्योंकि बाइबल में लिखा है कि सूर्य 'पृथ्वी' के चक्कर लगा रहा है (ओल्ड टेस्टामेंट, इक्लिज़ियास्टिस, अध्याय-1, गॉस्पेल-5). अब वहां के लोगों की मान्यता में बाइबल तो गलत हो ही नहीं सकती. और गैलिलियो का कहना सीधे तौरपर बाइबल के खिलाफ था. सच तो यह है कि गैलिलियो के उजागर किए गए सत्य से बाइबल के पचास से ज्यादा गॉस्पेल असत्य साबित हो जाते थे. बस पादरियों को यह बर्दाश्त नहीं हुआ और उन्होंने हंगामा खड़ा कर दिया. सबसे पहले तो इन पादरियों ने वहां के शासक पर दबाव डालकर उनकी लोकप्रिय हो रही किताब 'डायलॉग्स' पर प्रतिबंध लगवा दिया. लेकिन जब बावजूद इसके आम जनता में गैलिलियो को लेकर उत्सुकता बनी रही, तो अंत में कोई उपाय न देख उन्हें अदालत तक घसीट कर ले जाया गया. मामला साफ था कि उनकी बात बाइबल के खिलाफ थी, और जो किसी कीमत पर बर्दाश्त नहीं करी जा सकती थी. उधर जज स्वयं बड़ा धार्मिक और कट्टर ही नहीं, बल्कि बाइबल का बड़ा फॉलोवर भी था. और इधर पादरी भी अड़े ही हुए थे. सबकी एक ही मांग थी कि गैलिलियो अपने शब्द वापस ले और माफी मांगे. वहां अदालत के भीतर-बाहर भीड़-ही-भीड़ एकत्रित हो गई थी. और भीड़ हमेशा से असहिष्णु रही है. सो कहने की जरूरत नहीं कि उनमें से भी अधिकांश लोग गैलिलियो के विरुद्ध नारेबाजी पर उतारू थे.

खैर, इसी चल रही चिल्लाचपड़ व पादरियों की मांग के बीच अदालत की कार्रवाई प्रारंभ हुई. कार्रवाई के प्रारंभ में ही जज ने बड़ी कड़क भाषा में गैलिलियो से कहा- तुम

अपने शब्द वापस लो तथा सबसे माफी मांगो, वरना तुम्हें मौत की सजा दे दी जाएगी. जज की यह बात सुनते ही गैलिलियो ने चारों ओर निगाह दौड़ायी. गैलिलियो को समझते देर नहीं लगी कि पादरियों व कट्टरवादियों से भरी अदालत में माहौल वाकई क्रूरता की सारी सीमाएं लांघने को बेताब है. गैलिलियो को यह भांपते भी देर नहीं लगी कि यदि उसने जज की बात मानते हुए माफी न मांगी, तो सचमुच मौत की सजा सुना दी जाएगी. गैलिलियो समझदार था, वह सोक्रेटिज व क्राइस्ट के हथ से वाकिफ भी था. उसने तुरंत दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा- हुजूर! मैं अपने कहे की माफी मांगता हूँ. मैं अपनी वह बात वापस लेता हूँ जिसमें मैंने कहा था कि पृथ्वी... 'सूर्य' के चक्कर लगा रही है. मैं मानता हूँ कि बाइबल में ठीक लिखा है, सूर्य ही 'पृथ्वी' के चक्कर लगा रहा है. यह सुनते ही चारों ओर खुशी की लहर दौड़ गई. अदालत का पूरा प्रांगण बाइबल की जयकार से गुंज उठा. उधर अपने शब्द वापस लेते ही गैलिलियो को छोड़ दिया गया. लेकिन गैलिलियो भी ...गैलिलियो था. उसने बाहर निकलते ही भीड़ से कहा- मैंने अपनी बात वापस अवश्य ली है, लेकिन मेरे बात वापस लेने से सूर्य चक्कर लगाना चालू नहीं कर देगा. सत्य तो यही है कि चक्कर पृथ्वी ही लगा रही है.

खैर, यह तो गैलिलियो समझदार था जो वक्त की नजाकत को भांप गया था. वरना शायद उसे भी मौत की सजा दे ही दी गई होती. सो, सौ बातों की एक बात यह कि आपके व आपके आसपास की धरती पर धार्मिक सहिष्णुता के किस्से काफी कम ही मिलते हैं. हां, सहिष्णुता की सूची में मुझे एक किस्सा अवश्य याद आ रहा है; जो ब्रिटेन के महान नागरिक स्टीफन हॉकिंग का है. यह किस्सा उस समय का है जब उन्होंने एक कॉन्फ्रेंस को संबोधित करते वक्त गैलिलियो के साथ हुई ज्यादाती का मुद्दा उठाया था. ...और इसी के चलते पोप जॉन पॉल द्वितीय ने ये कबूल किया कि चर्च ने गैलिलियो पर ज्यादाती करके बड़ी भूल की थी. लेकिन यहां यह भी स्पष्ट कर दूं कि यह किस्सा सिर्फ स्टीफन हॉकिंग की सहिष्णुता को दर्शाता है. बाकी सायकोलोजिकली ध्यान से समझा जाए तो प्रमुख सवाल यह कि स्टीफन हॉकिंग को यह बात फिर उठाने की आवश्यकता ही क्यों पड़ी? सिर्फ इसलिए कि इस वैज्ञानिक युग में भी आपकी धरती पर ऐसे धार्मिक कट्टर लोगों की कोई कमी नहीं है जो आज भी गैलिलियो से नाराज हैं. सो, कुल-मिलाकर स्टीफन हॉकिंग का आज की तारीख में गैलिलियो की बात छेड़ना सिवाय वहां की 'असहिष्णु-मानसिकता' के और कुछ नहीं दर्शाता है. वरना एक ऐसा "महान वैज्ञानिक सत्य" जो सिद्ध भी हो चुका हो, क्या उसके साथ ही गैलिलियो की महानता तथा बाइबल की आधारहीनता सिद्ध नहीं हो जाती है? लेकिन ऐसा नहीं हुआ तभी तो स्टीफन हॉकिंग को गैलिलियो का मुद्दा उठाना पड़ा. और असहिष्णुता की हद तो यह कि पोप जॉन पॉल द्वितीय ने पादरियों द्वारा गैलिलियो के साथ किए गए गलत व्यवहार की तो माफी मांगी, परंतु बाइबल की त्रुटि नहीं स्वीकारी तो नहीं ही स्वीकारी. यह भी तो असहिष्णुता हुई.... मिस्टर ओबामा, मुझे लगता

है कि अब आप समझ गए होंगे कि सहिष्णु कौन है तथा किन्हें धार्मिक सहिष्णुता के उपदेश की जरूरत ज्यादा है.

हां, एक बात और! तुम्हें या तुम्हारे देशवासियों या अन्य पश्चिमी देशों की संतानों को मेरी बात का बुरा मानने की आवश्यकता नहीं है. मेरी किसी भी बात को व्यक्तिगत तौर पर लेना, एक महान अवसर गंवाना होगा. क्योंकि देश चाहे कोई भी क्यों न हो, आखिर में तो मेरे समेत सारे देश महान पृथ्वी की ही संतानें हैं. और फिर संतानें चाहे जिस धरती की हो, सब खुशी से जीए व प्रगति करे...यही हर धरती की चाह होती है. सो मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ; वह करुणावश सबकी खुशी तथा प्रगति के लिए ही कह रहा हूँ. और फिर अभी तो मैंने अपनी बात शुरू करी है, कोई खत्म थोड़े ही करी है. अतः मुझे यकीन है कि मेरी करुणा से भरी सारी समझाइशें पूरे विश्व के काम आएंगी, और पूरा विश्व तहेदिल से मेरे हर शब्द का सम्मान करेगा.

मिस्टर ओबामा, अब तक मैंने अपनी धरती की धार्मिक सहिष्णुता की चर्चा की. निश्चित ही इससे आपको काफी कुछ अंदाजा आ ही गया होगा कि आपके द्वारा भारत के वासियों को धार्मिक सहिष्णुता की शिक्षा देना, कोई बहुत शोभनीय बात नहीं थी. और शायद यह चूक इसलिए हो गई क्योंकि आपको भारतीयों की धार्मिक सहिष्णुता के बारे में ठीक से जानकारी नहीं थी. खैर, वह बात छोड़ो. लेकिन चूंकि बात निकली ही है, तो मैं

अपनी धरती तथा उसकी सहिष्णुता का लंबा इतिहास अवश्य बताना चाहूंगा. क्योंकि मेरी यानी भारत की यह धरती सिर्फ धार्मिक सहिष्णुता में ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक सहिष्णुता में भी विश्व में सबसे अक्वल है. और यह निश्चित ही मेरे लिए गर्व की बात है. सच कहूँ तो मेरी धरती की 'सांस्कृतिक सहिष्णुता' तो सलामी के योग्य है. ...मैं तो कहता हूँ कि यदि आज का विश्व भारत की सांस्कृतिक सहिष्णुता को समझ ले और उसको अपना ले तो शायद विश्व पर छाए नफरत के बादल पूरी तरह छंट जाएं. क्योंकि आज के विश्व की सबसे बड़ी समस्या ही मनुष्यों की आपसी दूरियां तथा उनके बीच बढ़ रहा आपसी अविश्वास है. और जबतक मनुष्यों में आपसी भाईचारा तथा विश्वास नहीं, वह चैन से जी ही कैसे सकता है? आठ-दस व्यक्तियों के एक छोटे-से परिवार में यदि आपसी विश्वास तथा भाईचारा न हो तो उस परिवार के सुख-चैन नहीं उड़ जाते हैं? क्या ऐसे वातावरण में जीना बोझ नहीं हो जाता है? ...बिल्कुल हो जाता है. तो फिर यह विश्व भी तो एक परिवार ही है. और अब तो पुरानी बात भी नहीं कि जहां मनुष्य अपने ही विस्तार में सिमट कर रहता था. अब तो विज्ञान की मेहरबानी तथा कम्युनिकेशन और ट्रान्सपोर्टेशन के विस्तार के बाद पूरा विश्व यूँ ही एक शहर-सा हो गया है. किसी एक देश में पत्ता हिले तो क्षणभर में विश्व के सभी देशों तक वह खबर पहुंच जाती है. वहीं एक देश से दूसरे देश जाना भी अब एक दिन से ज्यादा की बात नहीं रह गई है. ऐसे में पूरे विश्व का आपसी भाईचारा और विश्वास और भी जरूरी हो जाता है. और यह आपसी भाईचारा भारत की "सांस्कृतिक सहिष्णुता" से बेहतर और कोई नहीं सिखा सकता है.

सो मैं अब सीधे मेरी धरती की सांस्कृतिक सहिष्णुता पर आता हूँ. शायद आपको मालूम न हो तो मैं बता दूँ कि भारत में कुल 29 राज्य और 7 केन्द्र शासित प्रदेश हैं. और सबसे बड़ी बात यह कि यहां हर राज्य की अपनी एक सांस्कृतिक विरासत है जो अन्य राज्यों से काफी भिन्न है. कहने को तो हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है, परंतु यह भी भारत के सभी प्रांतों की मुख्य भाषा नहीं है. यही नहीं, कई राज्य...वे भी बड़े-बड़े राज्य ऐसे हैं जहां हिंदी न के बराबर बोली जाती है. खासकर दक्षिण के किसी भी प्रदेश में एक कर्नाटक को छोड़कर हिंदी कहीं नहीं बोली जाती है. वहां के अधिकांश लोग हिंदी समझते भी नहीं हैं. भारत में चन्द राज्य ही ऐसे हैं, जहां हिंदी प्रमुखता से बोली और समझी जाती है. और इसमें भी सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि इन सभी हिन्दी-भाषी प्रांतों की भी अपनी ही एक निराली हिंदी है. अर्थात् उन राज्यों में बोली जानेवाली हिंदी भी आपस में मेल नहीं खाती है. अलग-अलग प्रांतों में बोली जानेवाली हिंदी के ना तो उच्चारण मिलते हैं और ना उनके बोलने के लहजे ही आपस में मिलते हैं.

निश्चित ही आप कहेंगे कि यह सब बातें आप मुझे क्यों बता रहे हैं? ...तो मैं कोई बात ऐसे थोड़े ही कहूंगा. सहिष्णुता समझने तथा उसे अपनाने के लिए मेरी धरती की हर बात समझना जरूरी है. यह अपने तरीके की एक ही धरती है जो अपने में अनेक

विविधताएं समाए हुए हैं। खैर यह तो ठीक, परंतु प्रमुख बात यह कि बावजूद इसके, यहां आपसी भाईचारे तथा विश्वास की कहीं कोई कमी नहीं है। और ये सारी बातें मैं जैसे-जैसे विस्तार से समझाता चला जाऊंगा, तुम्हारी समझ में आता चला जाएगा कि ये सारी बातें मैं तुमसे क्यों कह रहा हूँ। ...और मैं फिर कहता हूँ कि तुम तो एक बहाना हो, दरअसल तो तुम्हारे जरिए मैं पूरे विश्व को सहिष्णुता क्या होती है...यह समझाना चाहता हूँ। क्योंकि मेरी चिंता “विश्व” को लेकर है। ...यदि विश्व ने बढ़ती असहिष्णुता को नियंत्रित नहीं किया तो पृथ्वी को नरक होते देर नहीं लगेगी।

सो, मैं एकबार फिर अपनी धरती तथा उसके निवासियों की सांस्कृतिक सहिष्णुता पर लौट आता हूँ। जैसा मैंने बताया कि कुल 36 भागों में विभाजित मेरी धरती है, तथा इन सभी भागों की अपनी एक अलग सांस्कृतिक धरोहर है। और इनकी इस संयुक्तता से मैं यानी “भारत देश” बना है। ...तथा यही इस धरती की विशेषता है। ना सिर्फ इन राज्यों की भाषाएं, बल्कि यहां के रहन-सहन भी सर्वथा भिन्न हैं। यही क्यों? पहनावे से लेकर भोजन तक भी सबके अपने हैं। और-तो-और, उत्सव तथा उत्सव मनाने की रीत भी सबकी अपनी है। यही नहीं, सबकी अपनी नृत्य शैलियां हैं। और आप आश्चर्य करेंगे कि संगीत की भी सबकी अपनी एक अलग ही ऐतिहासिक विरासत है।

यदि मैं इन विभिन्नताओं को थोड़ा विस्तार से कहूं तो शायद जो मैं समझाना चाह रहा हूँ वह तुम्हारे लिए समझना आसान हो जाए। तो शुरुआत मैं भोजन से ही करता हूँ। मोटा-मोटी तौरपर यदि मैं कहूं तो भारत में 50 से ज्यादा तरीके के भिन्न-भिन्न भोजन पकाए व खाए जाते हैं। और यह सब एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। इन पचासों तरीके के व्यंजनों को खाकर आप यह सोच ही नहीं सकते कि यह एक ही देश के भिन्न-भिन्न भोजन हैं। जबकि सामने विश्व के अधिकांश देशों में एक ही तरीके का भोजन खाया जाता है। यही नहीं, अक्सर तो उसके आस-पास के अन्य देशों में भी उससे मिलता-जुलता भोजन ही खाया जाता है। और यह बात मैं इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि विभिन्नताओं का सीधा ताल्लुक सहिष्णुता से है। यह सिद्धांत है कि जहां ...जितनी ज्यादा असहिष्णुता, वहां उतनी कम विविधता। और भारत की विविधता ही भारतीय सहिष्णुता की सबसे बड़ी गवाह है। यहां यह और बता दूं कि भारत के हर छोटे-मोटे शहर में भी आपको देश के तमाम प्रकार के व्यंजनों के एक नहीं अनेक रेस्टोरेन्ट मिल जाएंगे। यहां यह भी स्पष्ट कर दूं कि किसी भी राज्य के ऐसे कोई व्यंजन नहीं जो पूरे देश में चाव से नहीं खाए जाते हों। भारत में कितने तरीके की दाल, कितने तरीकों के अचार व चटनियां खाई जाती हैं और कितने प्रकार की रोटियां खाई जाती हैं, इसका तो हिसाब लगाना ही असंभव है। कुल-मिलाकर कहूं तो जितने प्रकार के व्यंजन भारत में पकाए और खाए जाते हैं उनकी संख्या पूरे विश्व में उपलब्ध तमाम प्रकार के व्यंजनों से कई गुना ज्यादा है। सो मुझे उम्मीद है कि पूरे विश्व को भारतीय संस्कृति की विविधता तथा उसकी गहराई समझ में आ गई होगी। निश्चित ही इससे

सबकी समझ में आ गया होगा कि भारत की “सांस्कृतिक सहिष्णुता” की विरासत कितनी महान है.

वैसे तो यही क्यों, सबसे दिलचस्प बात तो यह है कि इतने प्रकार के भारतीय व्यंजन उपलब्ध होने के बावजूद विश्व के सभी प्रमुख भोजन भी भारत के हर छोटे-बड़े शहरों में उतने ही मशहूर हैं, जितने कि यहां के स्थानीय व्यंजन. कहने का तात्पर्य यह कि वे सब भी यहां उतने ही चाव से खाए जाते हैं, जितने चाव से यहां पर स्थानीय व्यंजन खाए जाते हैं. खासकर चाइनिज, मेक्सिकन, इटालियन, थाई, लेबनीस तथा कॉन्टिनेन्टल व्यंजन तो यहां हरकोई खाता है. और ये तमाम अंतर्राष्ट्रीय व्यंजन भारत में कहीं से भी भारतीय व्यंजनों से कम लोकप्रिय नहीं है. इन सभी अंतर्राष्ट्रीय व्यंजनों के भारत में हजारों बड़े व शानदार रेस्टोरेन्ट मिल जाएंगे. अतः दुनियावालों, मैं पूछना इतना ही चाहता हूँ कि मेरे अलावा दूसरी ऐसी कोई एक धरती बताओ जहां ना सिर्फ हजारों तरीके के व्यंजन बनाए जाते हों, बल्कि तमाम मशहूर अंतर्राष्ट्रीय व्यंजन भी वहां के आम लोगों द्वारा उतने ही चाव से खाए भी जाते हों? इसे कहते हैं सहिष्णुता. समझे...? तभी तो मैं कह रहा हूँ कि कोई मेरी धरती पर आकर मेरे निवासियों को सहिष्णुता का बोध दे जाए तो बात पूरी तरह से बेतुकी ही नहीं, हास्यास्पद भी हो जाती है.

खैर, यहां यह भी बता दूं कि भारत की यह सांस्कृतिक विविधता तथा सहिष्णुता ‘भोजन’ तक ही सीमित नहीं है. भारतीय सांस्कृतिक धरोहर भी हर क्षेत्र में विविधताओं से भरी है, तथा हर क्षेत्र में उतनी ही सहिष्णु है. संक्षेप में समझाने का प्रयास करूं तो यहां के हर प्रांत का अपना ना सिर्फ एक अलग संगीत है, बल्कि यहां के हर प्रांत के अपने भिन्न-भिन्न नृत्य भी हैं. लेकिन बावजूद इसके, तमाम अंतर्राष्ट्रीय मशहूर संगीत व नृत्य भी भारत में लोकप्रिय हैं. यही क्यों, यहां के हर प्रांत की अपनी एक वेश-भूषा है. आप मानेंगे नहीं कि यहां के हर प्रांत के पहनावों में इतनी विविधता है कि कौन किस प्रांत का है, यह पहनावे-मात्र से ही पता लगाया जा सकता है. मैं दावे से कहता हूँ कि जितने तरीके के पहनावे भारत में पहने जाते हैं, पूरे विश्व में मिलाकर उतने तरीके के पहनावे नहीं पहने जाते हैं. ...इसे कहते हैं सांस्कृतिक धरोहर. और सहिष्णुता की ऊंचाई तो यह कि पोशाकों की इतनी विविधता उपलब्ध होने के बावजूद भी आज की तारीख में भारत की सबसे लोकप्रिय पोशाकें पश्चिमी ही हैं. अर्थात् कोट, पैन्ट, शर्ट, गाऊन, नाइट सूट, शॉर्ट, स्कर्ट वगैरह.

और फिर भारतीय सहिष्णुता की बात ही क्या करना? इसकी तो जितनी चर्चा करी जाए कम है. सभी जानते हैं कि भारत का प्रमुख धर्म...हिंदू है. 2011 की जनगणना को आधार माना जाए तो कुल जनसंख्या के करीब अस्सी प्रतिशत लोग यहां हिंदू धर्म का पालन करते हैं. भारत का सबसे बड़ा संवैधानिक पद राष्ट्रपति है. और पूरे विश्व को आश्चर्य होगा कि देश को आजाद हुए अभी सत्तर वर्ष ही हुए हैं, और उसमें तीन बार इस सर्वोच्च पद को मुसलमान सुशोभित कर चुके हैं. उनके नाम कहूं तो...

- 1) डॉ. जाकिर हुसैन
- 2) फखरुद्दीन अली अहमद
- 3) डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम

इसके अलावा श्री. मुहम्मद हिदायतुल्लाह जो कि एक मुसलमान हैं, वे भी दो मर्तबा कार्यवाहक-राष्ट्रपति का पद सम्भाल चुके हैं. यही क्यों, ज्ञानी जैल सिंह जो कि एक सिख थे, वे भी एक बार राष्ट्रपति के पद को सुशोभित कर चुके हैं. ...इतना ही नहीं “भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस” जो कि भारत की सबसे बड़ी तथा पुरानी राजनैतिक पार्टी है, जिसने आजादी से आजतक के सत्तर वर्षों में करीब पचास वर्षों से ज्यादा चुनाव जीतकर देश पर शासन किया है; उस पार्टी की प्रेसिडेंट सन 1998 से यानी कि पिछले अठारह वर्षों से इटली में पैदा हुई सोनिया गांधी हैं. और उनके अध्यक्ष बनने के बाद कांग्रेस दो बार चुनाव जीतकर दस वर्षों तक राज भी कर चुकी है. और इन पूरे दस वर्षों तक भारत के जो प्रधानमंत्री थे; यानी कि डॉ. मनमोहन सिंह, वे भी एक सिख थे. सोचो, सैकड़ों वर्षों की गुलामी के बाद भी इस धरती ने सहिष्णुता नहीं खोई है. बताइए मुझे मिस्टर ओबामा कि विश्व के कौन-से देश में सहिष्णुता की ऐसी मिसाल आपको मिल सकती है? और फिर दूर क्यों जाना, आपके अमेरिका के इतने विशाल इतिहास में कितने गैर-क्रिश्चियन राष्ट्रपति बने? ...शायद एक भी नहीं. और फिर आप यह क्यों भूलते हैं कि अमेरिका के इतने लंबे इतिहास के बावजूद आप वहां के पहले ब्लैक राष्ट्रपति हैं. यानी इतनी बड़ी जनसंख्या होने के बावजूद उसके किसी प्रतिनिधि को प्रमुख पद तक पहुंचने में इतने वर्ष लग गए. ...और यहां भारत में सिख समुदाय, जिनकी जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या के करीब दो प्रतिशत है, उनके प्रतिनिधियों को यहां के राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री, दोनों पदों की शोभा बढ़ाने का अवसर प्राप्त हो चुका है. इतना ही नहीं, खुले विचारों का दावा करने तथा सबको एक निगाह से देखने जैसी बातें करने के बावजूद अमेरिका के इतने लम्बे इतिहास में एक भी महिला आजतक राष्ट्रपति के पद तक नहीं पहुंच पाई है. यह तो ठीक, अमेरिकी असहिष्णुता की हद तो यह कि प्रजातंत्र की स्थापना के 132 वर्ष तक तो आपके यहां महिला को वोट देने का अधिकार तक नहीं था. ...जबकि भारत में प्रजातंत्र की स्थापना के साथ ही महिलाओं को वोटिंग का अधिकार उपलब्ध था. और-तो-और, भारतीय प्रजातंत्र के मात्र सत्तर वर्ष के इतिहास में स्व. श्रीमती इंदिरा गांधी दो बार प्रधानमंत्री के पद को सुशोभित कर चुकी हैं. यही क्यों, श्रीमती प्रतिभा पाटिल तो पांच वर्ष के लिए राष्ट्रपति का पद भी संभाल चुकी हैं. अतः निवेदन सिर्फ इतना ही करना चाहता हूँ कि विश्व के किसी भी व्यक्ति को भारत को सहिष्णुता सिखाने की आवश्यकता नहीं है. सच तो यह है कि पूरे विश्व को भारत से सहिष्णुता सीखने की आवश्यकता है. और यह बात मैं मारे घमंड के नहीं, करुणा से भरकर कह रहा हूँ. मेरा मकसद कतई स्वयं को या मेरे निवासियों को ऊंचा

दिखाने का नहीं है. मेरा मकसद तो इस बहाने विश्वसमुदाय में आपसी सहिष्णुता बढ़ाने का है. सबको सहिष्णुता का सबक सिखाने का है. अतः मेहरबानीकर सब करना, परंतु मेरी भावना पर शक मत करना.

चलो अब मैं आपको मेरे इतिहास के बारे में बताता हूँ. क्योंकि सहिष्णुता की कोई भी गहराई समझने हेतु मेरा यह इतिहास जानना बहुत जरूरी है. और जब मैं इतिहास की बात कर रहा हूँ तो यह समझ ही लेना कि मेरा अपना अलग अस्तित्व जिसे आप “भारत” के रूप में जानते हैं, यह तो आप मनुष्यों का बनाया हुआ है. वास्तव में तो मैं महान पृथ्वी का एक अटूट हिस्सा ही हूँ. सो, पहले मैं पृथ्वी का इतिहास ही बताता हूँ. और जहां तक पृथ्वी के इतिहास का सवाल है तो वहां भी यह ध्यान रख ही लेना कि पृथ्वी का अलग अस्तित्व भी आप मनुष्यों ने ही जाना है. अंत में तो पृथ्वी भी महान ब्रह्मांड का ही एक अटूट हिस्सा है. अतः भारत का इतिहास जानने हेतु पृथ्वी का, और पृथ्वी का इतिहास जानने हेतु ब्रह्मांड का इतिहास जानना बहुत जरूरी है; क्योंकि वास्तव में तो इन तीनों के इतिहास को अलग करके देखा ही नहीं जा सकता है.

सो, मैं प्रारंभ “ब्रह्मांड” से करता हूँ. यह ब्रह्मांड करीब पन्द्रह अरब वर्ष पूर्व शून्य से हुए महा-विस्फोट के कारण अस्तित्व में आया है. और यह “शून्य” क्या है, यह समझना न आपके और ना विज्ञान के बूते की ही बात है. क्योंकि विज्ञान जब भी सोचेगा और जितना भी सोचेगा, वह “टाइम एण्ड स्पेस” अर्थात “समय और स्थान” के भीतर ही सोचेगा. वहीं आम मनुष्यों में भी इतनी प्रज्ञा कहां कि वह समय और स्थान के पार भी कुछ है, उसकी कल्पना तक कर सके. हालांकि यह कह दूं कि जो कुछ भी समय और स्थान के पार है, वही महत्वपूर्ण है. ब्रह्मांड हो या मनुष्य का जीवन, सबकी अंतिम बागडोर तो उन्हीं तत्वों के पास है जो समय और स्थान के पार है. तथा यह कौन से तत्व हैं जो समय और स्थान के पार हैं, यह तो ‘टाइम और स्पेस’ पर आधारित अच्छी सायकोलोजी समझकर ही समझा जा सकता है. सो, अभी तो मैं वापस ब्रह्मांड के अस्तित्व पर ही आ जाता हूँ. और इस बाबत मैं आधुनिक विज्ञान को वाकई सलाम करना चाहता हूँ. क्योंकि वह अपनी बुद्धिमत्ता तथा लगन के सहारे ब्रह्मांड के अनेक रहस्यों पर से परदा उठाने में कामयाब रहा है. हाल ही में प्रचलित “बिग बैंग थिअरी” के तारण को ही आधार बनाकर समझाऊं तो ब्रह्मांड आज से करीब 13.7 अरब वर्ष पूर्व एक अति सूक्ष्म इलेक्ट्रॉन के कारण अस्तित्व में आया है. इस थिअरी के अनुसार अचानक उस शून्य के समान इलेक्ट्रॉन में एक धमाका हुआ तथा वह एक सेकन्ड से भी कम के समय में ब्रह्मांड में परिवर्तित हो गया. बिग बैंग थिअरी आगे कहती है कि इस धमाके से जो ऊर्जा पैदा हुई, उस ऊर्जा ने कण और अणु का स्वरूप

धारण कर लिया. और आगे चलकर इन्हीं अणुओं के जुड़ने से आकाशगंगाएं अस्तित्व में आयी.

यहां दिक्कत एक ही है. विज्ञान की पहुंच उस तत्व तक नहीं है जो कि टाइम और स्पेस के पार है. अतः मैं यह स्पष्ट कर दूं कि विज्ञान जिसे सूक्ष्म इलेक्ट्रॉन कह रहा है, वह सूक्ष्म वस्तु इलेक्ट्रॉन न होकर एक शून्य है. शून्य यानी बिना स्पेस का. और जब स्पेस ही नहीं तो सूक्ष्म होने का भी सवाल ही नहीं. वैसे ही जब विज्ञान कहता है कि यह विस्फोट एक सेकन्ड से भी कम के समय में ब्रह्मांड में परिवर्तित हो गया, तो यह भी गलत है. विस्फोट चूंकि शून्य से हुआ है, अतः समय का भी सवाल ही नहीं उठता. और जब समय ही नहीं तो एक सेकन्ड या उसके लाखवें हिस्से का भी सवाल ही कहां उठता है? समय व स्थान तो अस्तित्व में ही उस विस्फोट के बाद आए हैं. अब जब यह बात विज्ञान की समझ के बाहर की है तो आम मनुष्यों के तो टाइम और स्पेस के पार की दुनिया को समझने का सवाल ही नहीं है. हां, कृष्ण द्वारा कही भगवद्गीता तथा लाओत्से के सूत्रों “ताओ-ते-चिंग” में ब्रह्मांड के अस्तित्व में आने के वास्तविक सिद्धांत उल्लेखित हैं. परंतु यहां भी सवाल यह कि उसे ठीक से समझे कौन? होगा, मैं स्वयं जल्द ही अपनी अगली किताब में ‘समय’ पर कुछ कहूंगा. उम्मीद है कि उसके बाद ना तो विज्ञान को और ना ही आम मनुष्यों को ‘समय’ के बाबत कोई अज्ञान बचा रह जाएगा. यूं तो महान आइन्स्टाइन ने समय के खेल को काफी कुछ समझा भी था और समझाया भी था. और सही मायने में देखा जाए तो विज्ञान के ब्रह्मांड तक की छलांग लगाने में आइन्स्टाइन द्वारा प्रतिपादित समय के सिद्धांतों ने ही प्रमुख भूमिका निभाई है. परंतु मैं जो समय कहूंगा उसमें समय के अस्तित्व में आने से लेकर उसके तमाम स्वरूपों का विस्तार से वर्णन करूंगा. उसके बाद निश्चित ही “विज्ञान की सहायता तथा मनुष्यों की प्रज्ञा के सहारे” मनुष्य के लिए कुछ भी असंभव नहीं रह जाएगा.

चलो, यह सब भविष्य की बात है और उसे भविष्य पर ही छोड़ देते हैं. हम तो सीधे-सीधे वापस वर्तमान विषय पर ही आ जाते हैं. हमने ब्रह्मांड के अस्तित्व में आने की बात तो समझ ली. अब सवाल यह कि क्या पृथ्वी भी ब्रह्मांड के साथ ही अस्तित्व में आ गई थी? मैं पहले इस बाबत विज्ञान क्या कहता है, वह बताता हूँ. विज्ञान के अनुसार आज से करीब पांच अरब वर्ष पहले तक आज का जो सौर मंडल है, वह सौर मंडल न होकर मेघ और राख का एक गुबार-मात्र था. और इस गुबार के बाहर एक अत्यंत ही विशाल सूर्य था, जिसका प्रकाश आज के सूर्य के प्रकाश से दस अरब गुना ज्यादा था. बस एक दिन अचानक यह गुबार फटा तथा उसके फटने से उसमें एक हलचल पैदा हुई. और उस हलचल के कारण राख का वह गुबार एक चक्र में परिवर्तित हो गया. तत्पश्चात उन चक्रों के केन्द्र में कई सूर्यों की उत्पत्ति हुई. इन सूर्यों की उत्पत्ति के साथ ही उनके आसपास जो राख का ढेर मौजूद था, उसमें भी हलचल पैदा हो गई. परंतु उन सूर्यों के गुरुत्वाकर्षण के कारण

राख का वह ढेर ज्यादा दूर तक बिखर न सका और धीरे-धीरेकर उन सूर्यों में से एक सूर्य के राख के इस ढेर ने “गरम-लावा” का स्वरूप धारण कर लिया. हालांकि जल्द ही यह लावा ठंडा होने लगा, और ठंडा होते ही इसने ग्रहों का स्वरूप धारण कर लिया. बस आज की यह पृथ्वी भी उन्हीं ग्रहों में से एक है. विज्ञान के अनुसार यह घटना करीब साढ़े-चार अरब वर्ष पूर्व घटी थी. यानी पृथ्वी अस्तित्व में करीब साढ़े-चार अरब वर्ष पूर्व आई है.

अब निश्चित ही, विज्ञान का यह तारण सत्य के निकट है. और उस हेतु एकबार फिर मैं वैज्ञानिक चेतना को सलाम करता हूँ. निश्चित ही जो विज्ञान ने कर दिखाया है वह पिछले लाखों वर्षों में किसी ने नहीं किया. मनुष्य-चेतना की जो ऊंचाइयां विज्ञान ने छुई है, वह लाखों वर्षों में किसी ने नहीं छुई है. परंतु हां, यहां भी विज्ञान को एक बात समझने की है कि पृथ्वी भी अस्तित्व में उसी दिन आ गई थी जिस दिन यह ब्रह्मांड अस्तित्व में आया था. दरअसल यह एक सनातन सिद्धांत है कि जो भी ‘टाइम और स्पेस’ की सीमा में कैद है “उसे ना तो कभी उत्पन्न ही किया जा सकता है; और ना ही उसे कभी मिटाया ही जा सकता है.” अतः जो कुछ भी यहां दृश्यमान है वह सबकुछ ब्रह्मांड के अस्तित्व में आने के साथ ही अस्तित्व में आया हुआ है. फिर वह पृथ्वी हो या मनुष्य. उसके पश्चात तो सबका सिर्फ रूपांतरण हो रहा है. अतः पृथ्वी भी अस्तित्व में तो तभी आ गई थी जिस दिन यह ब्रह्मांड अस्तित्व में आया था. बस उसने अपना स्वरूप बदलते-बदलते वर्तमान पृथ्वी का स्वरूप धारण करने में दस अरब वर्ष लगाए. उम्मीद है कि यह सीधी बात विज्ञान के तथा आपके, दोनों की समझ में आ गई होगी. अतः यह सिद्धांत हमेशा के लिए ध्यान में रख लेना कि यहां ब्रह्मांड के अस्तित्व में आने के बाद न तो कोई कण कभी पैदा हुआ है और ना ही कोई कण कभी मिटा है- सबका सिर्फ एक से दूसरे में रूपांतरण हुआ है. और ऐसे एक नहीं हजारों सनातन सत्य हैं जिनकी चर्चा भगवद्गीता तथा लाओत्से के सिद्धांतों में मिलती है. खैर, अभी तो उम्मीद यह कर रहा हूँ कि पृथ्वी के अस्तित्व में आने की दास्तान आपकी समझ में आ गई होगी. साथ ही विज्ञान का काबिले-तारीफ कार्य भी आपकी समझ में आ ही गया होगा.

चलो पृथ्वी ने अपना वर्तमान स्वरूप करीब साढ़े-चार अरब वर्ष पूर्व धारण कर लिया था, यह बात तो समझे; परंतु अब प्रश्न यह उठता है कि पृथ्वी पर जीवन कब और कैसे आया? तो इस हेतु पहले यह बताएं कि जीवन का आधार क्या है? बिल्कुल ठीक सोचा आपने... ‘पानी’. अब चूंकि पृथ्वी आग का लावा थी तो शुरुआती दौर में तो इसमें पानी होने का सवाल ही नहीं उठता है. यानी पानी पृथ्वी पर था नहीं, कहीं बाहर से आया है. और पृथ्वी के बाहर तो अंतरिक्ष ही है. अतः सीधी बात है कि पानी पृथ्वी पर अंतरिक्ष से ही आया है. ...और कैसे? सो हुआ यह कि धमाकों के बाद बड़ी मात्रा में कई प्रकार के ज्वलनशील पदार्थों की उत्पत्ति हुई, जिसमें एक पदार्थ हाइड्रोजन भी था. अपनी उत्पत्ति के साथ यह हाइड्रोजन के कण करोड़ों वर्षों तक आपस में टकराते रहे. इस आपसी टकराहट

के कारण हाइड्रोजन के कण धीरे-धीरेकर हीलियम में रूपांतरित होते गए. तथा इसी हीलियम और हाइड्रोजन के गठजोड़ से तारे बने. फिर जब इन तारों में धमाका हुआ तो एकबार फिर राख का बड़ा गुबार बना. राख के इस गुबार में कार्बन, नियोन, सल्फर, सोडियम, क्लोरीन तथा सिलिकॉन के साथ-साथ ऑक्सीजन जैसे पदार्थ भी शामिल थे. आगे यह हुआ कि पहले से घूम रहे हाइड्रोजन के तथा नए पैदा हुए ऑक्सीजन के कण सिलिकॉन तथा कार्बन के कणों पर बैठने लगे. वहीं यह भी संयोग ही है कि इन्हीं सिलिकॉन और कार्बन के ईर्द-गिर्द हाइड्रोजन के दो कण तथा ऑक्सीजन के एक कण का मिलन होना प्रारंभ हो गया. और उसी रिएक्शन से अचानक पानी की उत्पत्ति हुई. फिर इस बढ़ते पानी ने अंतरिक्ष में बर्फ का स्वरूप धारण कर लिया. तत्पश्चात आज से करीब चार अरब वर्ष पूर्व अंतरिक्ष से बर्फ के कई गोले, जिसे वैज्ञानिक भाषा में एस्टेरोइड्स तथा कॉमेट्स कहा जाता है, पृथ्वी पर गिरे. और चूंकि पृथ्वी अब भी आग का गोला थी, सो बर्फ के ये गोले पृथ्वी पर आते ही एकबार फिर पानी में रूपांतरित हो गए. तथा जहां-जहां गड़ढ़े थे वहां पानी जमा होने लगा. इसी से नदियां, समुद्र व तालाब बने.

फिर क्या था? एकबार जब पानी पृथ्वी पर आ गया तो जल्द ही अमीबा व बैक्टीरिया के रूप में जीवन भी आ गया. और फिर तो पेड़-पौधे भी निकल आए. यह सब भी करीब 3 अरब वर्ष पुरानी कहानी है. और उसके बाद तो यह एक प्रोसेस में आ गया. जीवन और चेतना का विकास होता चला गया. छोटे-मोटे बैक्टीरिया “मछली, जानवर तथा पक्षियों” का स्वरूप धारण करते चले गए. महत्वपूर्ण बात यह कि इस बढ़ते जीवन तथा इस बढ़ती चेतना को मनुष्य का स्वरूप धारण करने में पूरे तीन अरब वर्ष लगे. अर्थात् समझें तो ब्रह्मांड के अस्तित्व में आने के करीब नौ अरब वर्ष बाद पृथ्वी अस्तित्व में आई, तथा पृथ्वी के अस्तित्व में आने के बाद के भी करीब चार अरब से ज्यादा वर्षों बाद ‘मनुष्य’ अस्तित्व में आया. बस यह समझाने हेतु ही मैंने आप लोगों को ब्रह्मांड तथा पृथ्वी के अस्तित्व में आने का इतिहास बताया. उपरोक्त इतिहास से समझना सिर्फ इतना है कि मनुष्य जीवन कितना कीमती है. क्योंकि चेतना अपने अस्तित्व में आने के बाद भी करीब चार अरब वर्ष की मेहनत के बाद ही मनुष्य का स्वरूप धारण कर पाई है. और कहने की जरूरत नहीं कि यह मनुष्य स्वरूप चेतना की अंतिम ऊंचाई है. तथा इस कारण “यह मनुष्य जीवन” और भी महत्वपूर्ण हो जाता है. सो, सौ बातों की एक बात यह कि ऐसे में इतने बेशकीमती मनुष्यजीवन को आपसी असहिष्णुता के कारण बर्बाद कतई नहीं किया जा सकता है. और यही कारण है कि मैं आज सभी मनुष्यों को सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने उपस्थित हुआ हूँ.

खैर, ब्रह्मांड तथा पृथ्वी के अस्तित्व में आने का इतिहास आपने जान लिया. साथ ही जीवन के अस्तित्व में आने का इतिहास भी आपने समझ ही लिया. अब उम्मीद करता हूँ कि मनुष्य-जीवन के महत्व को भी आपने समझ ही लिया होगा. सो अब मैं सीधे अपने

इतिहास पर आता हूँ. और मेरा इतिहास अलग से इसलिए आवश्यक है...क्योंकि यह इतिहास अन्य सभी भू-भागों के इतिहास से सर्वथा भिन्न है. हालांकि मैं अपना इतिहास दो लाख वर्ष पूर्व से प्रारंभ न करके पांच-दस हजार वर्ष पूर्व से ही प्रारंभ करता हूँ. क्योंकि जो मैं समझना चाह रहा हूँ...उस हेतु इतना इतिहास समझना ही काफी है. निश्चित ही आज से पांच हजार वर्ष पूर्व मैं ऐसा नहीं था, जैसा आज हूँ. उस समय मोटामोटी तौरपर मुझे “आर्यावर्त” के नाम से जाना जाता था. यह आर्यावर्त कोई देश नहीं था, बल्कि अंदाजे से माना और समझा जानेवाला एक क्षेत्र था. अब उस समय वैज्ञानिक प्रगति तो हुई नहीं थी कि उसका कोई नक्शा बनाया गया हो. वहीं उस समय तक गाड़ियों या हवाईजहाज का भी निर्माण नहीं हुआ था. सो स्वाभाविकरूप से मनुष्य सफर घोड़ागाड़ी तथा बैलगाड़ियों में ही करता था. और आप समझ ही सकते हैं कि अब घोड़ागाड़ी तथा बैलगाड़ियों से वह कितनी दूर जा सकता था! सो हरकोई अपने-अपने क्षेत्रों में ही सिमटकर रहता था. उस समय के आर्यावर्त की संस्कृति में राजपाट तथा राजाओं का युग आ गया था. उस समय के आर्यावर्त में हजारों नगर थे. और जितने नगर थे उतने ही राज्य और राजा थे. मैं इस समय बात मेरे यानी “भारत के महाभारत के युग की” कर रहा हूँ. उस समय आर्यावर्त की कुल जनसंख्या करीब पचास लाख थी. और इन पचास लाख लोगों में ही करीब हजारों राज्य व राजे थे. खैर, प्रमुख बात यह कि इनमें आपसी झगड़े व युद्ध होते ही रहते थे.

अब आर्यावर्त का यह जो महाभारत का युग था, वह उस समय के इतिहास का सबसे प्रगतिशील युग था. उस युग में मनुष्यों ने एक-से-एक वस्त्रों व शानदार घरों व महलों का ही नहीं, बल्कि तेज गति से दौड़नेवाली घोड़ागाड़ियों का आविष्कार भी कर लिया था. साथ ही उसने पेट भरने हेतु तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन भी ईजाद कर लिए थे. कहने का तात्पर्य यह कि इस युग का मनुष्य जीवन की तीनों जरूरियात यानी “रोटी, कपड़ा और मकान” के शिखरों को छू चुका था. लेकिन मेरा अनुभव है कि हर प्रगति के साथ मनुष्यों के अहंकार और असहिष्णुता भी बढ़ते ही चले जाते हैं. कायदे से होना इससे उल्टा चाहिए; बढ़ती प्रगति के साथ मनुष्यों को विनम्र तथा सहिष्णु होते चले जाना चाहिए, पर पता नहीं क्यों ऐसा होता नहीं है. सो महाभारत का प्रगतिशील युग भी इससे बाकात नहीं रहा. और बस इस बढ़ते अहंकार और बढ़ती असहिष्णुता के चलते उस युग के मनुष्यों ने एक-से-एक हथियार भी ईजाद करने शुरू कर दिए. तीर, भाले, तलवार, गदा तथा और भी ना जाने कितने हथियारों की धार उस युग में और भी तेज कर दी गई. दुर्भाग्य तो यह था कि हर तरह की शिक्षा में युद्ध-कला को ना सिर्फ शामिल किया जाने लगा, बल्कि उसे ही ज्यादा महत्व भी दिया जाने लगा.

अब एक तो वैसे ही धरती एक नहीं थी, जैसा कि आज का भारत एक है. धरती के इस छोटे-से टुकड़े का अनेक राज्यों में वैसे ही विभाजन था. और ऊपर से बढ़ती असहिष्णुता के कारण उनके आपसी टकराव बढ़ते जा रहे थे. ऐसा एक दिन नहीं जाता था,

जब कहीं-न-कहीं दो सेनाओं का युद्ध न हो रहा हो. अंत में आपस में बढ़ रही इस असहिष्णुता ने महाभारत के भयानक युद्ध का स्वरूप धारण कर लिया. उस समय के अधिकांश राजा अपनी सेना समेत इस महायुद्ध का हिस्सा बने. सभी एक या दूसरे खेमे में विभाजित हो गए. और आखिर इस ऐतिहासिक तथा महाविनाशक युद्ध ने उस समय के आर्यावर्त की पूरी प्रगति धूल में मिला दी. इस एक महायुद्ध के कारण सबकुछ खत्म हो गया. और जो धरती प्रगति के शिखर पर थी, वह अन्य धरतियों से बिछड़ गई. आपके इंटरनेट का इतिहास चाहे जो कह रहा हो, यह बात स्पष्टतः समझ लेना कि महाभारत का युग उस समय तक के मनुष्यजाति के इतिहास का सबसे प्रगतिशील युग था. प्रगति के ऐसे शिखर उस समय तक पृथ्वी की किसी धरती ने नहीं छुए थे. ...परंतु बढ़ रही आपसी असहिष्णुता ने सबकुछ खत्म कर दिया. बस इसी 'असहिष्णुता' के इन्हीं गंभीर परिणामों को समझाने हेतु मैं आज सबके सन्मुख प्रकट हुआ हूँ.

खैर, महाभारत के विनाशकारी युद्ध के बाद सब धीरे-धीरेकर सम्भलने अवश्य लगा; परंतु आप सभी जानते हैं कि बिगड़ा बनाना इतना आसान नहीं होता. और यही वो समय था, जब अन्य धरतियां प्रगति के मामले में आर्यावर्त से आगे निकल गई. बस मेरी धरती के पांच हजार वर्ष पूर्व की उन्नति से पतन तक के इसी इतिहास से सबको सबक लेना है. आज से पांच हजार वर्ष पूर्व जब यह धरती प्रगति के शिखर पर थी, यदि उस समय यहां के मनुष्यों में आपसी सहिष्णुता होती तो क्या आज का 'भारत' जो कि एक संघर्षरत मुल्क है; दुनिया के सबसे प्रगतिशील देशों में न होता? ...बिल्कुल होता. बस यह एक महत्वपूर्ण बात समझाने हेतु ही मैंने आपको मेरी धरती का इतिहास बताया. अतः समझदार वह जो इतिहास से सबक ले. जो एक असहिष्णुता के चलते कल आर्यावर्त का हुआ, वही... बढ़ती असहिष्णुता के कारण किसी अन्य देश या सम्पूर्ण मनुष्यजाति के साथ भी हो ही सकता है. और हो क्या सकता है, ऐसा होता ही रहता है. मनुष्यों ने प्रगति के शिखर पहली बार नहीं छूए हैं, कई बार छूए हैं. लेकिन हर बार आपस में बढ़ती असहिष्णुता ने प्रगति का भोग लिया है. और तत्पश्चात उसे भारत की ही तरह फिर अ-ब-स से शुरू करना पड़ा है. परंतु यह ध्यान रखना चाहिए कि बिगड़ा आसानी से फिर बनता नहीं. और इस बाबत भारत का उदाहरण आपकी आखों के सामने है.

अब चूंकि भारतीय प्रगति की बातें विश्व में ना तो ज्यादा फैली है और न फैलाई ही गई है. इसलिए महाभारत के प्रगतिशील युग का आज के विश्व को कोई अंदाजा नहीं है. अतः कम-से-कम मैं यह दावे से कह सकता हूँ कि मनुष्य की प्रगति के बाबत जो भी इतिहास आप आज पढ़ते हैं, वह तथ्यों पर आधारित कतई नहीं है. और फिर अब तो इंटरनेट का जमाना है, जिसका सत्य से वैसे ही कुछ लेना-देना नहीं है. वहां तो जिसकी जो मरजी आ रही है, लिख रहा है. वहां तो हरकोई अपने इतिहास को स्वर्णिम बताने में लगा हुआ है, फिर चाहे वह सत्य से कितना परे ही क्यों न हो! ऐसे में कहने की जरूरत नहीं कि

जिन देशों का इंटरनेट पर राज है...आजकल विश्व में उन्हीं के स्वर्णिम इतिहास की तूती बोल रही है. और उसमें सत्य तो जाने कहां खो गया है, पता ही नहीं चल रहा. लेकिन यहां मैं एकबात स्पष्ट कर दूं कि मैं आज सिर्फ सहिष्णुता सिखाने हेतु प्रकट हुआ हूँ. ना तो मुझे इतिहास बताने में कोई रुचि है और ना अपनी धरती की शेखी बघाड़ने में. मैं समझाना सिर्फ इतना चाह रहा हूँ कि जिस असहिष्णुता ने समृद्धि के शिखर पर बैठे भारत को गरीब बना दिया, उस असहिष्णुता से सबक लो और उसे छोड़ो.

और जहां तक भारत की धरती के पांच हजार वर्ष पूर्व प्रगति के शिखर पर बैठे होने की बात है, तो उसका अंदाजा आपको मेरे इतिहास से ही हो जाएगा. निश्चित ही उससे साफ हो जाएगा कि मैं अपनी धरती के प्रगतिशील युग की शेखी नहीं मार रहा. मुझे इसकी जरूरत भी नहीं. परंतु बात समझने तथा समझाने हेतु इसकी चर्चा आवश्यक है, सो कर रहा हूँ. अतः यहां-वहां की बात न कर मैं सीधे महाभारत के युद्ध के बाद क्या हुआ, उसपर आ जाता हूँ. निश्चित ही इस महायुद्ध के बाद सारी प्रगति ठंडी पड़ गई. वरना “खूशबूदार ईतरों से लेकर एक-से-एक गहने तक” किस-किस चीज का इस्तेमाल उस जमाने में नहीं हो रहा था...? खैर, युद्ध समाप्त हो गया. चारों ओर मातम छा गया. हजारों सिपाही मारे गए. गाड़े-घोड़े सब नष्ट हो गए. चारों ओर गरीबी, बेरोजगारी तथा भूखमरी का राज हो गया. जहां आनंद और उत्सव हेतु एक-से-एक समारोह आयोजित किए जाते थे, जहां मनोरंजन हेतु चौपर जैसे एक-से-एक खेल खेले जाते थे, जहां नृत्य व संगीत कला का आनंद बात-बात पर लिया जाता था; उसकी जगह रोटी हेतु संघर्ष प्रारंभ हो गया. अर्थात एक युद्ध ने सबकुछ बदलकर रख दिया. यदि इस महायुद्ध के बाद भी कुछ नहीं बदला था तो वह था, टुकड़े-टुकड़े में बंटे हजारों राज्यों का अस्तित्व. जल्द ही हर नगर फिर एक राज्य बन गया, तथा उसने फिर अपना एक नया राजा खोज लिया.

हालांकि भले ही टुकड़े-टुकड़े में बंटे राज्य नहीं बदले थे, वे भले ही फिर जल्द ही अस्तित्व में आ गए थे; परंतु जीवन के स्तर पर सबकुछ बदल गया था. महाभारत जैसे महायुद्ध के दरम्यान हुए विनाश की छाप आर्यावर्त के चप्पे-चप्पे पर देखी जा सकती थी. सारे विकास की जगह गरीबी और भूखमरी ने ले ली थी. अर्थात पहले आपस में संघर्ष कर रहे थे, अब जीवन से संघर्ष कर रहे थे. हां एक बात थी, मेरी यानी भारत की धरती पर कुदरत की अपार मेहरबानी शुरू से रही है. यहां की जमीन ना सिर्फ उपजाऊ है, बल्कि नदियों की भी यहां हमेशा से भरमार रही है. बस सबने नदी किनारे बसना शुरू कर दिया. इन संघर्ष के दिनों में भोजन प्रमुख जरूरियात तथा खेती प्रमुख व्यवसाय बनके उभरा. नृत्य, उत्सव, शाही-भोजन, शाही-रथ वगैरह तो महाभारत के युद्ध के बाद वैसे ही गायब हो चुके थे. हालांकि करीब हजार वर्ष की मेहनत के बाद धीरे-धीरेकर गाड़ी फिर पटरी पर आने लगी. मानना होगा कि मेरे धरतीवासियों ने जीवन के इस कठिन संघर्ष को अच्छे से झेला. खासकर यह देखते हुए कि सभी महान योद्धाओं तथा प्रतिभावान लोगों को “महाभारत का

विनाशकारी युद्ध” खा चुका था. ऐसे में कहने की जरूरत नहीं कि हजार वर्ष का यह संघर्ष, आम प्रजा का अपना संघर्ष था. आम मनुष्य ने इसपर अपने बूते पे विजय पाई थी. इस संघर्ष का कोई नायक नहीं था. फिर भी इस संघर्ष का एक बेजान नायक जरूर था. आप कहेंगे बेजान नायक...? जी हां, भारत को फिर प्रगति की राह पर लगानेवाला एक बेजान नायक ही था. ...और वह नायक था; महाभारत के प्रगतिशील युग में अर्जित किए हीरे-जवाहरात और सोना. उस समय इतना सोना तथा इतने हीरे-जवाहरात भारत में मौजूद थे कि उसकी कल्पना ही करना असंभव है. यहां यह भी ध्यान रख लेना कि यहां मौजूद सोने तथा हीरे-जवाहरातों ने इस धरती के इतिहास को बड़ा प्रभावित भी किया. उसके साथ ही यहां की उपजाऊ जमीन, बहती नदियां तथा संतुलित कुदरती वातावरण ने भी इस धरती के इतिहास को पूरी तरह से बदलकर रख दिया.

निश्चित ही आप कहेंगे...कैसे? तो वह भी बताता हूँ. भले ही महाभारत के विनाशक युद्ध का यहां के जीवनस्तर पर बुरा प्रभाव पड़ा था, परंतु बावजूद इसके यहां मौजूद सोने व हीरे-जवाहरातों के कारण भारत गरीब तब भी नहीं था. भारत उस समय भी समृद्ध था, और ऐसा समृद्ध कि महाभारत के विनाशक युद्ध के बाद भी इसे “सोने की चिड़िया” ही कहा जाता था. वहीं दूसरी ओर कुदरत की अपार कृपा के कारण यहां ना सिर्फ जीना आसान था, बल्कि प्रगति करना भी ज्यादा मुश्किल नहीं था. जबकि इसके विपरीत भारत के आसपास की धरतियां ना तो समृद्ध थीं और ना ही उनपर कुदरत उतनी मेहरबान थी. ना तो वहां की जमीनें उपजाऊं थीं, और ना वहां का मौसम ही संतुलित था. बस इन सबके चलते आसपास के धरतीवासियों की भारत पर नजर पड़नी शुरू हो गई. हो सकता है आप कहें या सोचें कि बात सहिष्णुता की चल रही है उसमें तुम अपनी धरती का इतिहास क्यों घुसेड़ रहे हो.... तो मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं कोई भी बात व्यर्थ या अकारण नहीं करता हूँ. यहीं से तो भारत की सहिष्णुता का महान इतिहास प्रारंभ होता है.

सो हुआ यह कि महाभारत के विनाशक युद्ध के करीब हजार वर्षों में भारत की गाड़ी फिर पटरी पर आ गई. और भारत की इस खुशहाली ने सबसे पहले ईरान के कुछ लोगों को आकर्षित किया. वे अपना देश छोड़ पूरब में जमुना नदी के किनारे तक आ बसे. इन्हें ‘आर्य’ कहा गया और भारत की सहिष्णु प्रजा ने ना सिर्फ उनका स्वागत किया, बल्कि जल्द ही उनसे हिल-मिल भी गए. और आप मानेंगे नहीं कि वह भी इस कदर जैसे चाय में शक्कर घुल-मिल जाती है. यही नहीं, भारत के सिंधु घाटी में आए इन ईरानियों की छाप आज भी भारतीय संस्कृति पर पाई जाती है. वर्तमान भारत की व्यावसायिक राजधानी मुंबई में आज भी अनेक ईरानी रेस्टोरेन्ट मौजूद हैं. और इन रेस्टोरेन्टों की चाय की चुस्कियां पूरे मुंबई में मशहूर है. इसे कहते हैं संस्कृति तथा शौकों को अपनाने की सहिष्णुता. आपस में बिना भेद के एक हो जाने की सहिष्णुता. और भारत की सहिष्णुता का यही इतिहास है जो आज पूरी दुनिया को समझना आवश्यक है.

खैर, हरे-भरे मैदानों और रोजी-रोटी के लिए भारत में आने की परंपरा, जो आज से चार हजार वर्ष पूर्व ईरानियों से प्रारंभ हुई थी, फिर वह सिलसिला अंत तक नहीं थमा. भारत की समृद्धि, यहां की हरियाली तथा यहां के संतुलित मौसम की चर्चा चारों ओर फैलने लगी. और इसी से आकर्षित होकर आज से करीब पच्चीस सौ वर्ष पूर्व फारस के एकेमेनिड शासकों ने भारत पर हमला किया. करीब दो सौ वर्षों तक उन्होंने अफगानिस्तान, पंजाब तथा राजस्थान पर राज किया. और तभी एक और इतिहास लिखा गया. आज से करीब तेइस-चौबीस सौ वर्ष पूर्व करीब 326 BC में मैसिडोनिया के शासक सिकंदर ने भारत पर हमला किया. सिकंदर ने सबसे पहले तो अफगानिस्तान, पंजाब और राजस्थान पर राज कर रहे एकेमेनिड के शासकों को युद्ध में हराया. और तत्पश्चात वह अगले करीब दो वर्षों तक पश्चिम भारत के अन्य राज्यों पर भी हमला करता गया. इन दो वर्षों में सिकंदर ने अनेक पश्चिमी राज्यों पर अपना शासन कायम किया. इन हमलों के दौरान सिकंदर और पोरस के मध्य हुआ युद्ध काफी शानदार रहा. हालांकि अंत में पोरस को हार का सामना करना पड़ा. खैर, उधर लगातार के हमलों से सिकंदर की सेना थक चुकी थी, सो अंत में उसे वापस लौट जाना पड़ा. लेकिन जाते-जाते भी वह यहां से बड़ी मात्रा में हीरे-जवाहरात व सोना अपने साथ ले गया. साथ ही अपनी सेना के एक बड़े हिस्से को वह शासन करने हेतु यहां छोड़ भी गया. खैर, इसके बाद इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय लिखा गया. मौर्य शासक चंद्रगुप्त और उनके कूटनीतिक सलाहकार चाणक्य ने मिलकर सिकंदर से हारे सब राजाओं को एक किया तथा अपनी संयुक्त ताकत दिखाते हुए सिकंदर की सेना को खदेड़ दिया. और इसके साथ ही चंद्रगुप्त के नेतृत्व में प्रथम बार भविष्य के अखंड भारत की नींव रखी गई. चंद्रगुप्त का शासन गांधार से लेकर बंगाल तक तथा कश्मीर से लेकर दक्षिणी पठार तक फैला हुआ था. चंद्रगुप्त के राज में देश में फैली इस अखंडता को भारत के इतिहास की एक बड़ी उपलब्धि कहा जा सकता है. उसके पश्चात सम्राट अशोक ने राजगद्दी सम्भाली. लेकिन उनकी मृत्यु के चन्द वर्षों में ही मौर्य वंश के शासन का अंत आ गया. और उसके साथ ही एकबार फिर सभी छोटे-मोटे राज्यों ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया. यानी बमुश्किल स्थापित हुई अखंडता फिर टुकड़ों-टुकड़ों में बंट गई.

अब यह तो भारत के भीतर की बात थी. परंतु भारत के बाहर यहां की समृद्धि हमेशा चर्चा का विषय बनी रही. और दुर्भाग्य से समृद्धियों की यह चर्चा बाहर के शासकों को भारत पर हमला करने हेतु प्रेरित भी करती रही. और इसी कारण यह धरती हमेशा बाहरी आक्रमणों का शिकार रही. सन 1001 में महमूद गजनी ने अरब से अपनी सेना समेत भारत का रुख किया. उसने भारत पर कुल सत्रह बार आक्रमण किया. अपने हर आक्रमण में उसने यहां के सोमनाथ, कन्नौज, मथुरा तथा वृन्दावन के मशहूर मंदिरों को खूब लूटा. खैर, एक दिन महमूद गजनी के आक्रमणों का भी अंत आया. लेकिन उसके बाद सन् 1526 में भारत के इतिहास में एक और नया मोड़ आया. और उस मोड़ ने एक अनोखा

इतिहास रच दिया. हुआ यह कि उस समय दिल्ली की कमजोर पड़ती सल्तनत को देखते हुए उस समय के पंजाब के राजा दौलत खान लोदी ने दिल्ली के सुल्तान इब्राहिम लोदी को परास्त करने हेतु काबुल के शासक बाबर को भारत आने का निमंत्रण दिया. और बाबर ने पानीपत के युद्ध में इब्राहिम लोदी को परास्त किया. इसके साथ ही बाबर के नेतृत्व में भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना हो गई. फिर तो यह मुगल शासन रोज-रोज फैलता चला गया. मुगल और उनके वंशज हुमायुं, अकबर, जहांगीर, शाहजहां तथा औरंगजेब ने मिलकर करीब 325 वर्ष तक भारत पर शासन किया. इस युग की एक अच्छी बात यह रही कि अकबर के शासनकाल में भारत ने एकबार फिर अखंडता की ओर कदम बढ़ाए. बाकी तो जब मेरी धरती के लोग सहिष्णु हैं, तो फिर मेरी सहिष्णुता का तो हिसाब ही नहीं लगाया जा सकता है, अतः मुझे मुगलशासन की सिर्फ अच्छाइयां याद हैं. बाकी जो कुछ भी हुआ, उसे मैं कबका भूल चुका. सो मैं अभी तो अपने इतिहास की बात ही आगे बढ़ाऊं.

उधर मुगलशासन के दरम्यान ही एक और ऐसा डेवलेपमेन्ट हुआ, जिसने भारत के भविष्य के इतिहास को काफी प्रभावित किया. मुगलों के दौर में जब जहांगीर का शासन था तब उनकी इजाजत से “सन 1612 में इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने” व्यापार फैलाने हेतु भारत में कदम रखा. और धीरे-धीरेकर इस इस्ट इंडिया कंपनी ने व्यापार के साथ-साथ यहां के राजनैतिक वातावरण में भी रस लेना शुरू किया. और इसका अंतिम परिणाम यह हुआ कि जब औरंगजेब के कारण ही मुगलशासन का अंत हुआ, उस समय तक भारत का करीब दो तिहाई हिस्सा इस्ट इंडिया कंपनी के कब्जे में आ चुका था. और बचा हुआ हिस्सा जहां उनका शासन नहीं था, वह वे राजे थे जो अंग्रेजों के वफादार थे. यानी कुल-मिलाकर देखा जाए तो पूरे भारत पर ईस्ट इंडिया कंपनी का सीधा या परोक्ष शासन हो चुका था. अंग्रेजों का यह शासन करीब डेढ़ सौ वर्ष चला. इस दौरान जालियांवाला बाग की क्रूरता भी हुई तथा और भी न जाने क्या-क्या हुआ. लेकिन उन सबमें मैं जाना नहीं चाहता. मैं स्वभाव से ही सहिष्णु हूँ तथा सिर्फ अच्छाइयां याद रखने का आदी हूँ. और निश्चित ही अंग्रेज शासन के दरम्यान भी एक-से-एक अच्छे कार्य हुए. सबसे पहले तो देश वास्तविकता में एक हो गया. पूरे देश में एक कानून लागू हुआ. साथ ही भारत का संपर्क इसी दौरान सम्पूर्ण विश्व से हुआ. पूरे विश्व से भारत के व्यापारिक संबंधों की स्थापना भी इसी दौर में हुई. इसके अलावा रेलवे, सड़कों तथा अन्य इन्फ्रास्ट्रक्चर की स्थापना भी अंग्रेजों के शासनकाल में ही हुई. यही क्यों, कई पुरानी अनावश्यक परंपराओं जैसे सती-प्रथा, मानव-बलि तथा गुलामी की प्रथा पर प्रतिबंध भी “अंग्रेज-शासन” के दरम्यान ही लगा.

खैर, अंत में मेरी धरती के लालों ने अपनी धरती को 1947 में अंग्रेजों से आजाद करवा लिया. लेकिन यह आजादी कई मायनों में महंगी पड़ी. एक तो अंग्रेजों ने भारत को खूब लूटा. वे यहां से न जाने कितने बेशकीमती हीरे-जवाहरात तथा सोना अपने साथ ले गए. यहां तक कि ब्रिटेन की महारानी के महल की शोभा बढ़ा रहा कोहिनूर हीरा भी भारत

का ही है. इसके अलावा अंग्रेजों से आजादी के साथ ही मेरे दो टुकड़े भी हो गए. एक भारत, जो मैं आपसे बात कर रहा हूँ तथा दूसरा मेरा ही अंश पाकिस्तान. खैर मेरे लिए यह कोई नई बात नहीं थी. आज के अफगानिस्तान, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, तिब्बत वगैरह भी किसी समय मेरी ही धरती का हिस्सा थे. अब धरतियों को बांटना इन्सानी फितरत है, अतः उसमें मुझे ज्यादा जाना भी नहीं है. मुझे तो सिर्फ इस बात का गर्व है कि युगों से इतनी छोटी-छोटी सल्तनतों में विभाजित रहने के बावजूद, अनेकों बार विदेशी हमलों का शिकार होने के बावजूद तथा लंबी गुलामी के बावजूद... आज मैं एक अखंड तथा आजाद धरती हूँ.

तो यह तो हुआ मेरा इतिहास. और अब मैं सीधे इस बात पर आता हूँ कि मैंने आपको अपना यह इतिहास क्यों बताया. निश्चित ही इस धरती की सहिष्णुता तथा यहां की समृद्धि को समझाने के लिए. और पहले चर्चा समृद्धि की कर लेता हूँ. सोचो यह कि इस धरती के बेशकीमती हीरे-जवाहरातों को इस कदर लुटे जाने के बावजूद भी आज यह विशाल देश अपने पैरों पर खड़ा है. कोई कुछ भी कहे, आज दुनिया के प्रमुख देशों में मेरी गिनती होती ही है. अंदाजा सिर्फ यह लगाओ कि ऐसे में यह धरती युगों से कितनी समृद्ध रही होगी. और जहां तक सहिष्णुता की बात है तो उसकी झलक तो आपको मेरे इतिहास से ही समझ में आ गई होगी. और समझ में न आई हो तो मैं सहायता कर देता हूँ. एक बात तो आप समझ ही गए होंगे कि युगों से यहां पर एक ही संस्कृति तथा एक ही धर्म में माननेवाले लोग थे. हालांकि इस दरम्यान भारतीय संस्कृति में एक बड़ा परिवर्तन अवश्य आया. आज से करीब पच्चीस सौ वर्ष पूर्व यहां महान बुद्ध ने जन्म लिया. और उनके बढ़ते प्रभाव से हजारों ने हिंदू धर्म को छोड़कर बौद्ध धर्म अपनाया. लेकिन बुनियादी तौर पर दोनों धर्मों में कोई विशेष फर्क नहीं था. अतः कहा जा सकता है कि आज से करीब 1500 वर्ष पूर्व तक एक ही संस्कृति के लोग यहां रहते थे. लेकिन उसके बाद जब बाहर के अलग-अलग देशों के शासक यहां आने लगे तो उनके साथ वहां की आम जनता भी यहां स्थानांतरित होने लगी. और मेरे धरतीवासियों ने ना सिर्फ सबका स्वागत किया बल्कि सबकी अच्छी बातों को ग्रहण भी किया. फिर बात चाहे खान-पान की हो या संस्कृति की. यही कारण है कि आज के भारतीय खान-पान तथा आज की भारतीय संस्कृति पर मुगलों से लेकर अंग्रेजों तक सबका प्रभाव साफ-साफ देखा जा सकता है. यानी यहां की प्रजा इतनी सहिष्णु है कि अच्छा देखते ही अपना लेती है. मौका पड़ने पर बेहतरी हेतु युगों के शौक व संस्कृति तक को रूपांतरित करने में जरा भी संकोच नहीं करती. यहां तक कि जहां आज से पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व भारत में एक भी मुसलमान नहीं था, यदि अखंड भारत यानी पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान को भी गिन लिया जाए तो उस अखंड भारत के मुसलमानों की कुल संख्या, साठ करोड़ से ऊपर पहुंच जाती है. यानी इतने बड़े अमेरिका की कुल आबादी से भी दोगुना तो यहां के अखंड भारत की सिर्फ मुस्लिम आबादी हो जाती है. इसे विभाजित करके समझाऊं तो 19 करोड़ के करीब पाकिस्तान में, 16 करोड़ के

करीब बांग्लादेश में, 3 करोड़ के करीब अफगानिस्तान में तथा 22 करोड़ के करीब मुसलमान आज की तारीख में भारत में बसते हैं. सोचिए इनमें से कुछ ही हैं जो बाहर से आए थे, बाकी सब यहीं के निवासी हैं. और यहीं के निवासी होने का अर्थ यह है कि जिन्होंने बाद में मुस्लिम धर्म अपनाया है. लेकिन इससे भी मेरे देश की जनता को कोई एतराज नहीं. इसे कहते हैं सहिष्णुता. न जाने कितनी ईसाई मिशनरी आज भी आजाद भारत में सक्रिय हैं. उनके प्रभाव में आकर भी हजारों लोग रोज अपना धर्म छोड़ ईसाई धर्म स्वीकार रहे हैं, उससे भी यहां किसी को कोई एतराज नहीं. और सबसे बड़ी बात यह कि हिंदू धर्म किसी प्रकार की जबरदस्ती में विश्वास नहीं करता. ऐसे उदाहरण आपको ना के बराबर मिलेंगे जहां किसी क्रिश्चियन या मुसलमान को हिंदू में कनवर्ट करने की कोशिश की जा रही हो. बस यही बात मैं समझाना चाह रहा हूँ. धार्मिक और सांस्कृतिक सहिष्णुता की अंतिम ऊंचाइयां मेरे धरतीवासियों ने छुई हैं. यहां की संस्कृति “धर्म परिवर्तन में” नहीं बल्कि “मनुष्य के मन को बदलने में” विश्वास करती है. यहां की संस्कृति का संख्या से ज्यादा गुणवत्ता पर विश्वास है.

खैर, भारतीय सहिष्णुता की मैं आप लोगों को चन्द और मिसालें देता हूँ जिससे निश्चित ही बात आपके जहन में पूरी तरह से स्पष्ट हो जाएगी. यह तो आंकड़ों से ही स्पष्ट हो जाता है कि मुस्लिम राष्ट्र न होते हुए भी यहां 22 करोड़ के करीब मुसलमान बसते हैं. फिर भी देश में गजब का एका है. यहां सब-के-सब, फिर चाहे वे किसी भी धर्म के हों, सिर्फ भारतवासी हैं. यहां का हर मुस्लिम एक पक्का भारतीय है. यहां तक कि आज पूरे विश्व पर IS नामक आतंकी संस्था की काली छाया छाई हुई है. IS का असर ऐसा है कि मुस्लिमों की ना के बराबर जनसंख्या होने के बावजूद अमेरिका, ब्रिटेन तथा यूरोपियन देशों के मुस्लिम ना सिर्फ IS से प्रभावित हो रहे हैं बल्कि उसमें शामिल भी हो रहे हैं. और भारत में 22 करोड़ के करीब मुसलमान होने के बावजूद ऐसा ठोस उदाहरण एक भी नहीं है कि यहां के युवा बड़े पैमाने पर IS में शामिल हुए हों. क्यों? क्योंकि यहां का मुसलमान मनुष्य एवं भारतीय पहले है, तथा मुसलमान बाद में. कहने का तात्पर्य यह है कि सहिष्णुता यहां की मिट्टी में है. और यह सहिष्णुता किसी धर्म या जात की मोहताज नहीं. यही क्यों, मैं और उदाहरण देता हूँ. आप सभी जानते ही हैं कि मुगलों ने यहां बाहर से आकर करीब तीन सौ से अधिक वर्षों तक शासन किया. और आपको आश्चर्य होगा कि उन्हें भी आज भारत में उतने ही सम्मान से याद किया जाता है जितने सम्मान से लोग इस धरती के लालों को याद करते हैं. यहां तक कि भारत की राजधानी के अधिकांश प्रमुख मार्ग आज भी तमाम मुगल सम्राटों के नाम से है. वहीं यदि अंग्रेजों की बात करूं तो उनके रहन-सहन तथा उनकी बोल-चाल से आज का भारत पूरी तरह से सराबोर है. यही नहीं, आज के भारत की प्रमुख कामकाजी भाषा भी अंग्रेजी ही है. इसे कहते हैं सहिष्णुता. अब आप ही बताइए मिस्टर

ओबामा कि धार्मिक तथा सांस्कृतिक सहिष्णुता की ऐसी मिसाल आप कहां पाएंगे? बताओ मुझे कोई दूसरा ऐसा उदाहरण, जहां सहिष्णुता की ऐसी छाप दिखती हो?

अब जरा वैश्विक असहिष्णुता पर भी नजर घुमाइए. अंग्रेजी निश्चित ही आज विश्व की प्रमुख भाषा है. आप भी जानते हैं कि तमाम यूरोपियन भाषाएं अंग्रेजी के काफी निकट हैं. यूरोप की सभी भाषाओं की लेखन शैली भी अंग्रेजी है. लेकिन बावजूद इसके वहां कितने लोग अंग्रेजी बोलते हैं? ना के बराबर. क्यों...? क्योंकि वे असहिष्णु हैं. असहिष्णुता का अर्थ ही यह है कि अपनी बात पर अड़े रहना. असहिष्णुता का अर्थ ही है कि दूसरे की अच्छी बातों और विचारों तक को तवज्जो न देना. यही क्यों, आप विश्व के बड़े-बड़े राष्ट्रों “रशिया और चाइना” की बात करें तो वे भी अपनी भाषा, अपने रहन-सहन या अपनी भोजन-शैली का कुछ भी छोड़ना नहीं चाहते. किसी का कुछ कितना ही अच्छा हो, पर वे लोग अपनाएंगे नहीं. ...जबकि मेरे धरतीवासी “सबका सबकुछ अच्छा अपनाने को” हमेशा तत्पर रहते हैं. यही नहीं, अपने में कोई खामी दिखे, तो छोड़ने को भी उतने ही तत्पर रहते हैं. यही सब तो सहिष्णुता के लक्षण हैं. यही कारण है कि विश्व का ऐसा कुछ श्रेष्ठ नहीं जो भारत ने न अपना रखा हो. बस मेरे धरतीवासियों की इसी सहिष्णुता ने मेरा सर विश्व की अन्य धरतियों से हमेशा ऊंचा रखा है. और मैं पूरे विश्व से ऐसी ही सहिष्णुता अपनाने की गुजारिश करता हूँ. मेरी यह बात हमेशा ध्यान रख लेना कि “मेरा-मेरा” करने में कोई मजा नहीं है. जीवन का मजा हर श्रेष्ठ चीज को अपनाने में है.

अतः मिस्टर ओबामा, आपने यहां आकर मेरे धरतीवासियों को सहिष्णुता का सबक सिखाने का जो प्रयास किया, मैं उसे भी सकारात्मक तौरपर ही ले रहा हूँ. और उतने ही खुले हृदय से यहां के धरती की सहिष्णुता बाबत मैं आपको समझाने का प्रयास कर रहा हूँ. मैं आपसे सिर्फ एकबात पूछना चाहता हूँ कि आपने अपनी किसी यूरोपियन देश की यात्रा के दरम्यान वहां के लोगों को असहिष्णुता छोड़कर अंग्रेजी सीखने की नसीहत क्यों नहीं दी? अरे, आपसे तो अपनी सऊदी अरब की यात्रा के दौरान भी वहां के लोगों को सहिष्णु बनने हेतु दो शब्द तक नहीं कहे गए. फिर विश्व की सबसे सहिष्णु धरती पर आकर उसे इतनी आसानी से सहिष्णुता की नसीहत कैसे दे पाए? क्योंकि आप भी तहेदिल से जानते हैं कि यही एकमात्र धरती है जो सही मायने में सहिष्णु है. जो आपकी बात को खुले मन से सुनेगी. बाकी किसी अन्य देश की यात्रा के वक्त आपने सहिष्णुता पर कोई नसीहत कभी नहीं दी, क्योंकि आप जानते हैं कि वे रक्तीभर सहिष्णु नहीं. वहां आपके सीख देने से बवाल खड़ा हो सकता है. यही मेरी धरती के सहिष्णु होने का प्रमाणपत्र है. ...और मैं इसी से संतुष्ट हूँ.

अब हम सहिष्णुता पर चर्चा तो किए जा रहे हैं, परंतु वास्तव में मालूम कितनों को है कि यह सहिष्णुता होती क्या है? शायद बहुत कम लोगों को. और सच कहूं तो यह सहिष्णुता अच्छे से समझाने हेतु ही मैं आज प्रकट हुआ हूँ. क्योंकि सहिष्णुता क्या है और इसका क्या महत्व है, यह हर मनुष्य के लिए समझना बहुत जरूरी है. और इस कड़ी में सबसे पहले मैं सहिष्णुता का महत्व समझाना चाहता हूँ. दरअसल तो कुदरत की ओर से मनुष्य के लिए आनंद में जीने और सफलता पाने हेतु 'सहिष्णुता' एकमात्र महामंत्र है. कोई भी व्यक्ति तबतक सुख और सफलता के शिखर नहीं छू सकता है जबतक कि वह पूरी तरह से सहिष्णु न हो जाए. अतः जिनके भी जीवन में दुःख व असफलता है, वे यह समझ ही लें कि वे कहीं-न-कहीं असहिष्णु हैं ही. यह पक्का सिद्धांत समझ लेना कि मनुष्य के सुख और सफलता का उसकी सहिष्णुता से सीधा ताल्लुक है. दूसरा कोई कारण फिर चाहे आप इसे भाग्य कह लें या भगवान, या फिर चाहे उसकी पारिवारिक या सामाजिक पृष्ठभूमि कह लें; इनमें से कोई भी कारण मनुष्य के दुःख और असफलता हेतु रत्तीभर जवाबदार नहीं है. और यह बात नीचे से ऊपर तक सब जगह पर लागू होती है. यदि पति-पत्नी या प्रेमी-प्रेमिका खुश नहीं है तो इसका भी एकमात्र कारण उनका असहिष्णु होना है. वैसे ही यदि किसी परिवार में क्लेष है तो उसका भी एकमात्र कारण उस परिवार का असहिष्णु होना है. वैसे ही देश और दुनिया का भी है. जो देश जितने संकट में है, निश्चित तौरपर वह उसी मात्रा में असहिष्णु है. मुझे उम्मीद है कि मेरे इतने दावे से कहने के बाद आप सहिष्णुता का महत्व समझ गए होंगे.

अरे, मैं तो भूल ही गया. मेरे इतने कह देने-मात्र से आप कैसे समझेंगे? अभी तो आपको सहिष्णुता का वास्तविक अर्थ तक नहीं मालूम है. तो चिंता क्यों करते हो? वह तो मैं समझा ही दूंगा. अभी तो बस इतना समझ लो कि सहिष्णुता एक बड़ा ही गहरा और महत्वपूर्ण शब्द है. लेकिन दुर्भाग्य से इसके सही मायने ना तो कभी किसी ने समझने की कोशिश की है, और ना ही कभी किसी ने समझाने की. जबकि वास्तविकता यह है कि सहिष्णुता के मायने समझने से ज्यादा महत्वपूर्ण मनुष्य के लिए और कुछ हो ही नहीं सकता है. क्योंकि मनुष्य हो या परिवार, देश हो या समाज; सबके जीवनस्तर का सहिष्णुता से सीधा ताल्लुक है. ...और यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि मनुष्य केवल आज का ही दुखी और असफल नहीं है, वह युगों से दुःख व असफलता की मार झेलता आ रहा है. इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि आज का मनुष्य ही असहिष्णु है...ऐसा नहीं है, वह हमेशा से असहिष्णु रहा है. और सहिष्णुता के एक नहीं हजार पैमाने हैं. हमने तो अबतक उनमें से सिर्फ धार्मिक तथा सांस्कृतिक सहिष्णुता की ही चर्चा करी है. और यहां यह स्पष्ट कर दूं कि सिर्फ इन दो मामलों में ही मेरे धरतीवासी दूसरों से बेहतर हैं. बाकी तो सहिष्णुता के हजारों पैमाने और भी हैं. अन्य किसी मामले में हो न हो परंतु सहिष्णुता के मामले में तो मैं दावे से कह रहा हूँ कि सितारों के आगे कई जहां और भी हैं. अतः मैं अपने धरतीवासियों

से स्पष्ट कर दूँ कि अबतक मुझे पढ़कर भले ही आपने बड़ा गर्व अनुभव किया हो, लेकिन अब सतर्क हो जाओ. सहिष्णुता के ऐसे कई पैमाने हैं जिनमें विश्व के कई देश तुम लोगों से कई गुना श्रेष्ठ हैं. मेरे प्यारे धरतीवासियों, यदि तुम लोग पूरी तरह सहिष्णु होते तो मेरा और तुम्हारा यह हाल थोड़े ही होता! अतः हरकोई एक सीधी बात समझ लेना कि जो कोई सहिष्णुता के जिस पैमाने में श्रेष्ठ है; उसके सुखदायक फल वह भोग रहा है. ऐसे में यह कहने की जरूरत ही नहीं कि जो कोई सहिष्णुता के जिस पैमाने पर फेल है, उसके दुःखदायी परिणाम भी वह भोग ही रहा है. और इसमें मेरे प्यारे धरतीवासियों, तुमलोग भी अपवाद नहीं हो.

मैं जानता हूँ कि मेरी इस बात से पूरे विश्व के कान खड़े हो जाएंगे. कुछ लोग खुश भी होंगे कि चलो...मैं जो अबतक अपने धरतीवासियों की तारीफ कर रहा था, अब उनका नंबर भी लगा दिया. दूसरी ओर भारतवासी चौकन्ने हो जाएंगे कि अभी तो आपके द्वारा करी गई तारीफें सुनकर हम ठीक से गौरवान्वित भी नहीं हो पाए थे कि आपने हमें भी असहिष्णु कहकर एक झटका दे दिया. अब यह सब तो आपलोगों की अपने अहंकार की मात्रा के हिसाब से रिएक्शन हो सकती है, परंतु मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि मैं यहां न किसी को गौरवान्वित करने और ना ही किसी को नीचा दिखाने के लिए यह सब कह रहा हूँ. मेरा मकसद पूरे विश्वसमुदाय को हंसी व खुशी से भर देना है. मैं सबको सुख और सफलता की राह पर लगाने के इरादे से प्रकट हुआ हूँ. और चूंकि असहिष्णुता उसमें सबसे बड़ी बाधा है, सो उसके सही मायने समझाने में लगा हुआ हूँ. चाहता हूँ कि विश्व में सहिष्णुता बढ़े, ताकि विश्व सुखी और संपन्न हो सके. अतः मेरे पक्षपातरहित इरादों पर किसी को शंका करने की जरूरत नहीं है. ...और बावजूद इसके यदि कोई करेगा तो उसकी वह शंका उसके अहंकार को ही प्रदर्शित करेगी, मेरे इरादों को नहीं.

निश्चित ही आपमें से कई लोग कहेंगे कि हम इतने भी गएगुजरे नहीं हैं कि आपको इतना पढ़ने और सुनने के बाद भी आपके इरादों या आपकी करुणा पर शंका करें. हम जानते हैं कि आप हमारे सुख और समृद्धि बढ़ाने हेतु ही यह सारी बातें कह रहे हैं. हां, भाषा कुछ कड़क तथा व्यंगात्मक अवश्य है, परंतु आखिर हमें भी तो चन्द झटकों के बगैर बात समझ में कहां आनेवाली है? चलो, आपने दिल खोलकर इतना कहा तो मैं भी एक बात स्पष्ट कर दूँ, मैं भी यह सारी बातें आप जैसे चन्द समझदार तथा खुले विचार वाले लोगों को कहने हेतु ही प्रकट हुआ हूँ. बाकी तो मैं भी इतना नासमझ नहीं कि हर किसी से मेरी बात समझकर उसे जीवन में उतारने की उम्मीद करूं. क्योंकि मैं जानता हूँ कि असहिष्णुता की कंडीशनिंग बड़ी गहरी व पुरानी है. वह तो है...परंतु अब आप चिंता न करें, अब हम आपकी बात समझने हेतु पूरी तरह से तैयार हैं. ...बल्कि सच कहें तो अब तो हमें उत्सुकता ही रही है कि मनुष्य ऐसा तो कैसा असहिष्णु है कि जिस कारण वह युगों से कष्ट व संकटों में जी रहा है. हम अब वाकई जानना चाहते हैं कि यह सहिष्णुता ऐसी तो कैसी

गहरी सायकोलोजी है कि जिसकी विस्तारपूर्वक कभी चर्चा तक नहीं हुई है? आपसे सच कहें तो हम तो अब यह सहिष्णुता क्या है, यह जानने तथा समझने हेतु जिज्ञासा के परम शिखर पर जा बैठे हैं. हां-हां, तो देर क्या? मैं भी अब सीधे आप लोगों को यह सहिष्णुता क्या होती है, यह समझाने पर आ जाता हूँ.

सहिष्णुता की परिभाषा:

सहिष्णुता की परिभाषा समझने हेतु पहले थोड़ा वास्तव में “मनुष्य क्या है” यह समझना बड़ा जरूरी है. क्योंकि मनुष्य होने के बावजूद “मनुष्य होता क्या है” यह बहुत कम लोगों को मालूम है. सो एकदम सरल भाषा में कहूं तो ‘मनुष्य’ घटनाओं को संजीदगी से देखने व झेलने वाला एक इन्स्ट्रूमेन्ट है. और उसका यह देखना तथा झेलना दो जगह से होता है, एक ‘भीतर’ जिसे आप टाइम यानी ‘मन’ कह सकते हैं, तथा दूसरा ‘बाहर’ जिसे आप स्पेस कह सकते हैं. अब यह तो एक सीधा सत्य है कि जिस किसी के भी भीतर-बाहर जो कुछ भी घट रहा है, उससे वह संतुष्ट नहीं है. और उसका यह असंतुष्ट होना ही उसके जीवन में व्याप्त दुःख और असफलता की उद्घोषणा है. इस लिहाज से सुखी और सफल मनुष्य को परिभाषित किया जाए तो एक ऐसा मनुष्य जो अपने भीतर-बाहर जो कुछ भी घट रहा है उससे ना सिर्फ संतुष्ट है, बल्कि आह्लादित भी है. और जब वह इतना मस्त है तो निश्चित ही फिर वह अपने भीतर-बाहर कुछ भी बदलना नहीं चाहता है. लेकिन ऐसा मनुष्य हजारों में एक मिलता है. सच कहूं तो वही आगे चलकर महान और ऐतिहासिक बनता है. और मैं इतना ही चाहता हूँ कि महान और ऐतिहासिक लोगों की संख्या बढ़े. पृथ्वी स्वर्ग हो जाए. शास्त्रों में कल्पित स्वर्ग की कामनाओं में उसे जीना न पड़े. और उसके लिए “भीतर-बाहर की तृप्ति” मनुष्य की पहली आवश्यकता है. अब आवश्यकता कुछ भी हो परंतु आज का सत्य यह है कि भीतर-बाहर की सम्पूर्ण संतुष्टि अभी आम-मनुष्यों के लिए दूर की बात है. और इसे आम बनाने हेतु पहले आप यह समझ लें कि उसके भीतर-बाहर है क्या? ...तो मनुष्य के भीतर भावों और विचारों का तूफान है तथा बाहर रिश्ते-नाते, वस्तुएं और मान-अपमान का सैलाब है. और उसके दुःख व असफलता का रहस्य ही इतना है कि जो कुछ भी चाहें तथा उम्मीदें उसके भीतर है, बाहर उसके जीवन में ऐसा कुछ नहीं है. ...बल्कि सच तो यह है कि अक्सर बाहर उससे सबकुछ उल्टा है. अब यह भी स्पष्ट है कि उसने अपनी ओर से तो अपनी भीतरी उम्मीदों को पूरा करने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी है. अर्थात् गड़बड़ कहीं-न-कहीं उसमें है जो जीवन उसकी चाहत के अनुसार नहीं गुजर रहा है. और ऐसा है तो निश्चित ही उसे अपने में कुछ बदलाहट की आवश्यकता है. ऐसे में कहने की जरूरत नहीं कि हरेक के जीवन में यह बदलाहट भीतर और बाहर दोनों जगह आवश्यक है. और सहिष्णुता का अर्थ इतना ही है कि जो अपने बेहतर जीवन हेतु भीतर और बाहर दोनों जगह बदलाहट हेतु हर-हमेशा

तैयार रहता है. यह भीतर और बाहर बदलने की तैयारी सहिष्णुता की पहली सीढ़ी है. और यह तय जान लो कि जो बदलाहट को तैयार नहीं, वह सहिष्णु नहीं. और जो सहिष्णु नहीं, उसे जीवन में सिवाय दुःख और असफलता के कभी कुछ नहीं मिलता है. वहीं यह सत्य भी ध्यान रख लेना कि इतिहास में जो भी सफल और महान हुए हैं, वे वो ही लोग हैं जो बेहतरी हेतु हमेशा अपना भीतर-बाहर बदलने को तत्पर रहे हैं. और यह बदलाहट लाते-लाते एक दिन वे जीवन के उस मुकाम पर पहुंच गए जहां से उन्हें भीतर-बाहर कुछ भी बदलने की आवश्यकता नहीं रह गई. यानी फिर उनका सबकुछ सेट हो गया. और यह भीतर-बाहर सबकुछ सेट होने के कारण ही उनसे महान तथा ऐतिहासिक कार्य हुए. अतः सीधी भाषा में समझ लें कि अभी आप अपने को चाहे जो मान रहे हों, आप परफेक्शन से कोसों दूर हैं. और परफेक्शन आएगा तो ही जीवन में सुख और सफलता दस्तक देगी. अतः बेहतरी हेतु बदलाहट को हमेशा तैयार रहें, फिर वह चाहे बाहरी हो या भीतरी. बस यह बदलाहट की तैयारी ही सहिष्णुता भी है, तथा यही सुख-सफलता का एकमात्र मार्ग भी है. सो संक्षेप में इतना स्पष्ट जान लें कि किसी भी प्रकार की जिद्द या दृढ़ता एक ऐसी असहिष्णुता है कि जिसने आपका जीवन बर्बाद करके रखा हुआ है.

चलो इसी बात को मैं “ब्रह्मांड” के उदाहरण से समझाता हूँ. शायद उससे जो मैं कहना चाह रहा हूँ वह समझना आपके लिए आसान हो जाएगा. अब वैसे तो ब्रह्मांड आज से करीब पन्द्रह अरब वर्ष पूर्व अस्तित्व में आ चुका था. लेकिन जब वह अस्तित्व में आया था, तब आज के वर्तमान स्वरूप जैसा नहीं था. उसमें न सूर्य था, न पृथ्वी थी. चारों ओर राख के ढेर-ही-ढेर थे. लेकिन ब्रह्मांड सहिष्णु था. उसकी हर एक चीज सहिष्णु थी. किसी में कोई जिद्द या दृढ़ता नहीं थी. हर कण हरहमेशा बेहतरी हेतु बदलने को तैयार रहता था. और इन्हीं बदलाहटों को स्वीकारते-स्वीकारते सूर्य तथा पृथ्वी अस्तित्व में आए. वे भी एक ही बार में आज के वर्तमान स्वरूप में नहीं आ गए थे. अनेकों बार अस्तित्व में आते ही गुरुत्वाकर्षण के अभाव में वे आपस में टकराकर नष्ट हो गए थे. और बार-बार नष्ट होने से बचने हेतु ही उनमें गुरुत्वाकर्षण पैदा हुआ है. ...तथा तब कहीं जाकर वे आज के वर्तमान स्वरूप में आए हैं. हालांकि विज्ञान अभी कई सत्यों से अनजान है. सो शायद वह तक मेरी इस बात को न समझ पाए. परंतु मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि जो समय और सायकोलोजी का ज्ञान रखते हैं, उनके लिए इस जगत में कुछ भी रहस्य नहीं है. क्योंकि सृष्टि हो या मनुष्यजीवन, सबकुछ “समय और सायकोलोजी के सिद्धांत” से ही चलायमान है. और सृष्टि हो या जीवन, दोनों पर एक ही नियम लागू है. हरहाल में टिकने और बेहतरी हेतु बदलने के सिद्धांत से मनुष्य और यह ब्रह्मांड दोनों बंधे हुए हैं. लेकिन दिक्कत यह है कि ये सारे सिद्धांत सायकोलोजी के विषय हैं, विज्ञान के नहीं. इन सिद्धांतों की चर्चा कोई कृष्ण या लाओत्से जैसे ज्ञानी ही करते हैं. यही कारण है कि कई मामलों में विज्ञान भी भ्रमित है .

खैर, यह सारी चर्चाएं फिर कभी. अभी तो हम वर्तमान चर्चा को ही आगे बढ़ाएं. और आगे समझें यह कि चूंकि टिकने की कोशिश करना तथा अच्छे हेतु बदलने को तैयार रहना यह एक सायकोलोजिकल सिद्धांत है, सो इससे कोई आजाद नहीं है. यही कारण है कि ब्रह्मांड का हरहमेशा अच्छे के लिए बदलाहट हेतु तैयार रहने का यह गुण उसके कण-कण में व्याप्त है. और आप ही देख लो; लोहा और लकड़ी भी इतने सहिष्णु हैं कि अपनी बेहतरी हेतु वे से लेकर गाड़ी-हवाईजहाज” तक सबकुछ बनने हेतु हमेशा तत्पर रहते हैं. यही क्यों, पृथ्वी पर जीवन भी अमीबा तथा बेक्टीरिया के जरिए ही अस्तित्व में आया था. परंतु चूंकि वे भी बेहतरी हेतु हमेशा बदलने को तत्पर थे, सो अरबों वर्षों की अथक बदलाहटों के बाद अंत में उन्होंने भी मनुष्य का स्वरूप धारण कर ही लिया.

कहने का तात्पर्य यह कि ब्रह्मांड हो या जीवन, सबकुछ सहिष्णुता पर टिका हुआ है. जो सहिष्णु है, जो बदलाहट हेतु तैयार है; वह ना सिर्फ टिक जाता है बल्कि परफेक्शन की ओर भी बढ़ता चला जाता है. और जो असहिष्णु है, जो बात-बात में जिद्द व दृढ़ता दिखाता है...वह मिट जाता है. क्राइस्ट यही तो कहते थे कि “जो बचने की कोशिश कर रहा है वह मिटा दिया जाएगा, और जो मिटने को तैयार है वह बचा लिया जाएगा.” (बाइबल, न्यू टेस्टामेन्ट, मैथ्यू, अध्याय-10, गॉस्पेल-39) ...बस यही सहिष्णुता का महान सिद्धांत है. आप स्वयं अपने भीतर झांके. मैंने तो अरबों मनुष्यों को जीते तथा मरते देखा है. मैं तो जानता हूँ, लेकिन मेरे जानने से होगा क्या? समझना तो आपको पड़ेगा. और आप झांके अपने भीतर कि क्या आप वाकई सहिष्णु हैं? नहीं.... आप अपने को, अपने विचारों को, अपनी मान्यताओं को ही नहीं, बल्कि समाज और शास्त्रों को ऐसा तो पकड़ के बैठे हैं कि उससे लाख बेहतर विचार, मान्यता, समाज या शास्त्र आपके सामने क्यों न आ जाएं; आप बदलने को तैयार होते ही नहीं. आप न तो अपने गुणों और आदतों को मिटने देते हैं और न अपनी मान्यताओं और शास्त्रों को. चलो नहीं बदलना चाहते, जिद्दी व दृढ़ हैं, कुएं के मेढ़क की तरह ही जीना चाहते हैं; तो आपकी मरजी. आपके जीवन पर आपका पूरा एकाधिकार है. कर दो उसे बर्बाद...क्या फर्क पड़ता है? कुदरत या मनुष्यता कोई आप ही के भरोसे थोड़े ही चल रही है. परंतु दिक्कत यह है कि आप अपने जिद्दीपन व दृढ़ता को अपने तक ही सीमित नहीं रखते. असहिष्णुता की हद तो आप तब लांघ जाते हैं जब आपसे भिन्न विचार देनेवालों के खिलाफ आप खड़े हो जाते हैं. लेकिन एकबात तय जान लो कि नए के विरोध में खड़े होनेवाला तो कभी पनप ही नहीं सकता है. बाहर तो वह कुछ छोटा-मोटा पा भी ले, परंतु भीतर तो वह हमेशा फ्रस्ट्रेटेड ही रहेगा. ...और फ्रस्ट्रेशन में जीना भी कोई जीना है?

अतः मेहरबानीकर थोड़ा गौर करो कि क्राइस्ट क्या कह रहे थे, और क्या समझा रहे थे. वे यही तो कह रहे थे कि मैं एक नया संदेश लाया हूँ. तुम लोग जिद्द मत करो. सहिष्णु बनो...और उसे अपनाओ. पुरानी बातों में जो भी खामियां हैं, उन्हें दूर करो. जो इन नई बातों

के अनुसार अपने को ढालने तथा अपनी पुरानी मान्यताओं को मिटाने को तैयार नहीं होगा, वह मिट जाएगा. वे कह-कहकर थक गए कि मेरा विश्वास करो, मेरा अपना इसमें कोई स्वार्थ या कोई अहंकार नहीं. लेकिन मनुष्य सहिष्णुता लाए कहां से...? उसने क्राइस्ट की बातें नहीं मानी तो नहीं ही मानी. खैर, यहां तक भी ठीक था, परंतु असहिष्णुता की हद तो यह कि उल्टा उन्हें सूली पर ही लटका दिया. और आज जो करोड़ों लोग यह मान रहे हैं कि वे क्राइस्ट के फॉलोवर हैं, उन्हें पूज रहे हैं, तो वे भी अपनी गलतफहमी दूर ही कर लें. क्योंकि वे क्राइस्ट की नहीं, बल्कि काफी हद तक बाइबल की बातें मान रहे हैं. और बाइबल क्राइस्ट ने नहीं लिखी है. और जहां तक क्राइस्ट का सवाल है तो उन्होंने तो “जीवन व प्रकृति” के चन्द वे सिद्धांत दिए हैं जो कभी नहीं बदलने वाले. ...जो सनातन हैं. बाकी की बातें तो क्राइस्ट की हो या किसी की भी, वक्त के साथ बदल ही जाती है. चेतना हो या ब्रह्मांड, यहां रोज-रोज सबका विकास होता ही है. अतः “क्राइस्ट, बुद्ध या कृष्ण” कोई भी क्यों न हों, उनकी सामान्य बातों को भी दृढ़तापूर्वक पकड़कर बैठना एक तरीके की मूर्खतापूर्ण असहिष्णुता ही है. जब यहां सब सुधार और विकास पर है तो भला मनुष्य चेतना उसमें कैसे अपवाद हो सकती है? एक सीधी बात क्यों नहीं समझते कि पूरा विश्व जिन-जिनकी बातें बड़ी दृढ़तापूर्वक पकड़े बैठा है, वे सब भी अंत में तो पैदल और गाड़ों में ही घूमा करते थे. आज की इस वैज्ञानिक प्रगति में “उनकी बातों या उनके कर्मों का” कोई योगदान नहीं. अतः यह समझ लो कि मनुष्य चेतना एक ऐसी बहती धारा है, जिसका निरंतर विकास होता है. परंतु उसके बावजूद वक्त की धारा के साथ न बहना तथा व्यर्थ या गलत साबित हो जाने पर भी पुराने को पकड़कर बैठे रहना एक ऐसी असहिष्णुता है, जो विकास के सारे द्वार बंद कर देती है. यह ध्यान रख ही लेना कि हर नए युग के साथ पुरानों से बेहतर कहनेवाले आते ही रहे हैं, और आते ही रहेंगे. और फिर पुरानी शराब श्रेष्ठ हो तो भी उसे युग के हिसाब से प्रासंगिक बनाने हेतु और कुछ नहीं तो नया लेबल तो लगाना ही पड़ता है. लाख अच्छी होने पर भी यदि युग अनुसार शराब को ढाला न गया हो तो वह सकारात्मक परिणाम कभी नहीं ला सकती, वह हैंगओवर ही करेगी. और आज विश्व में अधिकांश लोग एक या दूसरे प्रकार के हैंगओवर का शिकार हैं ही.

सच कहूं तो मुझे तो समझ में नहीं आता कि आपलोग मनुष्य होकर भी सहिष्णुता के मामले में क्यों वस्तुओं से भी गयागुजरा व्यवहार करते हो? यदि आप ही की तरह पदार्थ भी कहे कि हमारे पूजनीय देवताओं के जमाने में जब हमारा उपयोग कभी गाड़ी या हवाईजहाज बनाने में नहीं हुआ, दवाइयां बनाने में नहीं हुआ, मशीन तथा फैक्टरियां बनाने में नहीं हुआ; तो फिर आज हम इन सबमें रूपांतरित होने हेतु कैसे राजी हो जाएं? इससे हमारा धर्म भ्रष्ट नहीं हो जाएगा? क्या इससे महान देवताओं का अपमान नहीं होगा? हम तो बस रथ तथा गाड़ों में ही रूपांतरित होंगे जिनमें हमारे देवता घूमा करते थे. सोचो, तो क्या होगा? लेकिन सद्भाग्य से ऐसा नहीं हो रहा है. क्योंकि सारे-के-सारे पदार्थ सहिष्णु हैं. अपने

बेहतर रूपांतरण हेतु हमेशा तत्पर रहते हैं. वे जानते हैं कि उन्हें रूपांतरित करनेवाले मनुष्यों की चेतना का दिन-ब-दिन विकास हो रहा है. और उनके विकास के साथ हमें भी रोज-रोज विकास के नए अवसर मिल रहे हैं. हमें भी गाड़ों से उठकर गाड़ियों और हवाईजहाजों में रूपांतरित होने के मौके मिल रहे हैं. अतः मेहरबानीकर कुछ तो शर्म करो! सहिष्णुता के मामले में वस्तुओं से भी गयागुजरा व्यवहार क्यों करते हो? और फिर मैं जो कह रहा हूँ वह चारों ओर आप स्पष्टतापूर्वक देख सकते हैं. असहिष्णुता का परिणाम किसी से छिपा नहीं है. वह सबकी आंखों के सामने है. जो देश और जो समाज जितना असहिष्णु है, जो पुराने को जितनी जोर से कट्टरतापूर्वक पकड़े बैठा है; वह देश और समाज आज उतना ही पिछड़ा हुआ है. और कौन...कितना पिछड़ा हुआ है; तथा कौन...कितनी जोर से पुरानी चीजों को पकड़े बैठा है; यह मुझे विस्तार से कहने की जरूरत नहीं. और फिर मैं किस मुंह से कहूँ, मैं तो खुद इस असहिष्णुता का शिकार हूँ. मेरी धरती पर ऐसे लोगों की कहां कमी है जो पुराने को कट्टरतापूर्वक पकड़े नहीं बैठे हैं. और उनकी असहिष्णुता का हर्जाना वे और मैं, दोनों भुगत ही रहे हैं. ...हालांकि मुझे एक बात से संतोष है कि अब हालात मेरी धरती के भी बदल रहे हैं तथा अन्य धरतियों के भी बदल रहे हैं.

और फिर मैं यह सब बातें कहता भी नहीं, यदि आप कुछ-न-कुछ मात्रा में सहिष्णु नहीं होते. खासकर शारीरिक जरूरतों तथा बदलाहटों के मामले में तो अधिकांश लोग सहिष्णु हैं. मौसम बदलने के साथ ही सबके कपड़े पहनने का ढंग बदल जाता है. गरमी आते ही जहां सब कॉटन के शर्ट व टी-शर्ट पहनते हैं, वहीं ठंड आते ही सबकोई कोट पहनने पर उतर आते हैं. दवाई भी बीमारी के हिसाब से चेन्ज कर ही देते हैं. ऐसा नहीं है कि एकबार सरदर्द की दवाई खाई तो हर बीमारी में सरदर्द की ही दवाई खाए चले जा रहे हैं. नहीं, इन सब मामलों में यहां सभी सहिष्णु हैं. मौसम व परिस्थिति अनुसार सभी तुरंत बदल जाते हैं. परंतु जब सवाल मानसिक बदलाहट का आता है, तो असहिष्णु हो जाते हैं. दृढ़ता पर उतर आते हैं.... जब भी सवाल वक्त के अनुसार विचारों, मान्यताओं, सिद्धांतों या शास्त्रों को बदलने का आता है, तो अड़ जाते हैं. बात जब अपने गुण व आदतें बदलने पर आती है तो पूरी तरह से असहिष्णु हो जाते हैं. यही कारण है कि शरीर तो एकबार सबका साथ दे देता है, क्योंकि वहां वे सहिष्णु हैं; परंतु मानसिक तौरपर यहां हरकोई कमजोर व परेशान है. लेकिन वे भूल जाते हैं कि ना सिर्फ जीवन मानसिक है, बल्कि जीवन का आधार भी मानसिक विकास पर ही टिका हुआ है. और चूंकि मानसिक तौरपर अधिकांश लोग असहिष्णु हैं, इसीलिए हजारों में एक सुखी और सफल है. तथा कहने की जरूरत नहीं कि वो वही हैं, जो मानसिक तौरपर सहिष्णु हैं.

सो, संक्षेप में समझें तो चेतना का समय के साथ विकास है, जैसे ब्रह्मांड का समय के साथ फैलाव है. और सहिष्णुता है...चेतना के होते विकास के साथ अपने में बदलाहट लाने हेतु तैयार रहना. इसे सामान्य शब्दों में कहूं तो समय के अनुसार अपने को ढालने हेतु

तैयार रहना व ढाल लेना, सहिष्णुता है. और यह सहिष्णुता है, तो ही विकास है. तो ही सुख व आनंद है. ...वरना अशांति और विनाश 'भाग्य' है.

सहिष्णुता के प्रकार:

अब मैं सीधे सहिष्णुता के प्रकारों पर आता हूँ. सहिष्णुता एक व्यापक शब्द है. जीवन से संबंधित ऐसा कोई विषय नहीं या ऐसी कोई क्रिया नहीं जिसके अपने सहिष्णुता के पैमाने न हो. अर्थात व्यक्ति हो, समाज हो या देश हो; सभी कुछ मामलों में सहिष्णु हो सकते हैं...तथा कुछ में असहिष्णु. कोई पूरी तरह से हर मामले में सहिष्णु हो, ऐसी मिसालें कम ही मिलती हैं. और सहिष्णुता का महत्व यह कि जो कोई भी जिस-जिस मामले में जितना सहिष्णु है, उस-उस मामले में वह अपनी सहिष्णुता का अच्छा फल भोग रहा है. और ठीक इससे उल्टा भी सत्य है कि जो यहां जिस मामले में जितना असहिष्णु है, वह वहां उसका हर्जाना भी भोग ही रहा है. फिर चाहे वह व्यक्ति हो, परिवार हो, धर्म या समाज हो, या फिर कोई देश ही क्यों न हो? कहने का तात्पर्य यह कि जीवन का सीधा ताल्लुक मात्र और एकमात्र...सहिष्णुता से है. और मुझे लाखों वर्षों का अनुभव है. मैंने अनेक युगों को आते और जाते देखा है. यही क्यों, मैंने अनेक प्रकार के मनुष्यों को भी तथा उनके जीवन को भी देखा है. अतः सहिष्णुता तथा उसके महत्व को मुझसे बेहतर कोई नहीं जान सकता है. सो मेहरबानीकर मेरी बातों को समझिए और जीवन में उतारिए. यह समझ ही लीजिए कि हर मामले में सहिष्णुता बढ़ाए बगैर ना तो आपका और ना ही आपके परिवार, समाज या देश का उद्धार होनेवाला है. सो अब मैं सीधे भिन्न-भिन्न जगहों पर व्याप्त सहिष्णुता तथा उसके महत्व पर चर्चा प्रारंभ करता हूँ. साथ ही, मैं उसके परिणामों पर भी प्रकाश अवश्य डालूंगा ताकि हर व्यक्ति, हर परिवार, हर समाज, हर धर्म तथा हर देश को यह अंदाजा लग जाए कि सहिष्णुता के मामले में वे कहां खड़े हैं?

धार्मिक सहिष्णुता:

अपनी बात की शुरुआत मैं धार्मिक सहिष्णुता से करता हूँ. क्योंकि कायदे से धर्म का आधार ही सहिष्णुता है. लेकिन दुर्भाग्य से हो इससे उल्टा रहा है. असहिष्णुता व्यापक पैमाने पर अगर कहीं फैली हुई है, तो वह धर्मों में ही है. और इसका भी एक कारण है. दरअसल जिन्हें हम धर्म समझ रहे हैं, वे धर्म नहीं बल्कि भिन्न-भिन्न संप्रदाय हैं. और संप्रदायों का धर्म से कोई लेना-देना नहीं. धर्म का ताल्लुक मनुष्य के जीवन से है. धर्म का ताल्लुक मनुष्यजीवन में सुख, शांति और सफलता बढ़ाने से है. जबकि संप्रदायों को सिवाय अपने अहंकार के किसी की नहीं पड़ी है. उन्हें सिर्फ अपने ईश्वर, अपने शास्त्र, अपनी मान्यताएं, अपने क्रियाकांडों से मतलब है; और वह भी इसलिए कि उनकी दुकानें चमकती रहे.

अब यहां समझने लायक बात यह है कि मनुष्य के जीवनस्तर को सुधारने की बातें व फॉर्मूले अलग-अलग नहीं हो सकते हैं. वे अलग-अलग हैं भी नहीं. क्राइस्ट, कबीर, कृष्ण या लाओत्से ने जो सूत्र कहे हैं, वे सभी युगों के सभी मनुष्यों का हित करनेवाले हैं. उन महान लोगों के सूत्रों में जाति, धर्म या देश का कोई भेद नहीं. ना तो क्राइस्ट ने कभी क्रिश्चियनिटी की बात कही है, और ना ही कृष्ण ने कभी हिंदुइज्म की. क्राइस्ट तो साफ कहते थे “जो चाहे सो आवे”. अतः यह स्पष्ट समझ लें कि क्राइस्ट, कबीर, कृष्ण, लाओत्से, बुद्ध ये सभी स्पीरिच्युअल गुरु थे. सभी बिना किसी भेदभाव के मनुष्य के जीवन को सुख और सफलता से भरने हेतु प्रयासरत थे. और जीवन का यह नियम है कि वह रोज बढ़ता भी है तथा बदलता भी है. और इस बदलते जीवन के साथ ही युग के अनुसार जीवन सुधारने के नए फॉर्मूले भी आते चले जाते हैं. और इस प्रसंग में खास बात यह है कि “क्राइस्ट, कृष्ण, कबीर, लाओत्से और बुद्ध” सभी ने बिना अपवाद के पुरानी चली आ रही बातों तथा मान्यताओं से अलग चन्द नई बातें कही. क्राइस्ट ‘यहूदी’ घर में पैदा होने के बाद भी यहूदी पाखंडों के खिलाफ खड़े हो गए. हिंदू घर में पैदा होने के बावजूद बुद्ध ने हिंदू परंपराओं के विपरीत सिद्धांत दिए. यही कमाल लाओत्से और कबीर ने भी करा. और कृष्ण की कही “भगवद्गीता” भी अपने समय के किन्हीं शास्त्रों से मेल नहीं खाती थी. भगवद्गीता में तो उन्होंने एक नई ही सनातन सोच दी. और निश्चित ही उसके लिए उन्हें युगों तक सलाम किया जाएगा. और कृष्ण के तो जीने का तरीका भी सबको रास आए ऐसा नहीं था. खैर महत्वपूर्ण बात यह कि “कृष्ण, क्राइस्ट, लाओत्से, बुद्ध, कबीर” वगैरह सभी की बातों में एक समानता थी; और वह यह कि इनमें ना सिर्फ सांप्रदायिक बातों का अभाव था, बल्कि क्रियाकांडों का सख्त विरोध भी था. यानी इन सबकी बातों में मनुष्यों से...मनुष्यों के किसी भी प्रकार के भेद का पूर्णतः अस्वीकार था. साथ ही झूठे आसरे-आश्वासनों का भी इनकी बातों में समावेश नहीं था.

अब मैं कहना सिर्फ इतना ही चाह रहा हूँ कि स्पीरिच्युअलिटी समझना सहिष्णुता है, तथा संप्रदायों में मानना तथा उसके आधार पर मनुष्यों को बांटना असहिष्णुता है. स्पीरिच्युअलिटी हर नए का स्वागत करती है, जबकि सांप्रदायिकता कट्टर होती है. स्पीरिच्युअल व्यक्ति नए की खोज करता है, जबकि सांप्रदायिक मानसिकता के व्यक्ति पुराने को कट्टरतापूर्वक पकड़े रहते हैं. और मैं पहले ही कह चुका हूँ कि इसका हर्जाना सबको यहां भुगतना पड़ रहा है. क्योंकि सहिष्णुता ही जीवन में सुख और सफलता का एकमात्र मार्ग है. और यही कारण है कि अधिकांश सफल और महान लोग हमें नास्तिक दिखाई देते हैं. दरअसल वे नास्तिक नहीं होते, वे स्पीरिच्युअल होते हैं. लेकिन सामान्य मान्यता में चूंकि आस्तिकता-नास्तिकता को संप्रदाय से जोड़कर देखा जाता है, इसलिए वे भी अपने को नास्तिक कहते हैं. क्राइस्ट को भी नास्तिक मानने के कारण ही तो सूली पर लटकाया गया था. बुद्ध को भी नास्तिक ही कहा जाता था. वहीं बिल-गेट्स से लेकर

एडीसन जैसे महान लोग भी स्वयं को नास्तिक ही कहते हैं। लेकिन मैं स्पष्ट कर दूं कि इनमें से कोई नास्तिक नहीं, बात इतनी ही है कि वे सांप्रदायिक नहीं हैं। वे कट्टर नहीं, स्पीरिच्युअल हैं। अतः आप वाकई यदि सहिष्णु होना चाहते हैं तो सबसे पहले आस्तिकता और नास्तिकता की परिभाषा ठीक कर लो। जो स्पीरिच्युअल है वह आस्तिक है, और जो संप्रदायों में बंटा है वह नास्तिक है। और यह परिभाषा बनाए बगैर विश्व कभी भी “वास्तविक आस्तिक और नास्तिक” के भेद को नहीं समझ पाएगा।

खैर, उपरोक्त विश्लेषण के बाद अब यह कहने की जरूरत नहीं कि जो व्यक्ति, जो परिवार, जो समाज तथा जो देश जितना स्पीरिच्युअल है; उतना ही वह सुखी भी है और विकसित भी। क्योंकि स्पीरिच्युअल होने का अर्थ ही इतना है कि जीवन के हित में कहीं जानेवाली हर नई बात को सुनना, समझना और उतारना। फिर वह चाहे आपके विचारों, शास्त्रों और मान्यताओं से मेल खा रही हो... या न खा रही हो। ऐसे में यहां यह कहने की भी जरूरत नहीं कि कोई व्यक्ति ही कभी स्पीरिच्युअल हो सकता है। बहुत हुआ तो शायद कभी... कोई पूरा-का-पूरा परिवार स्पीरिच्युअल हो जाए। परंतु कोई “पूरा समाज, संप्रदाय या देश” कभी भी स्पीरिच्युअल नहीं हो सकता है। इनकी तो नींव ही असहिष्णुता, अर्थात् भेद पर रखी होती है। और यही कारण है कि सुखी और सफल व्यक्ति तो हजारों हैं, परंतु सुखी व सफल परिवार ना के बराबर हैं। और जहां तक किसी समाज या देश की बात है, तो वह तो युगों से दुःखी व असफल थे, आज भी हैं; और नहीं सुधरे तो वे सब तो आगे भी दुःखी और असफल ही रहेंगे। दुनिया का कोई भी संप्रदाय चाहे जैसे दावे कर रहा हो, परंतु जमीनी हकीकत यही है कि बिना अपवाद के हर संप्रदाय के अधिकांश लोग दुःखी और असफल ही हैं।

अब मैं बात को ठीक से समझाने हेतु देशों की चर्चा कर लेता हूँ। और देशों की चर्चा करें तो हर देश में भिन्न-भिन्न प्रकार की धार्मिक सहिष्णुता और असहिष्णुता देखी जा सकती है। यूरोप और अमेरिका की बात करी जाए तो वहां दोनों प्रकार के लोग हैं। एक ओर जहां इन देशों में सांप्रदायिक कट्टरता मौजूद है, तो वहीं दूसरी ओर वहां स्पीरिच्युअल सहिष्णु लोगों की भी कोई कमी नहीं है। लेकिन इन देशों की सबसे दिलचस्प बात यह है कि यहां के अधिकांश लोग बीच में हैं। यानी ना तो वे पूरी तरह से सांप्रदायिक कट्टर हैं, और ना ही वे पूरी तरह से स्पीरिच्युअल हैं। वे जरूरत पूरता सांप्रदायिक बातों को भी अपना लेते हैं, तथा वहीं दूसरी ओर वे जीवन को सुधारने वाली नई बातों का स्वागत करने से भी नहीं चूकते हैं। यदि गौर से देखा जाए तो इन देशों में स्पीरिच्युअलिटी व सांप्रदायिक कट्टरता बराबरी पर मौजूद है। और देश को विकास की पटरी पर लाने हेतु इतना भी काफी है। इन देशों के आर्थिक विकास में सबसे बड़ा योगदान ही उनकी इसी उदार स्पीरिच्युअल सोच का है जो सांप्रदायिक कट्टरता का मुखरता से विरोध भले ही न करती हो, परंतु ऐसों की उपेक्षा कर अपना काम निकालना उन्हें अच्छे से आता है। वहीं कुछ देश ऐसे भी हैं जहां न

सांप्रदायिक कट्टरता है और न स्पीरिच्युअलिटी ही. वे जीवन को सिर्फ प्रेक्टिकल लेते हैं. “संप्रदाय और स्पीरिच्युअलिटी” दोनों उन्हें हवाई बातें लगती हैं. इन्हें आप कर्मवादी कह सकते हैं. वे मात्र अपनी मेहनत के बल पर बढ़ने और जीने में विश्वास करते हैं. रशिया, चाइना तथा ऐसे ही अनेक देशों को आप इस श्रेणी में रख सकते हैं. इसके अलावा मुस्लिम देश हैं, सांप्रदायिकता जिनके जीने का प्रमुख उद्देश्य भी है तथा जीने का मुख्य आधार भी है. यही कारण है कि ये देश विकास के मामले में काफी पीछे रह गए हैं. इन देशों की सबसे बड़ी दिक्कत यही है कि उठ रही स्पीरिच्युअल आवाजों को भी वहां उठने से पहले ही दबा दिया जाता है.

भारत की धार्मिक सहिष्णुता और असहिष्णुता:

खैर, अब मैं सीधे भारतीय धार्मिक सहिष्णुता तथा असहिष्णुता पर आ जाता हूँ. और मैं अपने धरतीवासियों से निवेदन करूंगा कि वे इसे समझें. क्योंकि आपका जीवन, मेरा जीवन है. आपका विकास, मेरा विकास है. और मैं कह ही चुका हूँ कि जिस तरह मनुष्य के जीवन का उसकी सहिष्णुता से सीधा ताल्लुक है, वैसे ही किसी भी देश के भविष्य का भी वहां की “प्रजा की सहिष्णुता-असहिष्णुता” से सीधा ताल्लुक है. और इस संबंध में पहले मैं आप लोगों की सहिष्णुता के बाबत ही चर्चा कर लेता हूँ. मेरे प्यारे धरतीवासियों, निश्चित ही धार्मिक सहिष्णुता का आप लोगों का इतिहास पुराना है. अष्टावक्र और कृष्ण से लेकर बुद्ध, कबीर, दयानंद आदि सबकी नई बातों का आपने हमेशा स्वागत किया है. और महत्वपूर्ण यह है कि इनकी बातें सिर्फ स्वागत तक सीमित नहीं रखी गई है, आपमें से अनेकों ने उनकी नई समझाइशों को समझा भी है तथा जीवन में उतारा भी है. और नई बातें सुनने, समझने व जीवन में उतारने का यह सिलसिला आज भी जारी है. आज भी अनेकों लोग नई बातें कहते हैं जिन्हें आपमें से कई सहिष्णु लोग सुनते भी हैं, तथा जीवन में उतारते भी हैं.

यहां एक बात और कह दूं कि स्पीरिच्युअलिटी, यानी “जीवन तथा मन के विज्ञान की” जितनी गहराई में भारतीय मनोवैज्ञानिक उतरे हैं, जितना उन्होंने जीवन तथा उसके हर पहलू को जाना और समझा है; वह अपनेआप में एक मिसाल है. मैं यह जानता हूँ और बिना पक्षपात के दावे से कहता हूँ कि इस विषय में पूरे विश्व का कुल ज्ञान भी भारतीय ज्ञान के सामने अभी बौना है. मेरी इस धरती पर कृष्ण और अष्टावक्र जैसे महान ज्ञानी पैदा हुए हैं जिन्होंने ब्रह्मांड की उत्पत्ति से लेकर मनुष्यजीवन से संबंधित तमाम नियमों को बखूबी समझाया है. जिन्होंने कर्म और उसके फल के तथा जन्म और पुनर्जन्म के सिद्धांत भी विस्तारपूर्वक कहे हैं. निश्चित ही यह सारी बातें मनुष्य चेतना की अंतिम ऊंचाई की बातें हैं. और मुझे इन ज्ञानियों पर गर्व है. मैं चाहता हूँ कि ऐसे महाज्ञानियों की बातें पूरा विश्व जाने, समझे और अपने अन्दर उतारे. मैं अपने धरतीवासियों से भी यह निवेदन करता हूँ कि वे

कृष्ण और अष्टावक्र की गीता को पूरे विश्व में फैलाएं. मैं यही उम्मीद यहां की सरकार से भी करता हूँ. हालांकि वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इस दिशा में चन्द कदम जरूर उठाए हैं, परंतु वे पर्याप्त कतई नहीं हैं. यहां मैं एक और बात स्पष्ट कर दूँ कि भगवद्गीता हो या अष्टावक्र गीता, ये दोनों मनुष्य-मात्र के उद्धार हेतु दिया गया ज्ञान है. इनका हिन्दुइज्म या अन्य किसी भी प्रकार की सांप्रदायिकता से कोई मतलब नहीं. हवाई क्रियाकांडों का इनमें दूर-दूर तक कोई उल्लेख नहीं. ...उल्टा हवाई क्रियाकांडों और सांप्रदायिकता का इनमें पुरजोर विरोध ही है. अतः कायदे से तो ये दोनों “विश्व-ग्रंथ” का गौरव पाने के अधिकारी हैं. परंतु दुर्भाग्य से इन दोनों में से कोई ग्रंथ आजतक “राष्ट्रीय-ग्रंथ” तक नहीं बन पाया है.

क्यों...? ...इतने महान ग्रंथों के प्रति मेरे ही धरतीवासियों की ऐसी असहिष्णुता क्यों? इसका एकमात्र कारण यह है कि ऐसे महान ग्रंथों को भी तुम लोगों ने सांप्रदायिक रंग दे दिया है. सत्य तो यह है कि जो इन दोनों गीताओं को हिंदू ग्रंथ कहता है वह इनका अपमान कर रहा है. और इसका परिणाम यह आ रहा है कि यहां इन ग्रंथों के नाम पर भी राजनीति हो रही है. बीच-बीच में भगवद्गीता को ‘राष्ट्रीय-ग्रंथ’ घोषित करने की आवाजें उठती हैं, परंतु दुर्भाग्य से उनमें भावना या समझ की जगह सांप्रदायिकता की ही झलक मिलती है. यह अंधा भी देख सकता है कि ये आवाजें सिर्फ राजनैतिक उद्देश्य से उठ रही हैं. अब जब भगवद्गीता को ‘राष्ट्रीय-ग्रंथ’ का दर्जा देने की मांग करनेवालों की स्वयं की नीयत साफ नहीं, तो ऐसे में इसके विरोध में आवाजें उठना भी स्वाभाविक ही है. अतः यह स्पष्ट समझ लो कि भगवद्गीता को राष्ट्रीय-ग्रंथ घोषित कराने के पक्ष और विपक्ष में उठ रही दोनों आवाजें सिवाय तुच्छ राजनैतिक स्वार्थ साधने के, और कुछ नहीं. और इससे ज्यादा पीड़ादायक बात मेरे लिए और क्या हो सकती है कि मेरी धरती के सर्वश्रेष्ठ लाल ‘कृष्ण’ द्वारा कहे गए विश्व के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ का भी ना सिर्फ राजनैतिक इस्तेमाल किया जाए, बल्कि उसे सांप्रदायिक रंग भी दे दिया जाए.

अरे! अष्टावक्र, कृष्ण, बुद्ध, क्राइस्ट, कबीर, दयानंद, विवेकानंद जैसे महान ज्ञानियों को किसी संप्रदाय या किसी देश से जोड़कर देखना इनका सीधा-सीधा अपमान है. यह तो इनके प्रति असहिष्णुता की हद है. अतः भले ही भारत का धार्मिक सहिष्णुता का इतिहास गौरवशाली हो, परंतु ध्यान रख लो कि इसमें चन्द मुट्ठीभर लोगों का ही योगदान है. लेकिन अब मैं चाहता हूँ कि मेरी धरती के सभी लोग ‘धर्म-सहिष्णु’ बनें. और उसकी पहली सीढ़ी यह कि महान लोगों को सांप्रदायिक रंग में कभी मत रंगो, चाहे वे भारत के हों या विश्व के अन्य किसी देश के. हालांकि एक निवेदन और कर दूँ: भगवद्गीता को विश्व में फैलाओगे तब फैलाओगे, और उसे राष्ट्रीय-ग्रंथ के तौरपर भी स्वीकारोगे तब स्वीकारोगे; लेकिन कम-से-कम तबतक भगवद्गीता में वर्णित गुणों को तो अपने जीवन में उतारो. कृष्ण की इतनी पूजा करते हो, उन्हें इतना मानते हो तो उनके लिए इतना तो करो. सच कहता हूँ कि भगवद्गीता में

कृष्ण जिन-जिन गुणों की चर्चा कर रहे हैं उनमें से दस-बीस टका गुण भी जीवन में उतार लिए होते तो आज आपका और मेरा यह हाल कतई नहीं होता.

सो, सौ बातों की एक बात यह कि सहिष्णुता का गौरवशाली इतिहास होने से या चन्द लोगों के सहिष्णु होने से, आप सभी को सहिष्णु होने का सर्टीफिकेट नहीं मिल जाता है. अतः मेहरबानीकर अपने में स्थित असहिष्णुता को पहचानें. श्रेष्ठ ज्ञान के प्रति खुले रहें ताकि आप लोगों का जीवनस्तर सुधरे. और मैं चन्द लोगों पर ही नहीं, आप सभी पर भी गर्व कर सकूँ. और फिर आपलोगों को तो सहिष्णुता के फायदों का अंदाजा भी होना ही चाहिए. आप लोग यह बात क्यों भूल जाते हैं कि यदि आप लोगों का सहिष्णुता का गौरवशाली इतिहास है, यदि एक-से-एक ज्ञानी इस धरती पर पैदा हुए हैं; तो उसका आपलोगों को भरपूर फायदा भी मिला है. जाने-अनजाने इन ज्ञानियों की बातों ने आपके जीवन पे अनेक सकारात्मक प्रभाव डाले ही हैं. और यह बात जो मैं कहने जा रहा हूँ, वह आपके साथ-साथ पूरे विश्व को भी समझने की जरूरत है. सहिष्णुता एक ऐसी संजीवनी है जो जीवन का रंग ही बदल देती है. आप कहेंगे ठीक है, आप सबकी जिज्ञासा तो बढ़ा रहे हैं, परंतु हमें ज्ञानियों के कारण क्या लाभ मिला है...यह नहीं बता रहे हैं.

अरे, तो बताता हूँ न कि आपलोगों को अपने गौरवशाली सहिष्णु इतिहास का क्या लाभ मिल रहा है. बस आप लोग यह महान विश्लेषण समझने हेतु तैयार तो हो जाइए. अच्छा चलो, भारत के आर्थिक, सामाजिक तथा भौगोलिक हालात से तो हर कोई कम या ज्यादा वाकिफ है ही. यह कोई बहुत बड़ी धरती नहीं है. इसका कुल क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है और उसपर करीब 132 करोड़ की विशाल जनसंख्या का बोझ है. सामने अमेरिका तथा ऑस्ट्रेलिया जैसे राष्ट्र भी हैं जिनके पास जनसंख्या के अनुपात में विशाल धरती है. और आप भी जानते ही हैं कि अमेरिका की 32 करोड़ की आबादी के सामने उसका कुल क्षेत्रफल 98,57,306 वर्ग किलोमीटर है. यानी आबादी भारत से करीब चार गुना कम तथा क्षेत्रफल 3 गुना ज्यादा. ऐसा ही ऑस्ट्रेलिया का भी है. उसकी करीब ढाई करोड़ की आबादी के सामने उसके पास क्षेत्रफल करीब 76,92,024 वर्ग किलोमीटर है. मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि भारतवासी निश्चित ही विकट भौगोलिक हालात में रह रहे हैं. जनसंख्या के हिसाब से जमीन उनके पास नहीं है. और निश्चित ही इसका सीधा असर ना सिर्फ उनके जीवनस्तर पर, बल्कि उनके आर्थिक हालात पर भी पड़ ही रहा है. परंतु फिर भी स्पीरिच्युअलिटी के क्षेत्र में चूंकि यहां एक-से-एक ज्ञानी पैदा हुए हैं, तथा जिनकी कही बातों को यहां के लोगों ने कुछ-न-कुछ मात्रा में अपने जहन में उतारा हुआ भी है; बस उसी ने इतनी विकट परिस्थिति में भी यहां के लोगों का जीवन सम्भाला हुआ है. और उसका सबूत यह कि तमाम विपरीत आर्थिक तथा भौगोलिक हालातों के बावजूद यहां हरकोई ना सिर्फ जीना जानता है, बल्कि दिल खोलकर जीता भी है. इससे सिद्ध हो जाता है कि यदि व्यक्ति में धार्मिक सहिष्णुता हो तो तमाम विपरीत हालातों के बावजूद उसके लिए जीना

आसान हो जाता है. और यह मेरी धरती की संतानों ने सिद्ध किया है. दुनिया के प्रगतिशील देशों में आज जितना फ्रस्ट्रेशन है, सबकुछ होते हुए भी उनके जीवन में हंसी और खुशी का जो अभाव है; वह और कुछ नहीं, उनके स्पीरिच्युअल नॉलेज की कमी के कारण है. यहां तक कि अमेरिका में तो बच्चों तक को बात-बात पर फ्रस्ट्रेशन पकड़ता है. बच्चों द्वारा स्कूलों में गोलीबारी करने तथा कई सहपाठियों की जान लेने के अनेक वाकए यहां हो चुके हैं. यहां तक कि इन तमाम प्रगतिशील मुल्क के युवा हिंसक वीडियो गेम्स में जरूरत से ज्यादा रुचि रखते हैं. हालांकि अब यह बीमारी धीरे-धीरेकर पूरे विश्व में फैलती जा रही है. यहां यह स्पष्ट कर दूं कि हिंसक तथा मारधाड़ के खेलों में रस आना भी भीतर छिपे फ्रस्ट्रेशन की खबर-मात्र है. सो, सौ बातों की एकबात यह कि मनुष्यजीवन बड़ा कीमती है. इसे दिल खोलकर मस्तीपूर्वक जीना तथा प्रगति के शिखर छूना एक कला है. और यह कला धार्मिक सहिष्णुता यानी स्पीरिच्युअलिटी के द्वारा ही विकसित करी जा सकती है. और चूंकि मेरे धरतीवासियों ने स्पीरिच्युअल ज्ञान की तमाम ऊंचाइयां छुई है, अतः मेरा निवेदन है कि पूरा विश्व भारत के इस ज्ञान को समझे और उसे जीवन में उतारे. ...फिर देखें, आपका जीवन किस कदर हसीन हो जाता है. सो, मैं यह बात फिर दोहराऊंगा कि यदि तमाम विपरीत तथा संघर्षपूर्ण परिस्थितियों के बावजूद मेरी धरती का गरीब-से-गरीब व्यक्ति भी मस्ती से जी सकता है, तो सोचो जहां बेहतर जीवन हो वहां स्पीरिच्युअलिटी क्या कुछ नहीं कर सकती है?

खैर, यह सब तो हुई सहिष्णुता की बातें. अब मैं सीधे आप सभी को भारतवासियों की असहिष्णुता का इतिहास बताता हूँ. और मेरे धरतीवासियों, तुम लोग तो पूरी तरह से सावधान हो जाओ. शायद इससे पहले तुम्हें तुम्हारी असहिष्णुता का इतिहास किसी ने नहीं बताया होगा. और यह इतिहास भी युगों पुराना है. लेकिन मैं आज से करीब पांच हजार वर्ष पूर्व से ही यानी महाभारत के युग से ही शुरू करता हूँ. यह युग मेरे जहन में हमेशा के लिए बसा हुआ है, क्योंकि इस युग में मेरी छाती पर एक ऐसे लाल ने जन्म लिया था, जो संपूर्ण था. जो हर बात में बेमिसाल था. जी हां, आप ठीक समझे! मैं कृष्ण की ही बात कर रहा हूँ. उसका बचपन गोकुल और वृन्दावन जैसे छोटे गांव में गुजरा था. ...बड़ी गरीबी में गुजरा था. लेकिन वह बचपन से कर्मठ था. और अपनी इसी कर्मठता के बलपर उसने अपना एक राज्य बनाया... “द्वारका”. उसने राज्य तो बना लिया, वह राजा भी हो गया; परंतु चूंकि वह किसी राजा का पुत्र नहीं था... इसलिए उसे कभी एक राजा के रूप में स्वीकारा नहीं गया. हर दरबार में राजाओं ने उसका ग्वाले और अनपढ़ कहकर अपमान किया. खैर, कृष्ण तो विशाल हृदय के व्यक्ति थे. स्पीरिच्युअलिटी के शिखर पर विराजमान थे. उन्हें क्या फर्क पड़ता था मान और अपमान से. उन्होंने तो हर व्यंग हंसते हुए झेला. जीवन के तमाम संकटों तथा संघर्षों को उन्होंने एक हसीन खेल ही समझा. और उसी का परिणाम है कि आज वे आनंद और उत्सव के प्रतीक के रूप में जाने जाते हैं. लेकिन सवाल यह है कि

जिसने अपनी मेहनत और लगन से अपना शानदार राज्य बनाया हो, उसका तो सम्मान होना चाहिए. मैं तो कहता हूँ कि ऐसे व्यक्ति का सम्मान तो परंपरागत राजाओं से भी ज्यादा होना चाहिए. और यूं भी वे पहले थे जिन्होंने वंश-परंपरा को समाप्त किया था. एक उदाहरण स्थापित किया था कि राजा बनने हेतु राजा का पुत्र होने के बजाए योग्यता ही क्राइटेरिया होना चाहिए. सही मायने में देखा जाए तो प्रजातंत्र की प्रथम नींव उन्होंने ही रखी थी. खैर, यह भी छोड़ो. सबसे बड़ी असहिष्णुता तो उनके साथ यह कि आज भले ही घर-घर में उन्हें भगवान मानकर पूजा जाता है, भले ही उनकी कही भगवद्गीता को श्रेष्ठ ग्रंथ भी माना जाता है; परंतु बावजूद इसके, उस भगवद्गीता के मायने समझने को कोई तैयार नहीं. पूज सब कृष्ण को रहे हैं, परंतु उनके जीवन से सीखने को कोई तैयार नहीं. अतः आप मान ही लो कि कृष्ण के साथ असहिष्णुता का व्यवहार सिर्फ उनके जीते जी ही नहीं हुआ है, बल्कि उनके साथ असहिष्णुता का व्यवहार आज उनके जाने के पांच हजार वर्ष बाद भी जारी ही है. यही क्यों, अभी तो मैंने आप लोगों द्वारा करी गई “धार्मिक-असहिष्णुताओं” की चर्चा प्रारंभ ही की है. आगे कहूं तो क्या आप भूल गए कि कुदरत के कमाल बुद्ध का इसी धरती पर कितना अपमान हुआ था? उन्होंने आपके उद्धार हेतु क्या-कुछ नहीं किया था? अतः सहिष्णुता के मामले में ज्यादा गर्व करने जैसा आपके पास भी कुछ नहीं है. भले ही आप लोगों ने बुद्ध को क्राइस्ट की तरह मारा नहीं, परंतु उन्हें सताया तो जरूर. और फिर सताने के मामले में तो आपने कबीर से लेकर दयानंद तक किसी को कहां छोड़ा है?

चलो छोड़ो, इतिहास में जाने से क्या फायदा. मैं ताजा बातों पर ही आ जाता हूँ. देश आजाद हुआ. कायदे से उसका विभाजन नहीं होना चाहिए था. इसका कारण आप चाहे जो दे दें और इसका इल्जाम आप चाहे जिस पर मढ़ दें; परंतु इस विभाजन हेतु अंत में तो आपसी असहिष्णुता ही जवाबदार है. चलो मेरे दो टुकड़े हो गए...यह दर्द भी मैं सह गया. लेकिन उसके पश्चात आप हिंदुओं और मुसलमानों ने तमाम भाईचारा भुलाकर जो आपसी मारकाट मचाई, उसका क्या? सहिष्णुता के एक लंबे इतिहास को कलंकित किया, उसका क्या? मेरा सर पूरे विश्व के सामने झुका दिया, उसका क्या...? और फिर यह बात यहीं थोड़े ही थमी. मेरे सहिष्णु लाल, मोहनदास करमचंद गांधी जिसने इस धरती को आजाद करवाया, आपने उसी का खून इस धरती पर बहा दिया. अब आपलोग ही बताओ कि मैं किस मुंह से यह कहूं कि मेरे धरतीवासी सर्वाधिक सहिष्णु हैं?

वैसे तो आपकी असहिष्णुता के किस्सों का अंत नहीं है. बाबरी मस्जिद गिराए जाने ने भी मुझे कोई कम कलंकित थोड़े ही किया है. और फिर हुसैन जैसे महान चित्रकार को देश छोड़ना पड़ा, यह बात तो मैं भुलाए नहीं भूल सकता. लाख इच्छा के बावजूद मेरा वह लाल भारत वापस नहीं आ पाया. उसे अपनी अंतिम सांस अपनी ही धरती से दूर लेनी पड़ी. क्या गुनाह था उसका? कलाकार की अपनी एक स्वतंत्र दृष्टि होती है. उसकी दृष्टि को आप अपनी धार्मिक कट्टरता से नहीं देख सकते. ध्यान रखना कलाकार कोई भी हो, चित्रकार हो,

कवि हो या साहित्यकार हो; प्रायः हृदय से भोले होते हैं। उनके भीतर से निकल रही कला में कट्टरता को देखना दुर्भाग्यपूर्ण है। क्योंकि अंत में तो सारी कलाएं कुदरत की ही देन हैं। एक सच्चे कलाकार में खोट देखना, कुदरत में खोट देखना है। यह बात हमेशा के लिए ध्यान में रख लेना कि भगवान के सर्वाधिक निकट अगर कोई होता है, तो वह कलाकार ही होता है। और फिर हुसैन के पूरे एपिसोड में दुःखदाई बात यह कि सहिष्णुता का दावा करनेवाली तथा सबको सहिष्णुता का सबक सिखाने वाली सरकार ने भी कुछ नहीं किया। ...उन्हें कोई प्रोटेक्शन नहीं दिया। जी हां, मैं सीधे तौरपर कांग्रेस की ही बात कर रहा हूँ। हुसैन ने जब देश छोड़ा तब महाराष्ट्र राज्य तथा केन्द्र, दोनों में कांग्रेस की ही सरकारें थीं। अतः कांग्रेस भी समझ ले कि वोटों की राजनीति हेतु ऊपरी सहिष्णुता दिखाना या उसका ढिंढोरा पीटना सहिष्णुता कतई नहीं है।

अब ऐसे तो अनेकों उदाहरण हैं। हर एक की चर्चा करना संभव नहीं। परंतु सौ बातों की एक बात यह कि धार्मिक सहिष्णुता के स्तर पर अभी आप लोगों को भी बहुत कुछ सीखना और बदलना है। सहिष्णुता के मेरे गौरवशाली इतिहास को कलंक न लगे, यह आप लोगों को देखना है। मेरा सर विश्व के सामने न झुके, यह आप लोगों को समझना है। और आशा करता हूँ कि आगे से आपलोग अपने गौरवशाली इतिहास के अनुरूप बर्ताव कर अपनी परंपरा को कायम रखेंगे।

अब आगे इस चर्चा में मैं आपको सांस्कृतिक सहिष्णुता का महत्व बताना चाहता हूँ। क्योंकि इसका सीधा असर मनुष्य के जीवन पर पड़ता है। और जहां तक सांस्कृतिक सहिष्णुता का सवाल है तो उस बाबत मैं कह ही चुका हूँ कि उसमें भारत युगों से बेजोड़ रहा है। और यहां व्याप्त सांस्कृतिक विविधताएं इस बात का सबूत हैं। जितने प्रकार के व्यंजन यहां खाए जाते हैं, उनकी संख्या पूरे विश्व में उपलब्ध व्यंजनों से भी कई गुना ज्यादा है। ऐसा ही यहां पहनी जानेवाली पोशाकों, यहां किए जानेवाले नृत्यों, सुने जानेवाले संगीत तथा मनाए जानेवाले उत्सवों का भी है। और यह सिर्फ इसलिए कि यहां की प्रजा की रग-रग में सांस्कृतिक सहिष्णुता व्याप्त है। यहां ना सिर्फ हर अच्छी कला को सम्भाल कर रखा जाता है, बल्कि यहां हर श्रेष्ठ और नई कला का तहेदिल से स्वागत भी होता है। और यही कारण है कि यहां विश्व के ना सिर्फ सभी श्रेष्ठ व्यंजन खाए जाते हैं, बल्कि विश्वभर के श्रेष्ठ संगीत भी यहां सुने जाते हैं। विश्व का ऐसा कोई नृत्य नहीं जो यहां नहीं किया जाता हो। अतः भारत की सांस्कृतिक सहिष्णुता स्वयं सिद्ध है। अब सवाल उठता है भारतीय जीवन का कि क्या वह भी श्रेष्ठ है। बिल्कुल है! क्योंकि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि सांस्कृतिक सहिष्णुता का सीधा ताल्लुक जीवन से है। और यदि भारत सांस्कृतिक सहिष्णुता के शिखर पर है, तो यहां का जीवन भी श्रेष्ठ होना ही चाहिए। और वह है भी। परंतु कैसे...? यह समझने हेतु पहले आपको जीवन क्या है, यह समझना जरूरी है। और वैज्ञानिक भाषा में कहूं तो जीवन है टाइम और स्पेस के मिलन का नाम। लेकिन शायद आपने कभी जीवन को इस तरीके से समझा ही न हो। यह भी हो सकता है कि आपको पहले किसी ने कभी इस तरीके से समझाया भी न हो। लेकिन अब सरलतम वैज्ञानिक भाषा में समझ लो कि मनुष्य के भीतर और बाहर दोनों जगह बराबरी पर जीवन है। और मनुष्य के भीतर क्या है? मनुष्य के भीतर भावों का तूफान है। और वही ज्यादा महत्वपूर्ण है। क्योंकि मनुष्य भावों के इन उठ रहे तूफानों में आनंद, मस्ती, शांति, संतोष बने रहें, इस हेतु ही जी रहा होता है। चिंता, फ्रस्ट्रेशन, ईर्ष्या, जैसे भावों के तूफान उसे न घेरे, उस हेतु वह चौबीसों घंटे प्रयासरत रहता है। ठीक वैसे ही उसका एक जीवन बाहर भी है। और बाहर क्या है...? बाहर रिश्ते-नाते, साजोसामान, समृद्धि व सम्मान वगैरह हैं। अब वैसे तो दोनों अपनी-अपनी जगह महत्वपूर्ण है। लेकिन जीवन का एक सत्य यह भी है कि एकबार को बाहर वैभव न हो तो चल जाता है, परंतु भीतर अगर भावों के नकारात्मक तूफान उठ रहे हों तो वह उसकी बर्दाश्तगी के बाहर हो जाता है। ऐसे में बाहर उसके पास वैभव हो तो भी वह किसी काम का नहीं बचता है। और आप भी जानते हैं कि बाहर मनुष्य लाख वैभवशाली हो, परंतु यदि उसे भीतर बात-बात पर टेन्शन और फ्रस्ट्रेशन पकड़ता हो तो आप उसका जीवन सफल नहीं मानते हैं। और यह जो मैं कह रहा हूँ यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है। इतिहास ने भी उन लोगों को कभी सफल नहीं माना जो समृद्धि या सत्ता के शिखर पर बैठे होने के बावजूद भीतर से परेशान रहे हैं। परंतु हां, बाहर कुछ न होते हुए भी जिनके भीतर मस्ती के तूफान उठ रहे हैं, उन्हें इतिहास

ने हमेशा सलाम किया है. और ऐसे एक-दो नहीं, हजारों उदाहरणों से इतिहास भरा पड़ा है. इतिहास ने सिकंदर से लेकर हिटलर तक किसी को भी कभी सफल नहीं माना, परंतु सामने बुद्ध, क्राइस्ट तथा कबीर जैसे फकीरों को सफल, महान और ऐतिहासिक माना. अतः असली जीवन भीतर है, यह मैं ही नहीं कह रहा; इतिहास भी इस बात की गवाही दे ही रहा है. ...और यह भीतर का जीवन भारतियों के पास अन्य मुल्कों के मुकाबले काफी बेहतर है.

हालांकि एक बात और समझ लो कि मनुष्य के भीतरी जीवन का इतना महत्व होने के बावजूद मैं तो संपूर्ण मनुष्य उसे ही कहूंगा जो भीतर-बाहर दोनों जगह ऊंचाइयों पर बैठा हो. जैसे मेरा सबसे पसंदीदा लाल... 'कृष्ण'. खैर, अब सभी तो संपूर्ण नहीं हो सकते हैं. तो ऐसे में मैं इतना ही समझाना चाह रहा हूँ कि भीतरी सफलता ज्यादा महत्वपूर्ण है. क्योंकि जीवन का यह सत्य मैं जानता हूँ कि बाहर समृद्धि हो न हो, परंतु मनुष्य के भीतर शांति और मस्ती बने रहना आवश्यक है. और भीतर की शांति और मस्ती पूरी तरह से सांस्कृतिक सहिष्णुता पर टिकी हुई है. बस यही सांस्कृतिक सहिष्णुता का महत्व है और इसीलिए मैं उसकी चर्चा कर रहा हूँ. मनुष्य के बेहतर जीवन हेतु सांस्कृतिक सहिष्णुता का यह महत्व पूरे विश्व को समझना बड़ा जरूरी है. और यह बात मैं आज के विश्व के वर्तमान सत्य से समझाने की कोशिश करता हूँ. आज विश्व के एक सिरे पर अमेरिका तथा दूसरे यूरोपीय देश हैं जो समृद्धि के शिखर पर बैठे हैं. परंतु बावजूद इसके, यह सत्य भी किसी से छिपा नहीं है कि जीवन की असली मस्ती से वे कोसों दूर हैं. कहने का तात्पर्य यह कि जीवन क्या है, तथा जीवन की छोटी-मोटी मस्तियां क्या होती हैं; उससे वे लोग पूरी तरह अनजान हैं. और यह एक गंभीर विषय है, क्योंकि जीवन में मस्ती न हो तो मनुष्य मानसिक रोगी हो जाता है. यूरोप तो ठीक है, परंतु आम अमेरिकन तो बुरी तरह परेशान हैं. डिप्रेशन से लेकर अनेक प्रकार की अन्य मनःवेदना की दवाइयों पर उनका जीवन टिका हुआ है. और यह सब क्यों, क्योंकि उनके पास अपनी कही जा सके, ऐसी कोई सांस्कृतिक विरासत नहीं है. यही कारण है कि पूरा अमेरिका भीतर से खोखला हो चुका है. और इस लिहाज से कहूँ तो दुनिया चाहे जो माने, परंतु मैं अमेरिका को समृद्ध देश कभी नहीं मान सकता हूँ. क्योंकि मेरे लाखों वर्षों के अनुभव का निचोड़ ही यह है कि मनुष्यजीवन की समृद्धि का असली पैमाना उसका भीतर है, बाहर की खोखली भौतिक उपलब्धियां उसके जीवन में कोई मायना नहीं रखती है. हां, दोनों एकसाथ हो तो निश्चित ही बेहतर है. परंतु दोनों में से कोई एक हो, तो फिर निश्चित ही भीतरी समृद्धि ज्यादा महत्वपूर्ण है. और इस लिहाज से अमेरिका कंगाल ही है.

चलो, यह तो समझे. परंतु सवाल उठता है कि तो फिर इस परिभाषा के अनुसार विश्व में समृद्ध कौन है? तो वह बिना पक्षपात के सुन लो कि वह मेरी धरती, यानी भारत ही है. क्योंकि तमाम विपरीत परिस्थितियों के बाद भी यहां जीवन है. और उस जीवन की नींव

यहां की सांस्कृतिक सहिष्णुता ने ही रखी है. और यही बात मैं आज पूरे विश्व को समझाना चाहता हूँ. थोड़ा समझें कि जीवन 'भीतर की मस्ती' का नाम है. क्योंकि एक मनुष्य ही है जो आनंद, शांति तथा संतोष का अपनी सर्वोच्चता पर अनुभव कर सकता है. और इन भावों में रहना ना सिर्फ उसका कर्तव्य है, बल्कि यही उसके जीवन की सफलता का पैमाना भी है. और इसी लिहाज से मैं कह रहा हूँ कि भारत सबसे सफल भी है, तथा समृद्ध भी. और वह कैसे व कहां-कहां, बस आगे मैं सीधे आपको वह सब संक्षेप में बताता हूँ.

यदि एकबार विश्व की समझ में यह आ जाए कि आम भारतीय के पास श्रेष्ठ जीवन है, तो उसे तत्काल सांस्कृतिक सहिष्णुता का महत्व समझ में आ ही जाएगा. क्योंकि आम मान्यता में भारत की छवि कुछ ऐसी बनाई गई है कि यहां जीवन है ही नहीं. शायद उसका एकमात्र कारण यह है कि जीवन को समृद्धि से जोड़कर देखा जा रहा है. और मैं समझाना यह चाह रहा हूँ कि समृद्धि बाहर है, तथा जीवन भीतर. और मैं जो समझाना चाह रहा हूँ, वह समझाकर ही रहूंगा. क्योंकि इस एक बात पर पूरे विश्व का भविष्य टिका हुआ है कि सर्वश्रेष्ठ जीवन किस देश में है? और चूंकि बात मनुष्य जीवन की हो रही है, तो कृपाकर पहले यह समझ लें कि 'मनुष्य' क्या है? ...तो मनुष्य भावनाओं के शिखर पर बैठा एक प्राणी है. अब यह तो सभी जानते हैं कि मनुष्य जितना भावनाशील है उतना इस प्रकृति का दूसरा कोई पशु-पक्षी नहीं. और उसकी यह भावना क्या है? ...यही कि वह प्रेम पाना भी चाहता है तथा प्रेम बांटना भी चाहता है. और सायकोलोजिकली यह समझ लेना कि जो जीवन में न तो प्रेम बांट पाता है और न पा पाता है, वह भीतर से सूखा यानी ड्राय हो जाता है. और जो भीतर से ड्राय हो जाता है उसे ही बात-बात पर फ्रस्ट्रेशन पकड़ता है. क्रोध हमेशा कारण-अकारण उसके सर पर सवार रहता है. और यह प्रेम स्त्री-पुरुष के बीच संबंध-मात्र का नाम नहीं है. प्रेम के इसके अलावा भी अनेक आधार हैं. मनुष्य को जीवन के तमाम रिश्तों से प्रेम के आदान-प्रदान की भूख रहती है. और उसकी यह भूख कम-से-कम अमेरिका तथा यूरोपीय देशों में तो पूरी नहीं ही हो रही है. और यही उनके परेशान जीवन का प्रमुख कारण है. सबकुछ होते हुए भी "क्या करें व समय कैसे बिताएं" के फ्रस्ट्रेशन ने वहां सबको घेर रखा है. और उसके मुकाबले भारत की बात करूं तो यहां कुछ न होते हुए भी समय कैसे बिताएं, या अब क्या करें की समस्या नहीं है. यही भारतीय जीवन की सफलता भी है, तथा यही उसकी मानसिक समृद्धि का प्रमुख आधार भी है. ...और यही बात मैं पूरे विश्व के गले उतारना चाह रहा हूँ.

चलो, इस बात को मैं थोड़ा और विस्तार से समझाता हूँ ...शायद उससे समझना आपके लिए आसान हो जाएगा. ...तो यह बताओ कि श्रेष्ठ जीवन क्या होता है? छोड़ो, आप नहीं बता पाओगे. सो, मैं ही बता देता हूँ. श्रेष्ठ जीवन वह होता है जो बहता है. यदि जीवन बह रहा होता है तो वह मस्ती और शांति में रहता है. लेकिन जैसे ही बहना अटक जाता है तो "क्या करूं तथा समय कैसे काटूं" की समस्या उसे आ घेरती है. और यह स्पष्ट समझ

लेना कि जीवन के बहने में 'प्रेम' का बड़ा महत्वपूर्ण योगदान होता है. यदि आपने कभी प्रेम किया हो तो आप जानते होंगे कि प्रेम होने पर समय उड़ने लगता है. फिर क्या करें का सवाल ही नहीं उठता है. प्रेमी-प्रेमिका तो दिन के पूरे चौबीस घंटे एक-दूसरे के खयालों में बिता देते हैं. मिले तो अलग मजा, बिछड़ने के गम का भी अपना मजा. प्रेम का भी मजा और आपसी तकरार में भी मजा. प्रेम में तो रूठने और मनाने दोनों का अपना ही एक मजा होता है. प्रेम तो वह जादू है कि उसमें भाव देने और भाव खाने, दोनों का मजा होता है. और इन सबके चलते प्रेमियों को समय का खयाल आए तो भी कैसे? और बड़ी बात यह कि प्रेमी-प्रेमिका का यह मजा न तो केरियर पर और ना ही समृद्धि या साधन पर आश्रित रहता है. सच कहूं तो प्रेम में जीवन बहता नहीं, उड़ता है. और यही प्रेम का कमाल है. और प्रेम 'प्रेमी-प्रेमिका' के मध्य ही होता है, ऐसा नहीं है. प्रेम, प्रेम होता है. और मनुष्यों के अनेक आपसी रिश्तों में इसकी झलक मिलती ही है. मेरी प्रजा की भीतरी मस्ती का राज ही यह है कि यहां के लोग तमाम प्रेमपूर्ण रिश्तों का आनंद उठाते हैं. सो कहने का तात्पर्य यह कि प्रेम मनुष्यजीवन की प्रमुख भूख है. यह प्रेम पाना और बांटना एक कला है. और यह कला बिना धार्मिक और सांस्कृतिक सहिष्णुता के नहीं विकसित की जा सकती है. और चूंकि भारत के पास धार्मिक व सांस्कृतिक सहिष्णुता की शानदार धरोहर है, इसलिए यहां के जीवन में प्रेम है. और प्रेम है, तो जीवन है ही. क्योंकि प्रेम जीने का सबसे बड़ा आसरा है.

अतः अब मैं आपको भारतीय जीवन पर छाए "प्रेम के विस्तार को" समझाने की कोशिश करता हूँ. साथ ही भारतीय जीवन पर पड़ रहे प्रेम के सकारात्मक परिणामों को भी समझाता हूँ. मुझे उम्मीद है कि उससे "जीवन में प्रेम के महत्व" को समझना आपके लिए आसान हो जाएगा. और इसकी शुरुआत मैं "मां और बच्चे के" रिश्ते से करता हूँ. आप मानेंगे नहीं कि भारत में मां व बच्चे का ऐसा तो प्रेमपूर्ण रिश्ता होता है कि बच्चा पैदा होने के बाद दोनों के आठ-दस साल कहां गुजर जाते हैं, पता ही नहीं चलता. बच्चे का लाड़-प्यार ही नहीं, यहां की मां को उसका सताना तथा उसका उपद्रव भी उतना ही भाता है. यही नहीं, हर छोटा बच्चा पूरे घर का वातावरण हसीन कर देता है. और जब मैं पूरा घर कह रहा हूँ तो बात सम्पूर्ण परिवार की कर रहा हूँ. इसमें माता-पिता और बच्चे ही नहीं, दादा-दादी, भाई-बहन, काका-काकी वगैरह सब शामिल हैं. और ऐसा संयुक्त परिवार भी भारतीय संस्कृति की अपनी एक बेशकीमती धरोहर है. यहां पर युगों से चला आ रहा "सामूहिक परिवार का यह कल्चर" आज भी यथावत है. अतः घर हरहमेशा हरा-भरा रहता है. दादा-दादी से लेकर छोटे बच्चों तक का सम्पूर्ण परिवार यहां आम बात है. और स्पष्ट रूप से समझ लेना कि प्रेमपूर्ण पारिवारिक रिश्तों का यही मजा मनुष्यजीवन के सुख-शांति का प्रमुख स्रोत है. जैसी मां और बच्चे की प्रेमपूर्ण केमिस्ट्री होती है, आप आश्चर्य करेंगे कि यहां दादा-दादी से पोते-पोतियों की भी वैसी ही केमिस्ट्री होती है. और यह एक बहुत बड़ी बात है. भारत में जवान मनुष्य ही नहीं, जीवन के अंतिम पड़ाव पर जी रहे दादा-दादी भी अपने पोते-पोतियों

के सहारे हसीन जीवन गुजार रहे होते हैं. और इस रिश्ते की श्रेष्ठ बात यह कि पोते-पोती भी अपने दादा-दादी का हरसंभव खयाल रखते हैं. यही क्यों, यहां हर घर में बुजुर्ग को सर्वाधिक सम्मान प्राप्त होता है. उम्र के अंतिम पड़ाव पर होने के बावजूद तथा शरीर साथ न देने के बावजूद भी घर के मुखिया वे ही कहलाते हैं. कुल-मिलाकर कहने का तात्पर्य यह कि प्रेमपूर्ण तरीके से सम्पूर्ण परिवार का एकसाथ रहना यहां के सांस्कृतिक जीवन की एक बहुत बड़ी उपलब्धि है. इसका सबसे बड़ा फायदा यह कि मनुष्य को मिल रहे पारिवारिक प्रेम के कारण उसके मन में उठ रहे फ्रस्ट्रेशन अक्सर उठने से पहले ही शांत हो जाते हैं. ...इतना ही नहीं, भारत की सांस्कृतिक धरोहर यह भी है कि इसने परिवार के बाहर के रिश्तों में भी प्रेम व विश्वास की अनेक ऊंचाइयां छुई है. खासकर मित्रों का आपसी प्रेम तो यहां की लाइफ-लाइन है. यहां किसी भी उम्र का कोई भी स्त्री हो या पुरुष, युवा हो या वृद्ध, या फिर छोटे-छोटे बच्चे ही क्यों न हों; सबके अपने अनेक मित्र होते ही हैं. और मित्रों के साथ प्रेमपूर्ण तरीके से बिताया यह समय उन्हें विपरीत परिस्थितियों को भी हंसकर झेलने की ताकात देता है. परिवारवालों को कोई कुछ बताए न बताए, परंतु प्रायः मित्रों से यहां कोई कुछ नहीं छिपाता है. यही क्यों, गुरु-शिष्यों के प्रेमपूर्ण रिश्तों का भी भारत का अपना ही एक गौरवशाली इतिहास रहा है. अष्टावक्र-जनक, कृष्ण-अर्जुन से लेकर रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद जैसे अनेक उदाहरण इस श्रेणी में रखे जा सकते हैं.

और यह बात कहते हुए मुझे गर्व महसूस होता है कि भारत के हिंदू धर्म में 'प्रेम' को परमात्मा के साक्षात्कार हेतु सबसे प्रमुख मार्ग माना गया है. कहने का तात्पर्य यह कि धर्म हो या संस्कृति, प्रेम को यहां जीवन का प्रमुख आधार माना गया है. और यही कारण है कि प्रेम यहां के लोगों की नस-नस में बह रहा है. सो उम्मीद करता हूँ कि अबतक आपने यह समझ ही लिया होगा कि प्रेम मनुष्यजीवन जीने का प्रमुख आधार है. साथ ही यह भी समझ ही लिया होगा कि भारतियों के हृदय में धड़क रहा प्रेम उनकी सांस्कृतिक सहिष्णुता की देन है. यह भी आपकी समझ में आ ही गया होगा कि चूंकि यूरोप-अमेरिका की सांस्कृतिक सहिष्णुता कमजोर है, इसलिए वहां सबकुछ होते हुए भी जीवन में फ्रस्ट्रेशन तथा डिप्रेशन का राज है. सामूहिक परिवार क्या होता है तथा उसका मजा क्या है, यह वहां शायद ही कोई जानता या समझता है. यहां तक कि मां-बेटे का भी कोई ऐसा प्रेमपूर्ण रिश्ता भी कम ही देखा या पाया जाता है. अक्सर तो माताएं बच्चों को अपना दूध तक नहीं पिला पाती है. और-तो-और, दो वर्ष का होते-होते उसे चिल्ड्रन प्ले स्कूल में ऐसे छोड़ आती हैं जैसे वह बच्चा न हो, कोई बोझ हो. और जब पारिवारिक रिश्तों में ही आपसी प्रेम नहीं, तो बाहरी रिश्तों में प्रेम की मजबूताई होने का सवाल ही नहीं उठता. ऐसे में हो यह रहा है कि बाहरी समृद्धि पाने के बावजूद प्रेम के अभाव के कारण उस मनुष्य को बात-बेबात फ्रस्ट्रेशन और डिप्रेशन पकड़ते ही रहते हैं. वह भी क्या करे...? उसके भीतर बह रहे प्रेम को बाहर निकलने का मौका ही नहीं मिलता. और इस कारण वह एक या दूसरी मानसिक विकृति का

शिकार हो जाता है. अब ऐसे मानसिक रूप से विकृत व्यक्ति के पास बाहर कुछ भी क्यों न हो, वह सफल कभी नहीं कहा जा सकता है. और ऐसे में संघर्षपूर्ण जीवन गुजार रहे लोगों की तो बात ही करना बेकार है. सो मैं उम्मीद करता हूँ कि मेरी यह बात पूरे विश्व की समझ में आ गई होगी कि भारत के पास सांस्कृतिक सहिष्णुता की शानदार धरोहर होने के कारण यहां के आम नागरिक के पास भी शानदार प्रेमपूर्ण जीवन है. ...खासकर यूरोपियन्स और अमेरिकन्स से मैं यह उम्मीद विशेष तौरपर करता हूँ कि वे इससे सबक लेकर आज नहीं तो कल भारत के “संयुक्त-परिवार” वाला कन्सेप्ट अपनाएंगे जरूर.

हालांकि आज के भारत में भी सबकुछ ठीक नहीं है. मैं इस मामले में आज के भारतीय युवाओं में फैल रही मनोवृत्तियों से काफी विचलित हूँ. न जाने क्यों उनपर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव बढ़ता जा रहा है. अब कोई भी श्रेष्ठ बाहरी संस्कृति अपनाना तो सहिष्णुता है, परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि अनुपयोगी या व्यर्थ-चीजें भी अपनाते रहो. वह तो मूर्खता का द्योतक है. और मजा यह कि पश्चिमी देशों की जो सकारात्मक बातें हैं उनपर तो यहां के युवाओं की नजर तक नहीं पड़ रही, और गलत को अपनाने हेतु सब उतावले हो रहे हैं. जो अपनाने लायक नहीं है, उसके नकल की आजकल यहां होड़ मची हुई है. निश्चित ही हजार सवाल सबके मन में घूम रहे होंगे. भला ऐसी कौन-सी महान सहिष्णुताएं हैं जिनके शिखर पर पश्चिमी देश विराजमान हैं? तो उनकी चर्चा भी मैं करूंगा, पर आगे. अभी तो मैं वापस भारत की सांस्कृतिक सहिष्णुता पर ही आ जाता हूँ. और यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि आज का भारतीय युवा पश्चिमी प्रभाव में अपनी बेमिसाल सांस्कृतिक सहिष्णुताओं को छोड़ता चला जा रहा है. यहां तक कि आज के युवा बच्चे पैदा तो कर लेते हैं, परंतु दो-तीन साल में ही उन्हें वे बोझ दिखाई देने लगते हैं. और फिर ठीक पश्चिमी संस्कृति की तर्ज पर इन छोटे बच्चों को प्ले-स्कूल में छोड़ आते हैं. वे समझते ही नहीं कि बच्चों को शिक्षा की जितनी जरूरत है उतनी ही प्रेम की भी है. अरे, आप माता-पिता दोनों कार्यरत हैं तो घर में दादा-दादी उनका खयाल रखेंगे. और निश्चित ही वे किसी प्ले-स्कूल से ज्यादा बेहतर खयाल रखेंगे. आपको कार्य करने से कोई नहीं रोक रहा. कार्य ही पूजा है और कार्य ही जीवन है. न कार्य रुके, न बच्चों के प्रेमपूर्ण जीवन में बाधा आए, और ना बुजुर्गों को एकान्त सताए; यही तो संयुक्त परिवार का मकसद है. लेकिन दुर्भाग्य से पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव में आकर आज के कई युवा संयुक्त परिवार को सिरे से त्यागने पर उतारू हो गए हैं. और यही कारण है कि आजादी के बाद के तीस वर्ष तक अनेक महान कलाकार तथा उद्योगपति इस देश में हुए. परंतु अब नए अच्छे कलाकारों या उद्योगपतियों का आना लगभग थम-सा गया है. क्योंकि युवा पीढ़ी पढ़-लिख तो रही है, परंतु प्रेम से वंचित रह जा रही है. लोग यह क्यों भूल जाते हैं कि मनुष्य पूर्व का हो या पश्चिम का, आगे वही बढ़ा है जिसे प्रेम मिला है. और ज्ञान बटोरने हेतु दिन-रात घूमनेवाला यह मनुष्य कभी इतिहास के उपयोगी पन्नों पर नजर तक नहीं डालता है. वह इतिहास के उन पन्नों में देखता ही नहीं

जिनमें यह उल्लिखित है कि मां नैन्सी से मिले प्रेम ने अनपढ़ एडीसन को महानतम वैज्ञानिक कैसे बना दिया? कैसे टीचर एने के प्रेम ने “न देख, न बोल और न सुन सकने वाली हेलेन केलर को” विश्व की श्रेष्ठ हस्तियों में शामिल करवा दिया? यानी इतिहास भी इस बात की गवाही दे ही रहा है कि भरपूर प्रेम से सींचा हुआ बच्चा कैसे सुख और सफलता की श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर ऊंचाइयों को छूता चला गया है.

सो, मेहरबानी कर भारत का युवा समय रहते चेत जाए, वरना पूरी तरह बर्बाद हो जाएगा. क्योंकि समृद्धि का यहां पहले ही अभाव है, और उसपर यदि प्रेमपूर्ण जीवन भी खो दिया तो निश्चित ही वह कहीं का नहीं रहेगा. और निश्चित ही उसका असर देश पर भी पड़ेगा. अतः आज के युवा, जो संयुक्त परिवार को एक बोझ और प्रेम को समय का दुरुपयोग मान रहे हैं वह और कुछ नहीं तो जीवन का एक महत्वपूर्ण पहलू तो खो ही रहे हैं. वहीं माता-पिता भी समझ ही लें कि बच्चे बोझ नहीं, असेट्स हैं. उन्हें डिग्री के साथ-साथ प्रेम भी चाहिए. उन्हें अपने चारों ओर प्रेमपूर्ण वातावरण भी चाहिए. बाकी तो इतिहास गवाह है कि अनपढ़-से-अनपढ़ को भी प्रेम मिला है तो उसने सफलता के शिखर छू ही लिए हैं. मुझे यकीन है कि मेरे इतने समझाने के बाद विश्व के साथ-साथ भारतवासी भी सामूहिक परिवार की सांस्कृतिक धरोहर का महत्व समझ ही गए होंगे. क्योंकि यह ध्यान रख लेना कि जिन बच्चों को दादा-दादी या नाना-नानी का प्यार नहीं मिलता, वे अधूरे रह जाते हैं. वैसे ही जिन बुजुर्गों को पोते-पोतियों का प्यार नहीं मिलता, उनके जीने का मकसद ही व्यर्थ हो जाता है. ध्यान रखो, परिवार एक ऐसा पेड़ है जिसकी जड़ घर के बुजुर्ग हैं, जवान जिसकी डालियां हैं, तथा बच्चे उस पेड़ के ताजे उगे फूल और पत्तियां हैं. और जैसे इन तीनों के बगैर पेड़ सुंदर नहीं, वैसे ही तीनों पीढ़ियों के बगैर परिवार सम्पूर्ण नहीं. आज के भारतीय युवाओं को यह बात समझनी चाहिए. और समझने हेतु उन्हें ज्यादा दूर जाने की जरूरत भी नहीं है. वे अपने-अपने घरों में ही झांक लें. घर के बुजुर्गों को ध्यान से देखें. वे घर से बाहर कम ही निकलते हैं. हो सकता है उनमें से कई स्वास्थ्य की परेशानी भी झेल रहे हों. परंतु बावजूद इसके उनके जीवन में “क्या करें या समय कैसे काटें” जैसे सवाल नहीं हैं. दूसरी तरफ मेरे प्यारे युवाओं, आपलोग अपने को देखें. दिन भर बाहर जाने से लेकर दूसरे दस काम करते हो, फोन पर फिजूल की लंबी-लंबी बातें भी करते हो, फेसबुक, वॉट्सएप, ट्वीटर से लेकर यु-ट्यूब पर भी लगे रहते हो, पूरी दुनिया की गॉसिप भी करते हो; फिर भी आपके जीवन में “क्या करें तथा समय कैसे काटें” का सवाल हमेशा बना रहता है. बस, फिर कारण या बिना कारण बात या बिना बात हमेशा फ्रस्ट्रेटेड रहते हो. जब देखो तब डिप्रेशन के शिकार दिखते हो. छोटी-सी उम्र में हार्ट एटैक आ जाते हैं. न जाने कितनी बीमारियां पकड़े जी रहे हो. यह सब क्यों? क्योंकि आप लोगों में भारतीय सांस्कृतिक सहिष्णुता को ठुकराकर पश्चिमी संस्कृति अपनाने की होड़ लगी हुई है. इस कारण जीवन में प्रेम का अभाव हो गया है. और उसका अंतिम परिणाम यह भी हो रहा है

कि कोई जरा-सा प्यार से बोले तो पूरा फिसल जाते हो. गलत जगह प्रेम में फंसने के उदाहरण तो आजकल आम हो गए हैं. मेहरबानीकर मत करो ऐसा. अपना तथा देश का भविष्य दांव पर मत लगाओ. और क्योंकि भारत युवाओं का देश है, अतः आप लोगों का सम्भलना और भी आवश्यक हो जाता है. पूरे देश का भविष्य आप लोगों पर जो टिका हुआ है. सो मैं उम्मीद करता हूँ कि आप लोग इस धरती की सांस्कृतिक सहिष्णुता की अमूल्य विरासत का सम्मान करेंगे, और उसमें जीएंगे.

खैर, अब मैं भारतीय सांस्कृतिक सहिष्णुता की बात आगे बढ़ाता हूँ. भारत की धार्मिक तथा सांस्कृतिक सहिष्णुता पूरे विश्व के लिए समझना इसलिए जरूरी है कि यह जीवन जीने का सही तरीका सिखाती है. और दूसरी बात कहूं तो कभी भी धर्म और संस्कृति को अलग करके देखा ही नहीं जा सकता है. दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं. और इसलिए दोनों का एक-दूसरे पर प्रभाव पड़ता ही है. तथा यही कारण है कि धार्मिक तथा सांस्कृतिक दोनों प्रकार की सहिष्णुताओं में भारत सर्वश्रेष्ठ है. क्योंकि दोनों पर एक-दूसरे का सकारात्मक प्रभाव साफ देखा जा सकता है. यह और कह दूं कि यहां का धर्म हो या यहां की संस्कृति, दोनों का पूरा जोर जीवन जीने पर है. दोनों में जीने को ही सर्वाधिक महत्व दिया गया है. और मनुष्य को जीने हेतु क्या चाहिए? मौज-शौक, मस्ती और उत्सव. और यहां का धर्म कह लो या यहां की संस्कृति, दोनों मौज-शौक, मस्ती और उत्सव से भरे पड़े हैं. यही कारण है कि यहां बाह्य परिस्थिति कितनी ही खराब क्यों न हो, परंतु बावजूद इसके यहां हरकोई हंसते-गाते जीवन जरूर गुजार देता है. क्योंकि भारतीय धर्म और संस्कृति जानते भी हैं और मानते भी हैं कि मनुष्य जीवन ही कुदरत की सबसे बेशकीमती और हसीन चीज है. वही ईश्वर है, तथा वही धर्म है. जीवन है तो सबकुछ है, वरना कुछ भी नहीं है. और यह ऊपरी बात नहीं है, बल्कि इसकी जड़ें बड़े गहरे में भारतीय धर्म और संस्कृति में उतरी हुई हैं. और वह भी इस कदर कि यहां के जो भी लोकप्रिय भगवान और अवतार हैं, वे सब राजा हैं. यही नहीं, उनके जीवन में व्याप्त प्रेम की नोंक-झोंक तथा उनके शौक भी बड़े मशहूर हैं. और यही यहां के जीवन जीने की दृष्टि को दर्शाने हेतु काफी है. मेरे सबसे प्रिय तथा समर्थवान लाल 'कृष्ण' के शौकों पर तो पूरी किताब लिखी जा सकती है. और आप मानेंगे नहीं कि अपने निराले शौकों की वजह से ही वे भारतीयों में सर्वाधिक लोकप्रिय भी हैं. यही क्यों, वे इकलौते हैं जिन्हें यहां पूर्ण-अवतार के रूप में पूजा जाता है. संगीत से लेकर नृत्य तक, तथा भोजन से लेकर रथ चलाने तक के ऐसे कौन-से शौक हैं जो कृष्ण को नहीं थे. सजधज के घूमने से लेकर ईत्तर लगाने तक के शौक उन्होंने पाले हुए थे. उनका वंशीवादन हो या उनका छप्पनभोग खाना, चाहे फिर उनके वस्त्र तथा गहने पहनने का तरीका ही क्यों न हो; सबकुछ पूरे देश में मशहूर है. और उनकी रासलीलाएं! उसकी तो बात ही मत करो, वह तो भारतवासियों के दिल में बसी हुई है.

खैर, धर्म के साथ-साथ यहां की संस्कृति भी आनंद और उत्सवों से भरी पड़ी है. और वह भी इस कदर कि यहां सबको एकत्रित होने और उत्सव मनाने का बहाना चाहिए. नवरात्रि हो तो नौ दिन तक गरबे करना, यानी नाचना-कूदना. फिर गणेश चतुर्थी में भी नौ दिन रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम रखना. इसके अलावा पोंगल, वसंतपंचमी, बैसाखी से लेकर राखी तक, तथा होली से लेकर दिवाली तक क्या-क्या यहां धूमधाम व नाच-गान के साथ नहीं मनाया जाता है. कुल-मिलाकर देखा जाए तो वर्ष में करीब पचास दिन यहां एक या दूसरे कारण से, फिर वजह चाहे धार्मिक हो या सांस्कृतिक; उत्सव अवश्य मनाए जाते हैं. और यह तो मैं इस धरती पर मनाए जानेवाले सामूहिक उत्सवों की बात कर रहा हूँ. इसके अलावा अपनी-अपनी बस्तियों तथा मोहल्लों में जो उत्सव मनाए जाते हैं, वे अलग. यही क्यों, यहां परिवार भी आपस में मिलकर मौके-बेमौके उत्सव मनाता ही रहता है. यहां तो गरीब-से-गरीब घर में भी यदि कोई विवाह हो तो भी सब एकत्रित होकर पांच से सात रोज का उत्सव मनाने से नहीं चूकते हैं. कुल-मिलाकर कहूं तो यहां हर परिवार में औसतन वर्ष में बीस से तीस दिन एक या दूसरे कारण से उत्सव मनाए ही जाते हैं. इसके अलावा स्कूलों तथा कॉलेजों में मनाए जानेवाले वार्षिक-उत्सवों की तो मैं चर्चा ही नहीं कर रहा. तदुपरांत दोस्तों और सहकर्मियों के साथ कभी-कभार जो उत्सव मना लिए, वह बोनस. यानी ठीक से समझा जाए तो यहां साधारण परिवार भी वर्ष में कम-से-कम सौ दिन छोटे या बड़े उत्सव के वातावरण में रहता ही है. पूरे विश्व के समझने लायक महत्वपूर्ण बात तो यह कि इतने उत्सवों की भीड़ में भी यहां का युवा वेलेन्टाइन-डे से लेकर फ़ेरन्डशिप डे तक के अंतरराष्ट्रीय उत्सव मनाने में भी कोई कसर नहीं रख छोड़ता है. और भारतीय सहिष्णुता की ऊंचाई तो यह कि जितने धूमधाम से यहां देश का सबसे बड़ा त्यौहार दीपावली मनाया जाता है, उतने ही धूमधाम से पूरे देश में मुसलमानों का सबसे बड़ा त्यौहार ईद तथा क्रिश्चियनों का सबसे बड़ा त्यौहार क्रिसमस भी मनाया जाता है. आप पूरे देश में कहीं पर भी घूम लें, आपको इन तीनों त्यौहारों के वातावरण का उत्साह चारों ओर नजर आ जाएगा. और सबसे काबिले-तारीफ़ बात तो यह कि इन तीनों त्यौहारों में यहां के सभी धर्म और जाति के लोग बराबरी पर बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते हैं.

अब थोड़ा सोचो कि जो देश इतना सहिष्णु हो, जिस देश में आनंद और उत्सव के इतने मौके उपलब्ध हों, वहां चाहे अन्य कुछ हो न हो; परंतु जीवन तो है ही. ...और यही महत्वपूर्ण है. इसके अलावा यहां की सबसे बड़ी बात यह कि यहां के लोग खाने के भी अत्यंत शौकीन हैं. सच कहूं तो यहां के तमाम उत्सवों का प्रमुख आधार ही भोजन है. व्यंजनों की यहां इतनी वेरायटी उपलब्ध है कि प्रायः हफ्तों तक किसी को व्यंजन दोहराने की आवश्यकता नहीं पड़ती है. वह भी बावजूद इसके कि भारतीय व्यंजन बनाना एक लंबी प्रक्रिया है. उसपर मजा यह कि प्रक्रिया चाहे लम्बी हो या छोटी, भारत के हर परिवार में दिन में कम-से-कम दो बार ताजा भोजन अवश्य बनता है. यहां की महिलाएं परिवार के

लिए भोजन बनाने को एक उत्सव मानती हैं। उनके औसतन चार से छः घंटे रसोईघर में व्यतीत होते हैं। यहां बने वहां तक घर-घर में ना सिर्फ रोज परिवार की पसंद का भोजन बनता है, बल्कि परिवार यह कोशिश भी करता है कि भोजन पूरा परिवार मिलकर एकसाथ करे। अब इसका क्या मजा है, तथा घर की महिलाओं द्वारा बनाए भोजन का क्या महत्व है, यह तो वे ही जान सकते हैं जिनको इसका अनुभव हो। लेकिन मैं इतना अवश्य कहता हूँ कि यह पारिवारिक मजा दुनिया के हजारों मजे पर भारी है। यहां तक कि वे वर्किंग महिलाएं जो दिन में आठ घंटे के करीब कार्यालय या कारखानों में कार्य करती हैं, वे भी प्रायः भोजन बनाने का मौका नहीं छोड़ती हैं।

हालांकि एकबार फिर दुःख के साथ यह कहना ही पड़ेगा कि भारतीय संस्कृति की ऐसी शानदार धरोहर भी आज की युवा पीढ़ी खोती चली जा रही है। आज की युवा लड़कियों को रसोई के नाम से ही नफरत होने लग गई है। जबकि पुरानी जनरेशन के तो कई मर्द भी भोजन बनाने में एक्सपर्ट थे। यहां तक कि ताजा खाना भी आज की युवा पीढ़ी भूल चुकी है। और यह कम था तो आजकल की युवा पीढ़ी को डाइटिंग का भूत सवार हो गया है। खाने के हसीन शौक को छोड़कर वे लोग आजकल सूप व सलाद पर उतर आए हैं। वे जानते ही नहीं कि जीवन मौज-शौक तथा आनंद-उत्सव का नाम है। ठंडा खाना, कम खाना, फ्रीज में रखा खाना तो आज के युवा में आम बात हो गई है। तथा यही कारण है कि आजके भारत का युवा “मानसिक के साथ-साथ शारीरिक अस्वस्थता” का भी शिकार हुआ पड़ा है। अरे...मौज-शौक, आनंद-उत्सव तथा प्रेम और सहिष्णुता वे जादू हैं “जो हमेशा मानसिक और शारीरिक स्वस्थता बनाए रखने में” सहायता करते हैं। लेकिन यहां की सहिष्णु सांस्कृतिक धरोहर खो देने के कारण आज के भारतीय युवाओं की परिस्थिति यह होती जा रही है कि यहां के घर के बुजुर्गों को परिवार के अस्वस्थ युवाओं की सेवा करनी पड़ रही है। और मानसिक दिवालियापन तो आज के युवाओं में ऐसा होता जा रहा है कि शादी हो जाने के बाद भी, तथा उम्र बीत जाने के बाद भी अनेकों युवा पिताजी के पैसों पर ही पल रहे हैं। और यह एक ऐसी खतरनाक परिस्थिति है कि जिसपर नियंत्रण नहीं पाया गया तो सबकुछ बर्बाद हो जाएगा।

मैं यह नहीं कह रहा कि आज का युवा पूरी तरह से गलत है। परंतु उसका भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक सहिष्णुता की खूबसूरत धरोहर से वंचित होते जाना गलत है। बाकी तो कई बार यहां के बुजुर्ग भी असहिष्णुता दिखाते ही हैं। अक्सर यह भी देखा गया है कि आज का युवा यदि पश्चिमी संस्कृति की कोई अच्छी बात भी अपनाता है, तो भी कई बुजुर्ग झंडा लेकर उनके विरोध में खड़े हो जाते हैं। यह बुजुर्गों की असहिष्णुता नहीं तो और क्या है? सहिष्णुता का अर्थ ही इतना है कि अच्छा भले ही लाखों वर्ष पुराना क्यों न हो, जबतक उससे बेहतर कुछ और न आ जाए, उसे मत छोड़ो। और ठीक वैसे ही किसी भी बात या कृत्य को आप कितना ही ऊंचा व महान क्यों न मान रहे हों, उसकी व्यर्थता सिद्ध

हो जाए तो उसे तत्क्षण छोड़ दो. सहिष्णुता का अर्थ इतना ही है कि श्रेष्ठ को अपनाते चले जाओ और व्यर्थ को छोड़ते चले जाओ. बस यही सच्ची सहिष्णुता है, और यही सहिष्णुता की परिभाषा है. अतः मुझे आज के भारतीय युवा हों या बुजुर्ग, दोनों से इतनी ही शिकायत है कि वे दोनों कुछ-न-कुछ मात्रा में असहिष्णु होते ही जा रहे हैं. एक ओर युवा जहां व्यर्थ की पश्चिमी संस्कृति को भी अपनाने में लगा हुआ है तो वहीं दूसरी ओर बुजुर्ग जो अच्छी पश्चिमी संस्कृति है उन्हें भी अपनाने से कतरा रहा है. परंतु समझते क्यों नहीं, संस्कृति कोई भी हो, उसमें अच्छाई व बुराई दोनों समाहित होती ही है. अतः आप बस हर संस्कृति की अच्छाइयों को अपनाते चले जाओ, देखो जीवन कितना हसीन हो जाता है.

सच कहूं तो दिक्कत यह है कि कोई सहिष्णुता का जादू समझता ही नहीं है. चलो, मैं चन्द उदाहरणों से समझाने की कोशिश करता हूँ. क्योंकि एकबार सहिष्णुता का जादू समझ लो, तो शायद उसे अपना भी लो. ..तो जैसा कि मैंने कहा कि “भोजन तथा वह भी डटकर भोजन करना” भारत का प्रमुख शौक है. अब भारत की गरीबी तथा यहां के इन्फ्रास्ट्रक्चर से तो सभी वाकिफ हैं. कई गांवों में तो पीने हेतु साफ पानी भी उपलब्ध नहीं है. खाने में भी कोई हाइजीन वगैरह का विशेष ध्यान वे लोग नहीं रख पाते हैं. परंतु बावजूद इसके, यहां के गांववासियों की तंदुरुस्ती हमेशा बनी रहती है. यह नाप-तौलकर खानेवाले, विटामिन्स की गोलियां लेनेवाले, रेग्युलर ब्लड टेस्ट करवाने वाले शहरी भारतीय, स्वास्थ्य और ऊर्जा के मामले में चाहकर भी गांववासियों का मुकाबला नहीं कर पाते हैं. क्यों...? क्योंकि गांववासी “भोजन-पानी के मामले में” पूरी तरह सहिष्णु हैं. न डर है, न जिद है. जो और जैसा मिल जाए, उसे अपना लेते हैं. कहने का तात्पर्य यह कि अच्छे भोजन की अपेक्षा भोजन के प्रति सहिष्णु होना ज्यादा परिणामकारी सिद्ध होता है. और देखो, यहां के गांववाले जो पानी जीवनभर पीते हैं, यदि कोई विदेशी एकबार को मात्र एक घूंट ही पी ले तो भी उसे तत्काल किसी हॉस्पिटल में शरण लेनी पड़े. क्यों? दोनों मनुष्य हैं, दोनों के पास समान लीवर और किडनी है. बस यही बात समझने की है. फर्क इतना ही है कि एक पानी के प्रति सहिष्णु है, जबकि दूसरा नहीं है. बेचारा यहां का गांववाला पूरा जीवन गुजर जाता है एकबार ब्लड टेस्ट नहीं करवाता है. उसे मालूम ही नहीं कि उसके लीवर तथा किडनी बराबर फंक्शन कर भी रहे हैं या नहीं. और वह विदेशी भले ही ताजा-ताजा पूरा बॉडी-चेकअप करवाकर आया हो, भले ही डॉक्टरों ने उसे श्रेष्ठ लीवर और किडनी होने का सर्टीफिकेट दिया हो, लेकिन गांव के पानी का एक घूंट पीते ही उसके सारे सर्टीफिकेट धरे-के-धरे रह जाते हैं. उस विदेशी के श्रेष्ठ लीवर तथा किडनी एक घूंट पानी तक नहीं पचा पाते हैं.

बस यही सहिष्णुता का जादू है. भोजन-पानी तक में दिखाई गई किसी भी प्रकार की असहिष्णुता का असर स्वास्थ्य पर पड़ता है. इसलिए मैं यहां एक बात और आप लोगों से कह दूं कि मनुष्य की अधिकांश बीमारियां मानसिक हैं, शारीरिक नहीं. और यही कारण

है कि मेडिकल सायन्स अपने सर्वोच्च ज्ञान के बावजूद बार-बार अनुत्तरित हो जाता है. यहां हाई कोलेस्ट्रॉल वालों को अटैक नहीं आता और नॉर्मल कोलेस्ट्रॉल वाला युवावस्था में ही अटैक से मर जाता है. अतः पूरा विश्व सहिष्णुता का महत्व समझे. ...क्योंकि मनुष्य की तमाम मानसिक बीमारियों की जड़ असहिष्णुता है. बस जहां-जहां उसने अपने को मानसिक तौर पर असहिष्णु बना लिया है, वहीं-वहीं वह परेशान है. यह बात पूरे विश्व के साथ-साथ भारत का आज का युवा भी अच्छे से समझ ले. वह यह समझ ही ले कि भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक सहिष्णुता को ठुकराकर वह ज्यादा दूर नहीं जा सकता. यहां के मौज-शौक तथा उत्सवों के प्रति असहिष्णुता दिखाकर वह जीवन में हंस नहीं सकता. और भारतीय युवा एक बात की तो अच्छे से गांठ बांध ले कि यदि उसने भोजन के प्रति असहिष्णुता अपनाई तब तो फिर वह कभी भी स्वस्थ तक नहीं रह पाएगा. और चूंकि उम्मीद पर दुनिया कायम है, सो मैं उम्मीद करता हूँ कि भारतीय युवाओं के साथ-साथ पूरा विश्वसमुदाय भी सहिष्णुता के मेरे बताए महत्वों को ना सिर्फ समझेगा, बल्कि उसे अपनाकर अपने जीवन में आवश्यक सकारात्मक परिवर्तन भी लाएगा.

खैर, यह तो हुई मोटा-मोटी तौरपर भारतीय धार्मिक तथा सांस्कृतिक सहिष्णुता की बात. लेकिन यहां सभी पूरी तरह से धार्मिक तथा सांस्कृतिक सहिष्णु हैं, ऐसा भी नहीं है. चन्द्र कौमें और चन्द्र समुदाय यहां ऐसे भी हैं जिन्होंने असहिष्णुता की हद लांघ रखी है. आप कहेंगे कि इतने सहिष्णु देश में इतने असहिष्णु समुदाय? क्या करें, चांद में भी दाग तो है ही. लेकिन जैसे चांद बड़ा है और दाग छोटा है. बस वैसे ही भारत के इस समुदाय की जनसंख्या, भारत की कुल जनसंख्या का 0.5 प्रतिशत भी नहीं. 132 करोड़ के देश में इनकी कुल आबादी बमुश्किल पचास लाख है. आप मानेंगे नहीं कि ये लोग स्वयं के शरीर के प्रति भी असहिष्णु हैं. अपने शरीर को सताना, उसे भूखों मारना, यह सब वे धर्म समझते हैं. अपने सिर के बाल अपने हाथों से नोंचने को वे महान कृत्य समझते हैं. नंगे पांव घूमना और पूरी तरह नग्न घूमना तो इस समुदाय में संतत्व की निशानी मानी जाती है. जबकि सत्य यह है कि शरीर को सतानेवाली इनकी हरकतें देख आज से 2500 वर्ष पूर्व स्वयं बुद्ध भी चकित थे. उन्होंने अपनी ओर से अनेकों को समझाया भी. उनमें से अनेकों ने बुद्ध की शिष्यता भी स्वीकारी. बुद्ध उन्हें एक ही बात समझाते थे कि जीवन ही धर्म है. जीना ही जीवन का एकमात्र उद्देश्य है. ऐसे में अपने उस शरीर को सताना जिसे कर्म की सत्ता ही न हो, अपनेआप में गलत बात है. शरीर बेचारा तो वह सबकुछ करने को बाध्य है जो मन, बुद्धि और इन्द्रियां उससे करने को कहती हैं. सो, यदि किसी कृत्य हेतु कोई कसूरवार है तो वे मन, बुद्धि और इन्द्रियां हैं. ऐसे में भला उस हेतु शरीर को सजा क्यों देना? सिर्फ शरीर तक सोचना, यह तो जानवरों की लिमिटेसन है. शरीर से मन और बुद्धि तक उठना यह मनुष्य की निशानी है. और मन-बुद्धि पर विजय पाकर आत्मा पाना यह भगवान का लक्षण है. अतः मनुष्य को भगवान तक उठने का लक्ष्य रखना चाहिए. बुद्ध, जैन भिक्षुओं से हमेशा

पूछते थे कि यह उलटी दिशा क्यों पकड़े हुए हो? ...अब बुद्ध तो परमज्ञानी थे. उनका अपना प्रभाव भी था. वे पूर्ण सहिष्णु भी थे. सो उनके फॉलोअरों की संख्या उस समय भी लाखों में थी. परंतु शरीर तक के प्रति बरती जा रही असहिष्णुता के कारण जैन समुदाय की संख्या न उस समय ज्यादा थी, न आज कुछ खास है. बुद्ध के शिष्य अक्सर बुद्ध से यह कहते भी थे कि यह लोग हैं ही कितने जो इनके लिए आप इतना विचलित हो रहे हैं? और बुद्ध कहते थे एक ही क्यों न हो, हर मनुष्य का उद्धार करना मेरा धर्म है. मैं भी यही कह रहा हूँ, वे पचास लाख ही क्यों न हो; उन्हें भी सहिष्णु बनाने का प्रयास करना मेरा धर्म है. सो उन्हें समझना चाहिए कि अपने ही शरीर से असहिष्णुता, भोजन से असहिष्णुता...यह सब ठीक नहीं. इसका असर आप लोगों के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है. और सबूत आंखों के सामने है. आज अन्य भारतीय क्या-कुछ नहीं खाते-पीते, लेकिन सब-के-सब मस्त हैं. क्योंकि यहां का पानी ही कुछ ऐसा है कि वह सबकुछ पचा देता है. परंतु इसी पानी में रहनेवाले यह लोग चूंकि शरीर व भोजन के प्रति भी असहिष्णु हैं, सो वे लोग ना तो कुछ खास खा-पी पाते हैं, और ना अपना स्वास्थ्य सम्भाल पाते हैं. हालत यह है कि “स्वस्थ जैन” खोजना मुश्किल है.

क्या कहूं आपसे! ये लोग तो “न खाने योग्य” पदार्थों की लंबी-चौड़ी सूची बनाए घूमते हैं, और वह भी गर्व से. अब यह तो सीधे-सीधे परमात्मा के प्रति ही असहिष्णुता हो गई. क्योंकि ऐसा करके आप यह मान रहे हैं कि चन्द्र वस्तुएं परमात्मा ने बनाई है और बाकी शैतान ने. सो, जो शैतान ने बनाई है वह खाना ही नहीं. यह तो सीधे तौरपर आप शैतान को भी परमात्मा जितना ही शक्तिशाली मान रहे हैं. शैतान अहंकार का सबूत है. शैतान यह मान ही नहीं सकता कि यहां सबकुछ परमात्मा ने ही बनाया है. और तभी तो वह असहिष्णु हो जाता है. समझें, यदि सबकुछ परमात्मा ने बनाया है तो फिर असहिष्णुता को जगह ही कहां है? लेकिन जैन शास्त्रों की सोच ही असहिष्णुता पर टिकी हुई है. अरे, जो स्वयं के शरीर तक के प्रति सहिष्णु नहीं हो सकता उनसे और क्या उम्मीद करें? वे पूरे जगत से असहिष्णुता का व्यवहार कर ही रहे हैं. सभी जानते हैं कि उन्हें फंक्शन में भी अपने अलग से काउंटर चाहिए ही.... वे फ्लाइट में भी जाएंगे तो तन के ऑर्डर देंगे कि जैन भोजन लाइए. क्यों, ताकि सब सुन सके कि वे जैन हैं. अब यह क्या बात हुई? इतने वर्षों से भारत में रह रहे हो, थोड़ी तो भारतीय सहिष्णुता सीखो. आपकी अहंकार से भरी इन नादानियों का भी भारतीय लोग सम्मान कर रहे हैं. भारतीय लोग तो इतने सहिष्णु हैं कि अपने यहां के फंक्शनों में भी वे आपको अलग से जैन काउंटर लगा के देते हैं. सामने आपकी हठ यह कि आपको यहां की फ्लाइटों तक में अपना खाना अलग से चाहिए होता है. मेहरबानीकर कुछ तो सीखो इस महान भारतीय संस्कृति से. दुनिया का दूसरा ऐसा कौन-सा देश हो सकता है जो 0.5 प्रतिशत जनसंख्या वाले समुदाय के अहंकार का भी इस कदर सम्मान करे?

और फिर आप लोगों की परेशानी क्या है? क्यों सबसे अलग-थलग दिखना चाहते हो? चुपचाप देश की जनता के साथ घुल-मिल जाओ. यह सहिष्णु धरती है. यहां हिंदू ही नहीं, मुसलमान, सिख, ईसाई, बौद्ध, पारसी, मुल्ला कौन-कौन बड़ी तादाद में नहीं रहता है? विश्व का ऐसा कौन-सा संप्रदाय या समुदाय है जो भारत में अच्छी-खासी तादाद में मौजूद नहीं है? लेकिन सबने अपने को यहां की शानदार सहिष्णुता में ढाला है. कोई सिख, पारसी या मुल्ला दूसरों के फंक्शनों में या फ्लाइट में अपना अलग से खाना नहीं मांग रहा है. सोचो, यदि सभी आपकी तरह असहिष्णु हो जाएं तो? और फिर आपको दूसरों के यहां जाकर अपना खाना मांगने को चाहिए, और अपने यहां के फंक्शनों में आप सिर्फ जैन भोजन की व्यवस्था रखते हैं. अपने यहां के फंक्शनों में आप दूसरों की पसंद का खयाल बिल्कुल नहीं रखते. वाह रे धर्म, वाह रे सोच, और वाह री असहिष्णुता! और उसपर गलतफहमी यह कि हम अहिंसा में मानते हैं. अरे, अहिंसा और सहिष्णुता दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं. अतः मेहरबानीकर जिस धरती पर रह रहे हो, उसका सम्मान करो. बाकी संप्रदायों और समुदायों की तरह यहां की महान सहिष्णुता में घुल-मिल जाओ. इतना तो समझो कि दूसरी कोई धरती किसी के इतने नखरे नहीं सहेगी. अतः भारतीय सहिष्णुता में ढल जाओ. भारत के सहिष्णुता के स्वर्णिम इतिहास को आगे बढ़ाओ.

और ध्यान रख लेना, मैं यह सब बातें आप ही की भलाई के लिए कह रहा हूँ. मैं मनुष्य-मात्र का उद्धार चाहता हूँ. अतः मेहरबानीकर यहां के सहिष्णु वातावरण में घुल-मिल जाओ. सबके साथ हिल-मिलकर रहो. थोड़ा अहिंसा और सहिष्णुता को समझो. झूठे गर्वों से बाहर आओ. वैज्ञानिक युग में नग्न घूमना, बाल नोंचना, नंगे पांव घूमना; यह सब क्या है? निश्चित जानो कि यह सब सिवाय असहिष्णुता के कुछ नहीं है. सहिष्णुता का अर्थ ही इतना है कि युग के साथ ताल से ताल मिलाकर चलना. सहिष्णुता है अच्छे के लिए बदलना. और यह युग के साथ चलने तथा अच्छे के लिए बदलने की जो सहिष्णुता है, यही सहिष्णुता मनुष्यों को जानवरों से अलग करती है. चूंकि जानवर रस्तीभर सहिष्णु नहीं, अतः वे कभी नहीं बदलते. वे लाखों वर्ष पूर्व भी नंगे पांव ही चलते थे व नग्न ही घूमते थे, और आज भी वे इसी तरह जी रहे हैं. लेकिन हम मनुष्य हैं तथा प्रगति चाहते हैं. सो, मेहरबानीकर अपने भीतर झांके. एक तरफ आप नग्नता को धर्म कहते हैं, दूसरी तरफ वस्त्र-उद्योग में आप लोगों का ही बोलबाला है. देश में ना जाने कितने वस्त्रों की दुकानों का नाम आपने अपने भगवान महावीर के नाम पर रख रखा है. देश का ऐसा कौन-सा कोना है जहां महावीर वस्त्र भंडार का बोर्ड नहीं? मैं अपने अनुभवों के आधार पर कह रहा हूँ कि आप, आपके मुनि तथा आपके शास्त्र सब कोई अहंकार और कट्टरता के शिखर पर विराजमान हैं. सब-के-सब इतने तो असहिष्णु हैं कि अन्य किसी को कुछ समझते ही नहीं. अरे, आपलोग खुद ही देख लो कि आप आज तक कितने महान कलाकार या वैज्ञानिक दे पाए हैं? और देंगे भी कैसे...? आपके तो जीने का तरीका ही पूरी तरह से अवैज्ञानिक है.

फिर भी गर्व तो ऐसा कि कोई नई वैज्ञानिक खोज हुई नहीं कि आप दावे करने पर उतर आते हैं कि यह तो जैन शास्त्रों में पहले से लिखा है. कितना अज्ञान, कितना अहंकार, कितना झूठ और कितना फरेब? यदि आपके शास्त्र विज्ञान से भी ज्यादा जानते हैं तो कम-से-कम उन्हें पढ़कर कोई छोटा-मोटा जैन वैज्ञानिक ही देश को दे देते.

मेरी बात का ना तो बुरा मानने की जरूरत है और ना ही मेरे कड़वे तथा व्यंगात्मक शब्दों से नाराज होने की आवश्यकता है. यह आपके उद्धार हेतु करुणा से कहे गए शब्द हैं. आपको इन शब्दों के जरिए स्वयं के भीतर ईमानदारी से झांकने की जरूरत है. आपके मुनि और आपके शास्त्र सिवाय आपलोगों को झूठा अहंकार पकड़ाने के और कुछ नहीं कर रहे हैं. और यह शास्त्र महावीर ने नहीं लिखे हैं. जो कुछ आपके शास्त्रों में लिखा है कम-से-कम महावीर जैसा व्यक्ति ऐसा लिखना तो दूर, इस तरीके की बात वह कभी सोच भी नहीं सकता है. आम जैन प्रतिभाशाली हैं. परंतु इन शास्त्रों और मुनियों ने उन्हें ऐसा तो शिकंजे में कस रखा है कि उन्हें सिर्फ असहिष्णु तथा अहंकारी बनाकर छोड़ दिया है. और अहंकार की हद तो यह कि बुद्ध ने महावीर से दीक्षा ली थी. अब कहां बुद्ध और कहां महावीर? यह तो ऐसा हुआ कि सूरज रोशन एक छोटे-से दीये के कारण है. कैसा अहंकार...? और-तो-और, जैन धर्मशास्त्रों के उत्तर पुराण के 72 वें पर्व के श्लोक (280 से 288) में लिखा गया है कि कृष्ण ने उनके कोई तीर्थंकर नेमिनाथ से दीक्षा ली थी. अब कृष्ण जैसे महाज्ञानी कोई जैन तीर्थंकर जिसका नामोनिशान नहीं, उससे क्यों दीक्षा लेने लगे? और वह भी उस जैन धर्म की जो न आज है और न बुद्ध के युग में था. अरे, जो धर्म महावीर के जीते-जी नहीं फैल पाया, उसके महाभारत के युग में अस्तित्व में होने का सवाल ही कहां उठता है? तो बस, बड़ी-बड़ी अहंकारों से भरी हवाई बातें लिख अपना सीना ताने घूमते रहते हैं. और फिर अहंकार व अज्ञान की हद तो यह कि इसी पुराण के आगे के श्लोकों में अपने कर्मों की सजा पाने हेतु कृष्ण को नरक में भेज दिया गया. पहली बात तो नरक है कहां...? और फिर कृष्ण को नरक में भेजनेवाले आप कौन? हालांकि आपके मुनियों का मन इससे भी नहीं भरा. आपके कोई जिनसेन नामक आचार्य ने उनके द्वारा रचित हरिवंशपुराण में तो अहंकार की सारी सीमाएं लांघ दी. उस पुराण के पैसठवें अध्याय के श्लोक (31-55) में तो कृष्ण के कष्टों का वर्णन है. और यह कहा गया है कि कृष्ण अब पछता रहे हैं. और उन्होंने तय किया है कि अबकी मनुष्य जन्म लेकर जैन धर्म में दीक्षित होकर फिर मोक्ष हेतु प्रयास करेंगे. क्योंकि धर्म तो दुनिया में दूसरा कोई है नहीं. और मोक्ष तो सिर्फ जैनियों को ही मिलता है. सो कृष्ण के पास चॉइस ही कहां है? हद है अहंकार की. जैनियों को और मोक्ष? मुझे थोड़ा आश्चर्य होता है. क्योंकि जहां तक मेरा अनुभव है, मोक्ष सिर्फ सहिष्णुओं को मिलता है, अहंकारियों को नहीं. एक तरफ आप अपने को और अपने शास्त्रों को देखो, और एकतरफ इस धरती की सहिष्णुता को देखो. इस धरती के सबसे लोकप्रिय लाल को आपने दुष्कर्मों कहकर नरक में भेज दिया, फिर भी ये लोग आपको मान-सम्मान देने में कोई कसर नहीं

छोड़ते हैं. अब आप ही बताओ कि आपकी व आपके शास्त्रों की ऐसी बातों पर मैं हंसू या क्रोध करूँ? हालांकि मुझे हंसी ही आ रही है, क्योंकि विश्व के अन्य किसी संप्रदाय के शास्त्रों ने अन्य धर्म के महापुरुषों के लिए ऐसी अभद्र भाषा का प्रयोग कभी नहीं किया है. जैसी भाषा का प्रयोग आपके शास्त्रों ने कृष्ण के लिए किया है. अब आप लोगों से क्या कहूँ? वैसे तो मैं हर प्रकार के प्रतिबंध के खिलाफ हूँ. और फिर सबको सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने हेतु ही प्रकट हुआ हूँ. सो मैं यह भी नहीं कह सकता कि आपके शास्त्रों को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए. लेकिन इतना अवश्य कहूँगा कि कृष्ण के बारे में इतनी अभद्र बात कहने के लिए आपके मुनियों को कम-से-कम क्षमा अवश्य मांगनी चाहिए.

खैर, अब बहुत हो चुका. मेहरबानीकर अब यह सब कमाल बंद करो. ये जो आपलोग आपस में तथा आपके मुनि लोग चर्चाओं में गुमसुम तरीके से कृष्ण व बुद्ध को नीचा दिखाते रहते हैं, ऐसी असहिष्णुता ज्यादा दिन नहीं चल सकती है. यह “जो हिंदू और बौद्धों की- तथा कृष्ण और बुद्ध की” दिन-रात हंसी उड़ाते रहते हो, यह लंबा नहीं चलने वाला. और मेरी यह बात याद रख लेना कि इतनी अहंकारी बातें, वह भी कृष्ण व बुद्ध के विरोध में, थोड़ा इस धरती की सहिष्णुता देखो! आपके द्वारा कृष्ण व बुद्ध जैसे इस धरती के महान लालों को नीचा दिखाने की कोशिशें किए जाने के बावजूद यहां के धरतीवासियों ने आपसे कभी सौतेला व्यवहार नहीं किया है. और इसी का परिणाम है कि आज आप भारत की समृद्ध कौमों में से एक हैं. फिर भी यहां किसी को आपसे कोई जलन नहीं. और एक आप हैं, जो इस धरती पर रहने के बावजूद उसके प्रति रत्तीभर सहिष्णु नहीं. और स्वार्थी तो इतने कि इतने समृद्ध होने के बावजूद जब रिजर्वेशन का मौका आया तो आप लोगों ने उसे तुरंत हड़प लिया. यह नहीं सोचा कि आप दूसरी पिछड़ी कौमों का हक छीन रहे हैं. यह अहंकार और ऐसी मतलबी सोच...? यही तो गलत है. आपलोग प्रतिभावान तथा गुणी है. मेहरबानीकर शास्त्रों तथा मुनियों द्वारा पकड़ाए जा रहे झूठे अहंकार से बाहर आएं. दुनिया भी विशाल है तथा इस दुनिया का ज्ञान भी. बस हर अच्छे को अपनाने की सहिष्णुता पैदा करें. देखिए जीवन में बहार आ जाती है कि नहीं? देखिए जैन कलाकारों तथा वैज्ञानिकों की बहार आ जाती है कि नहीं? उम्मीद ही नहीं, यकीन है कि करुणा से भरे इन कटु वचनों का फायदा आप अवश्य उठाएंगे.

समझते क्यों नहीं कि हर संप्रदाय के धर्मगुरु अपने अनुयायियों को अपने धर्म शास्त्रों की श्रेष्ठता का गुमान पकड़ाने में लगे हुए हैं. जबकि बात में दम कुछ भी नहीं है. अभी हाल ही का एक उदाहरण लो. तेरह वर्षीया अराधना समदरिया नामक एक जैन लड़की की परिवार के कहने पर उपवास करने से मृत्यु हो गई. उनके परिवार को एक जैन मुनि ने कहा था कि लड़की से तीन माह के उपवास करवाओ, आपका व्यवसाय तेजी से फलने-फूलने लगेगा. अब यूं तो कहते हैं कि जैन धर्म त्याग सिखाता है, और दूसरी तरफ उनके मुनि व्यवसाय फैलाने के उपाय बताते हैं. चलो यह पाखंड तो समझे, परंतु अपनी ही

बच्ची के प्रति ऐसी तो क्या असहिष्णुता कि उसकी उपवास के नाम पर जान ही ले ली? मैं कहना यही चाहता हूँ कि जो धर्म, परिवार वालों की जान ले सकता है, जो आत्महिंसा पर उकसाता है, उसे कम-से-कम अहिंसा के उपदेश नहीं देने चाहिए. और उसपर जैन मुनियों की बेशरमी तो यह कि उस लड़की की “धर्म की राह पर खुद को न्योछावर कर देने के नामपर” शानदार शवयात्रा भी निकाली गई. उस मासूम की शवयात्रा को एक उत्सव के रूप में मनाया गया. ...ताकि उपवासों के नाम पर चल रही उनकी दुकानों पर सवाल न उठे. किसी में इतनी भी सहिष्णुता नहीं कि उस लड़की बाबत सोचे. क्या कसूर था उसका? कितने अरमान उसने पाले होंगे? सच कहूँ तो मोदीजी मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि जैसे आपने पाकिस्तान पर ‘सर्जिकल स्ट्राइक’ कर अपनी छप्पन इंच की छाती फुलाई है, वैसे ही धर्म के नामपर चल रहे पाखंडों व अंधविश्वासों पर भी सर्जिकल स्ट्राइक करो. क्योंकि यह घर में फैली वे दीमक हैं जो देश को खाए जा रही है. और मैं जो कह रहा हूँ यह आप भी तथा अब तक के सभी प्रधानमंत्री जानते ही थे. बाकी तो वोट की राजनीति में उलझे रहे, परंतु मेरा निवेदन यह है कि आप उससे ऊपर उठकर दिखाइए. उस मासूम लड़की के माता-पिता व उस जैन मुनि पर हत्या का मुकदमा चलवाइए. यदि आप ऐसा कर पाते हैं तो मैं यह महान धरती, स्वयं आपकी छप्पन इंच की छाती को सलाम करूंगी.

कहने का तात्पर्य इतना ही है कि आप लोगों की असहिष्णुता के ऐसे एक नहीं अनेक उदाहरण मौजूद हैं. यूं भी मैं कोई भी बात ऐसे ही नहीं करता हूँ. परंतु अब बहुत हो चुका. और फिर आपकी बेहतरी के लिए भी अच्छा ही है कि अब इस धरती की सहिष्णुता में घुल-मिल जाइए. और मैं एकबार फिर कह दूँ कि मैं यह सारी बातें करुणा से भरकर ही कह रहा हूँ. आपके भले व आपके उद्धार के लिए ही कह रहा हूँ. आपको किसी अनहोनी से बचाने के लिए ही कह रहा हूँ. आपको नीचा दिखाने या आप लोगों को अपमानित करने हेतु कतई नहीं कह रहा हूँ. यूं भी अहंकार तथा असहिष्णुता के अलावा आप लोगों में अन्य कुछ खराबी है भी नहीं. अन्यथा तो आप प्रतिभावान लोग हैं. स्वयं भी आगे बढ़ें तथा आपके जरिए यह देश भी आगे बढ़े, इसी एकमात्र उद्देश्य से मैंने थोड़े कड़वे तथा व्यंग्यात्मक शब्दों में सहिष्णुता का यह सबक आप लोगों को सिखाया. और वैसे तो यूं भी आजकल खूले विचारवाले जैनों की संख्या बढ़ती भी जा ही रही है. खान-पान जैसी सामान्य बातों में कड़ियों ने असहिष्णुता दिखाना छोड़ ही दिया है.

खैर, यह तो एक संप्रदाय विशेष की बात हुई. कोई असहिष्णुता यहीं तक तो सीमित है नहीं. एक असहिष्णुता ऐसी है जो युगों से भारत में चली आ रही है. हालांकि एक अच्छी बात यह है कि पूरा भारत इस असहिष्णुता का शिकार नहीं है. लेकिन असहिष्णुता..तो असहिष्णुता होती है. छोटे पैमाने पर हो या बड़े पैमाने पर, वह हरहाल में खत्म तो होनी ही चाहिए. और वह है स्त्रियों के प्रति असहिष्णुता. और निश्चित ही इस हेतु काफी हद तक कुछ हिंदू शास्त्र तथा उनके पिछल्लू जवाबदार हैं. स्त्रियां यह नहीं कर

सकती, स्त्रियां वह नहीं कर सकती, स्त्रियां इस मंदिर में नहीं जा सकती; यह सब क्या लगा रखा है? और हिंदुओं का तो एक संप्रदाय ऐसा भी है कि जिनके संतों को तो स्त्रियों की शक्ल तक देखना गंवारा नहीं है. स्त्रियों को देखने-मात्र से उनका धर्म भ्रष्ट हो जाता है. और हद तो यह कि वे किसी सामूहिक फंक्शन में जाएं तो उनके आने से पूर्व ही वहां उपस्थित स्त्रियों को अछूत कहकर वहां से खदेड़ दिया जाता है. अपने को जन्म देनेवाली स्त्री के साथ ऐसा तुच्छ व्यवहार? इस स्वामीनारायण संप्रदाय के एक समूह द्वारा स्त्रियों के साथ किए जा रहे ऐसे तुच्छ व्यवहार ने मेरी सहिष्णुता को बुरी तरह कलंकित किया है. यह तो ठीक है कि मेरी धरती के लोग सहिष्णु हैं, वरना अन्य देशों में जाकर वहां की स्त्रियों को खदेड़ कर बताओ तो जानूं. अतः आपलोग भी जागो और स्त्रियों के साथ कर रहे इस व्यवहार को खत्म करो. कब तक समझाऊं कि वास्तविक धर्म सिर्फ सहिष्णुता सिखाता है, भेद नहीं. और फिर स्त्रियों से इतना ही ऐतराज है तो सुरंगों में छिपकर पड़े रहो. यदि आप स्त्रियों को देखना पाप समझते हैं, तो मत देखो. मत जाओ ऐसी जगहों पर जहां स्त्रियां होने की संभावना हो. लेकिन यह कैसी असहिष्णुता कि आप तो जाएं, पर वहां की स्त्रियां हटा दी जाएं. यह तो भारतीय संविधान का खुलेआम अपमान हुआ और फिर सोचो कि जंगलों में जाओगे तो क्या करोगे. क्योंकि वहां भी मादा जानवर तो होते ही हैं. और मनुष्य तो ठीक है, जानवर तो यकीनन आप लोगों की नहीं सुनेंगे. जैसे तीन तलाक गलत है, वैसे यह भी गलत ही है. मानता हूँ कि आपलोगों ने देश-विदेश में अनेक श्रेष्ठ कार्य किए हैं. परंतु उससे स्त्रियों के अपमान की इजाजत नहीं मिल जाती. और मोदीजी, आपने स्त्रियों को आगे बढ़ाने हेतु अनेक मुहिम छेड़ी हैं. परंतु दुर्भाग्य से लाल किले पर आपने पगड़ी इसी संप्रदाय के एक संत से पहनी, जो स्त्रियों को अपमानित करते हैं. क्यों...? क्या आपने यह नहीं सोचा कि इससे स्त्रियों के विरुद्ध अपनायी जा रही मानसिकता को बल मिलेगा? नहीं, जो गलत है वह गलत है. और गलत को जड़-मूल से उखाड़ फेंकना यहां हरेक का कर्तव्य है. और खासकर एक प्रधानमंत्री का तो देश के प्रति यही कर्तव्य है.

खैर, मुझे तो स्त्रियों से भी शिकायत है. अरे, तुम मानसिक तौर पर मर्दों से ज्यादा शक्तिशाली हो. यह तुम ही हो जो मर्दों को संसार में लाती भी हो, और उन्हें पालती भी हो. ऐसे में उनकी औकात ही क्या है कि वे तुम्हारा अपमान कर सकें? तुम लोग प्रतिज्ञा कर लो कि ऐसे धर्मों, ऐसी मान्यताओं और ऐसे संतों का बहिष्कार करोगे. मैं दावे से कहता हूँ कि फिर इन जैसों के अस्तित्व में बचने का सवाल ही नहीं उठता है. यही क्यों, उनकी बातें मानने को कहने वाले मर्दों का भी बहिष्कार कर दो. फिर देखो, एक दिन में सब ठीक न हो जाए तो मुझसे कहना. और फिर तुमलोग तो दुनिया की सबसे सहिष्णु धरती पर रह रही हो. यहां ऐसे लोगों की संख्या ही कितनी है जो स्त्रियों के तिरस्कार में रुचि रखते हैं. मुट्ठीभर, उंगलियों पर गिने जा सके उतने. बस एकबार तुम दृढ़ हो जाओ, फिर क्या है? पूरा देश तथा यहां का कानून तुम्हारे साथ है. अरे, यह तो वह देश है जहां के शास्त्रों ने काली

और अंबे दी है, और जहां के इतिहास ने झांसी की रानी दी है. सो, एकबार मजबूताई से खड़े हो जाओ तथा इस अपमान का अंत लाओ. मैं तो सबसे निवेदन करता हूँ कि मेहरबानीकर हर प्रकार की असहिष्णुता का अंत लाओ. मेरे शानदार और गौरवशाली इतिहास को कलंकित मत करो. जल्द-से-जल्द इतने सहिष्णु हो जाओ कि मैं पूरी शान से अपना सर ऊंचा करके पूरे विश्व को सहिष्णुता का पाठ पढ़ा सकूँ. अभी तो आप लोगों की असहिष्णुता के कारण अनेक बार मुझे थोड़ी दबी आवाज में बात करनी पड़ती है. कोई भी कह सकता है कि हमें सबक सिखाने से पहले थोड़ा अपने स्वयं की धरती पर झांक लो. अतः मैं अपने धरतीवासियों से निवेदन करता हूँ कि अपने लिए न सही, कम-से-कम मेरी खातिर तो सहिष्णु बनो.

अब आगे मैं जिस असहिष्णुता की बात करने जा रहा हूँ, वह सचमुच आश्चर्य में डालने वाली है. विज्ञान द्वारा मनुष्यजीवन को नई ऊंचाइयां देने के बावजूद कई मुल्क आज भी विज्ञान तक के प्रति असहिष्णु हैं. अब उन्हें कौन समझाए कि विज्ञान के प्रति बरती गई असहिष्णुता का सीधा असर मनुष्य के जीवनस्तर पर पड़ता है. और इसीलिए इसे समझना और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है. अब इससे पहले कि मैं विज्ञान के प्रति बरती गई असहिष्णुता के प्रभावों की चर्चा करूँ, आपके लिए “विज्ञान क्या है” यह समझ लेना बहुत जरूरी है. और उस संदर्भ में यह तो मैं आपको पहले ही समझा चुका हूँ कि ब्रह्मांड का हर पदार्थ सहिष्णु है. और सहिष्णु होने का अर्थ ही यह है कि यहां का हर पदार्थ बेहतरी हेतु बदलने को तत्पर रहता है. और विज्ञान है पदार्थों को बेहतरी हेतु बदलने की कला. विज्ञान है पदार्थों को मनुष्यों के लिए उपयोगी बनाने का ज्ञान. नग्न घूमनेवाला तथा कच्चा मांस खानेवाला मनुष्य यदि आज एक-से-एक स्वादिष्ट भोजन का स्वाद ले रहा है, तो यह विज्ञान की ही देन है. वैसे ही पैदल तथा गाड़ों में घूमनेवाला मनुष्य यदि आज हवाईजहाज में उड़ रहा है, तो वह भी विज्ञान की ही देन है.

सो, उम्मीद है कि विज्ञान क्या है यह आप अच्छे से समझ गए होंगे. वहीं विज्ञान पूरी तरह से कामयाब है, यह आप जानते ही हैं. क्योंकि उसकी प्रगति किसी से छिपी नहीं है. तो अब यह जान लें कि अंततः विज्ञान भी एक कला ही है जिसकी अनेक शाखाएं हैं. उसमें ‘रसोई-विज्ञान’ से लेकर ‘अणु-विज्ञान’ तक सब शामिल है. और इसमें कोई दो राय

नहीं हो सकती है कि विज्ञान की तमाम शाखाओं ने मनुष्यजीवन की सुविधाओं को बढ़ाने में अद्भुत सफलता हासिल करी है. यहां तक कि विज्ञान के भरोसे अब मनुष्य चांद और मंगल पर बसने तक के सपने संजोने लगा है. खैर, विज्ञान की प्रगति के बाबत बहुत चर्चा की आवश्यकता नहीं, वह सिद्ध भी है तथा जगजाहिर भी. समझने लायक मुख्य बात तो यह है कि विज्ञान की इस प्रगति का मुख्य आधार उसकी सहिष्णु-सोच है. विज्ञान यह असहिष्णुता नहीं दिखाता कि हमारी प्रगति इस धर्म या देश के लोगों के लिए है तथा अन्यो के लिए नहीं. कहने का तात्पर्य यह कि वैज्ञानिक सोच हो या विज्ञान की खोजी वस्तुएं, दोनों पूरे विश्व के लिए है तथा सबको बराबरी पर उपलब्ध है. और चूंकि ब्रह्मांड का कण-कण सहिष्णु है, वह किसी देश या संप्रदाय के लिए अपने व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं करता; इसलिए सीधे तौरपर वैज्ञानिक प्रगति का मौका विश्व के सभी देशों को बराबरी पर उपलब्ध है. यहां के हवा-पानी हों या यहां के लोहा-लंगर हों, उनपर देश या संप्रदाय का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है. आप चाहे किसी भी संप्रदाय के हों, या फिर आप किसी भी देश से ताल्लुक रखते हों; इनमें से कोई आपके लिए अपना व्यवहार चेन्ज नहीं करते हैं. यहां के सूर्य, चांद-तारे हों या कुछ भी; ये कभी संप्रदायों को आधार मानकर अपना व्यवहार नहीं बदलते हैं. सूर्य कभी एक संप्रदाय के लोगों को ज्यादा गरमी व दूसरे को कम गरमी नहीं देता है. यहां तक कि भूकंप-सुनामी जैसी प्राकृतिक आपदाएं भी लपेटे में लेते वक्त संप्रदायों के भेद नहीं करती है. अर्थात् ये सारे संप्रदायों के भेद व गर्व आपके बनाए हुए हैं, प्रकृति को आपकी इस मूर्खता से कुछ लेना-देना नहीं है. अतः प्रकृति के तल पर तो जो भी मौके उपलब्ध हैं, वे हरहमेशा सबको बराबरी पर उपलब्ध हैं. और जाहिरी तौरपर विज्ञान भी इसमें अपवाद नहीं है. और यदि ऐसा है तो सवाल यह उठता है कि फिर क्यों दुनिया के चन्द मुल्क वैज्ञानिक प्रगति के शिखर पर बैठे हैं तथा बाकी देश वैज्ञानिक प्रगति के मामले में बुरी तरह से पिछड़े हुए हैं? सवाल जायज भी है तथा महत्वपूर्ण भी. परंतु इसका जवाब एक ही है कि जो देश विज्ञान के प्रति जितने सहिष्णु हैं, उन्होंने उतनी वैज्ञानिक प्रगति करी है. तथा जो देश विज्ञान के प्रति सहिष्णु नहीं हैं, वे उसी मात्रा में पिछड़े हुए हैं. यहां समझने लायक एक बात और भी है कि मुल्क की समृद्धि का उसकी वैज्ञानिक प्रगति से सीधा ताल्लुक है. और आप ही देख लो; जिस देश ने जितनी वैज्ञानिक प्रगति करी है, उतना ही वह समृद्ध है. और आज कौन समृद्ध है और कौन नहीं, यह कहने की मुझे आवश्यकता नहीं. निश्चित ही अमेरिका तथा यूरोपीय देशों ने वैज्ञानिक प्रगति के शिखर छूए हैं, तथा वे ही आज समृद्धि के शिखर पर भी विराजमान हैं. और यह स्पष्ट करने की जरूरत नहीं कि उनका विज्ञान के प्रति सहिष्णु होना ही उनकी इन दोनों उपलब्धियों के पीछे का प्रमुख कारण है.

यहां एक बात और स्पष्ट कर दूं कि वैज्ञानिक सहिष्णुता और समृद्धि का यह ताल्लुक आज का है, ऐसा भी नहीं है. मनुष्य जब से अस्तित्व में आया है तभी से उसकी समृद्धि का आधार वैज्ञानिक सहिष्णुता ही रही है. यदि महाभारत के युग में भारत सबसे

समृद्ध देश था तो सिर्फ इसलिए कि उस युग में उसने उस वक्त की वैज्ञानिक प्रगति के तमाम शिखर छूए थे. शानदार व द्रुतगति से चलनेवाले रथों से लेकर एक-से-एक श्रेष्ठ हथियार तक उस युग में मौजूद थे. क्यों, क्योंकि उस समय के लोग विज्ञान के प्रति सहिष्णु थे. लेकिन उसके बाद भारत की समृद्धि खोती चली गई. और कारण बताने की जरूरत नहीं; साफतौर पर उस युग के बाद का भारतीय मानस विज्ञान के प्रति सहिष्णुता खोता चला गया. उम्मीद है कि इतना समझाने के बाद तमाम भारतीयवासियों को अपनी समृद्धि खोने का कारण स्पष्ट हो गया होगा. खैर, जब इतनी बात चली है तो एकबात और कह दूं कि वैज्ञानिक सहिष्णुता के मामले में विश्व तीन स्तर पर बंटा हुआ है. निश्चित ही एक वे मुल्क हैं जो विज्ञान के प्रति पूरी तरह से सहिष्णु हैं, जैसे कि अमेरिका तथा यूरोपीय देश. दूसरे वे मुल्क हैं जो विज्ञान के प्रति करीब-करीब असहिष्णु हैं. इसमें अधिकांश मुस्लिम देश शामिल हैं. और जहां तक मेरी धरती यानी भारत का सवाल है, तो वह बीच में है. वह विज्ञान के प्रति असहिष्णु तो नहीं, पर हां, पूरी तरह से सहिष्णु भी नहीं है. और उसका अंतिम परिणाम यह हो रहा है कि भारत वैज्ञानिक प्रगति में रस भी लेता है, चार कदम बढ़ाता भी है; परंतु वैज्ञानिक प्रगति के मामले में गति नहीं पकड़ पाता है. हालांकि यह जरूर है कि आजादी के बाद हालात दिन-ब-दिन निरंतर सुधर रहे हैं. इस दिशा में यहां के भूतपूर्व युवा प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने टेक्नोलोजी के प्रति जबरदस्त सहिष्णुता दिखाई थी. और अच्छी बात यह है कि उसके बाद भारत ने विज्ञान के प्रति सहिष्णुता की अपनी गति को थमने नहीं दिया है. उसके पश्चात भारत ने चांद और मंगल तक अपने कदम फैलाए ही हैं. और इस मामले में एक बात और अच्छी है कि भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भी टेक्नोलोजी के प्रति बड़े सहिष्णु हैं. कम्युनिकेशन के सभी आधुनिक साधनों...फिर चाहे वह फेसबुक हो या ट्वीटर, ना सिर्फ वे स्वयं उसका खूब उपयोग करते हैं; बल्कि वे पूरे देश को आधुनिक टेक्नोलोजी अपनाने हेतु प्रोत्साहित भी करते हैं. हालांकि इन सबके बावजूद भारत की सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि यहां के शहरी युवाओं को छोड़कर पूरा देश आज भी टेक्नोलोजी के प्रति अच्छीखासी असहिष्णुता ही दर्शाता है. लेकिन उम्मीद है कि मेरी धरती के वर्तमान प्रधानमंत्री द्वारा किया जा रहा यह प्रयास, जल्द-से-जल्द तथा ज्यादा-से-ज्यादा प्रभाव दिखाएगा. और उसे दिखाना ही पड़ेगा, क्योंकि टेक्नोलोजी के प्रति सहिष्णु हुए बिना कोई भी देश प्रगति नहीं कर सकता है.

खैर, यहां एकबात और स्पष्ट कर दूं कि वैज्ञानिक सहिष्णुता की मुझे जो कुछ भी चर्चा करनी है वह अपने धरतीवासियों से ही करनी है. क्योंकि वे देश जो पहले से ही वैज्ञानिक सहिष्णुता के शिखर पर बैठे हैं, उन्हें तो मुझे कुछ कहना या सिखाना रह नहीं जाता है. ...उनसे तो उल्टा पूरे विश्व को सबक सीखना है. वहीं दूसरे वे देश जो टेक्नोलोजी के प्रति सहिष्णुता रखना ही नहीं चाहते, उनसे कुछ कहने का फायदा नहीं है. वे अपनी जरूरत का सामान दूसरे देशों से आयात करके ही खुश हैं. वे स्वयं कुछ बनाते ही नहीं. सो

इस विषय में चर्चा की संभावना सिर्फ भारतवासियों से ही है. और उन्हें हरहाल में यह समझना ही रहा कि वे अपनी वैज्ञानिक असहिष्णुता का कितना भुगत रहे हैं. उन्हें यह सोचना ही रहा कि इतना विशाल तथा वीरों से भरा देश इतने वर्षों तक गुलाम क्यों रहा? क्यों मुट्ठीभर लोगों ने आकर तुम्हें बार-बार गुलाम बनाया? अब आपके बुद्धिजीवियों द्वारा तो इसकी ठीक-ठीक एनालिसिस करने का सवाल ही नहीं है. और वे करेंगे तो भी एक या दूसरे को इल्जाम देंगे. वहीं जो कट्टर हैं, उनके द्वारा तो अपने स्वयं के दोष को देखने का प्रश्न ही नहीं उठता है. उन्हें तो ले-देकर हर बात हेतु दूसरे धर्मों तथा दूसरे देशों को जिम्मेदार ठहरा देना है. यही तो धार्मिक कट्टरता का कमाल है. हर प्रकार की धार्मिक कट्टरता अपने को इतना परफेक्ट मानकर चलती है कि उसे स्वयं में दोष दिखाई ही नहीं देता. और दुर्भाग्य से भारत में धार्मिक कट्टरपंथी सोच के लोग भी हैं, और उनकी अच्छीखासी आवाज भी है. लेकिन आवाज की बुलंदी से सत्य थोड़े ही बदल जाता है. यह कहा ही कैसे जा सकता है कि दोष सिर्फ गुलाम बनाने वाले का है? सच तो यह है कि दोष उसका ज्यादा है जो गुलाम बनने को मजबूर हुआ है. मेहरबानीकर मैं जो कह रहा हूँ उसपर थोड़ा गौर करना. और ऐसा सोचेंगे तो ही ठीक दिशा में एनालिसिस कर पाएंगे. और ठीक एनालिसिस कर पाएंगे तो ही दोबारा गुलाम होने से बच पाएंगे.

सो यहां-वहां की बात छोड़ मैं सीधे आपको आपकी गुलामी के पीछे का सही कारण बताने पर आता हूँ. क्योंकि गलती आपकी है और सजा एक देश होने के नाते आपके साथ-साथ मैंने भी भुगती है. और फिर यह क्यों भूलते हैं कि बदनामी तो पूरे विश्व में मेरी ही हुई है. कहते तो सभी यही हैं कि भारत को गुलाम बनाया. भारत सदियों से एक गुलाम देश रहा है. अब उन लोगों से क्या कहूं कि इसमें मेरी क्या गलती है? मैं तो अपने संतानों की गलती का भुगत रहा हूँ. सो मेहरबानीकर मैं आपको अपनी गुलामी के जो कारण समझाना चाह रहा हूँ वह अच्छे से समझ लेना, ताकि कम-से-कम भविष्य में कोई मुझे गुलामी की जंजीरों में न जकड़ पाए. और इस विषय में स्पष्ट कहूं तो सिवाय टेक्नोलोजी के प्रति असहिष्णुता के दूसरा कोई कारण आपकी गुलामी हेतु जवाबदार नहीं है. और वह कैसे, वह भी समझाता हूँ. सिकंदर ने तेज-तर्रार घोड़ों पर सवार होकर आप पर हमला किया और आप, पैदल तथा हाथियों के भरोसे उसका मुकाबला करने पहुंच गए. फिर बाबर तोप लेकर आया तो आप पुनः एकबार उसके सामने भी निरुत्तर हो गए. और कहने की जरूरत नहीं कि एक-से-एक आधुनिक हथियारों के सहारे अंग्रेजों ने आपको गुलाम बनाया. यानी टेक्नोलोजी के मामले में पिछड़े रहने के कारण मैं और आप दोनों सदियों तक गुलाम रहे. अतः मेहरबानीकर अब दूसरों को दोष देना बंद करके अपनी टेक्नोलोजी के प्रति व्याप्त असहिष्णुता को दूर करो. आप टेक्नोलोजी के मामले में हमेशा युग से दो-कदम पीछे ही रहे हैं. ...फिर आज का युग तो वैसे ही समृद्धि तथा प्रगति का युग है. और अन्यथा भी समृद्धि पाना तथा प्रगति करना मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है. मेरी दृष्टि में तो यह उसका

एकमात्र कर्तव्य भी है. अतः मेरा इतना ही कहना है कि आपलोग टेक्नोलोजी के प्रति ज्यादा सहिष्णु बनो तथा समृद्धि और प्रगति के नित नए शिखर छुओ.

खैर, अब मैं सीधे आपको टेक्नोलोजी के प्रति सहिष्णुता क्या होती है, यह समझाता हूँ. यह तो आप जानते ही होंगे कि पूरा जगत त्रिगुणी माया से घिरा हुआ है. यहां पर पदार्थ हों या मनुष्यों के व्यवहार, सब त्रिगुणी माया से प्रभावित हैं. और यह त्रिगुणी माया ही “जगत के अस्तित्व में आने का” एकमात्र कारण है. अतः इससे कोई बाकात नहीं. सूक्ष्मतम अणु भी न्यूट्रॉन, प्रोटॉन तथा इलेक्ट्रॉन से बना हुआ है. ऊर्जा भी तीन भागों में विभाजित है; नेगेटिव, पॉजिटिव तथा न्यूट्रल. ...बस वैसे ही टेक्नोलोजी के प्रति सहिष्णुता के भी तीन आयाम हैं. पहले वो हैं जो नई टेक्नोलोजी अपनाते तो हैं, परंतु अपनाने की इस प्रक्रिया में काफी वक्त लगाते हैं. भारत के अधिकांश बुजुर्ग इसी श्रेणी में आते हैं. दूसरी श्रेणी में वे लोग आते हैं जो नई टेक्नोलोजी आते ही उसे अपनाने को उत्सुक रहते हैं. भारत के अधिकांश शहरी युवाओं को इस श्रेणी में रखा जा सकता है. परंतु टेक्नोलोजी के प्रति सर्वाधिक सहिष्णु वे लोग हैं जो हमेशा नई-नई टेक्नोलोजी की खोज में लगे रहते हैं. और निश्चित ही भारत में ऐसे नई टेक्नोलोजी के खोजियों का पूरी तरह से अभाव है. यही कारण है कि भारत टेक्नोलोजी का आविष्कारक न होकर उसका एक बहुत बड़ा उपभोक्ता बनकर रह गया है. ऐसे में कहने की जरूरत नहीं कि जो देश टेक्नोलोजी के आविष्कारक हैं...वे ही समृद्ध हैं. क्योंकि वे टेक्नोलोजी के मामले में हमेशा जगत से दो कदम आगे रहते हैं. सो भारत को यदि समृद्ध होना है, तो उसे टेक्नोलोजी के उपभोक्ता से उसके आविष्कारक तक उठना होगा. और भारत की टेक्नोलोजी के प्रति वर्तमान सहिष्णुता को देखते हुए साफ तौरपर कहा जा सकता है कि यह एक लंबी यात्रा है.

अब यात्रा लंबी हो या छोटी, उपयोगी है...तो करनी भी पड़ेगी ही. और ऐसा कतई नहीं है कि भारत यह यात्रा नहीं कर सकता है. भारत ने कई अच्छे-अच्छे वैज्ञानिक दिए भी हैं तथा भारत में अच्छे वैज्ञानिक दिमाग मौजूद भी हैं. सॉफ्टवेयर से लेकर अंतरिक्ष तक में भारत का योगदान तारीफे-काबिल है ही. आप सबको याद ही होगा कि भारत ने सन 1975 में अपना पहला उपग्रह ‘आर्यभट्ट’ लांच किया था. यानी भारत ने आजादी के तुरंत बाद विज्ञान की राह पकड़ ली थी. और यह उसी का परिणाम था कि भारत ने वर्ष 2008 में चंद्रयान तथा सन 2014 में सफलतापूर्वक मंगलयान भी मंगल ग्रह के क्षेत्र में स्थापित किया. बड़ी बात यह है कि भारत मंगल तक पहुंचने वाला एशिया का प्रथम देश है. और अन्यथा भी भारत के अलावा तीन ही अन्य देशों ने मंगल तक पहुंचने में सफलता हासिल की है. कहने का तात्पर्य यह कि विज्ञान की दौड़ में भारत कहीं नहीं है, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता है. इसके अलावा भी कहूं तो भारत ने अनेक महान वैज्ञानिक भी दिए ही हैं. जिनमें सी.वी.रमन, सुब्रमण्यम चंद्रशेखर, जगदीश चंद्र बोस, सत्येंद्र बोस, होमी जहांगीर भाभा, विक्रम साराभाई, हर गोविन्द खुराना, श्रीनिवास रामानुजन, मेघनाद साहा,

चिंतामणि राव से लेकर डॉ. अब्दुल कलाम तक शामिल हैं। और इनमें से कड़ियों को अपनी खोजों हेतु 'नोबल प्राइज' भी मिल ही चुका है। अर्थात् भारत में विज्ञान भी है तथा वैज्ञानिक दिमाग भी; बात सिर्फ इतनी-सी है कि वह उस पैमाने पर नहीं है जिस पैमाने पर होना चाहिए। बाकी तो भारत सरकार के द्वारा सन 2008 में किए गए एक सर्वे को आधार माना जाए तो अमेरिका के नासा में करीब 36 प्रतिशत वैज्ञानिक भारतीय हैं। यह आंकड़ा ही भारतीय वैज्ञानिक प्रतिभा को दर्शाने हेतु काफी है। विज्ञान के क्षेत्र में डायरेक्ट न सही परंतु इन-डायरेक्ट तो भारत का अच्छाखासा योगदान है ही।

खैर, अब सवाल यह उठता है कि भारत में विज्ञान भी है, वैज्ञानिक प्रतिभाएं भी हैं; फिर विज्ञान जितना पनपना चाहिए उतना पनप क्यों नहीं रहा है? बस आगे हम इसी "क्यों" का जवाब खोजेंगे। यह जवाब खोजना इसलिए भी आवश्यक हो जाता है क्योंकि एक समय भारत विज्ञान के शिखर पर था। आप भी, और पूरा विश्व भी आश्चर्य कर रहा होगा कि भारत और विज्ञान के शिखर पर...? कई लोग यह भी कह सकते हैं कि यह तो आप बैठे-बिठाए खुद अपनी बेतुकी तारीफ पर उतर आए। जी नहीं, मुझ धरती को कोई अहंकार नहीं। और फिर झूठी और बेतुकी बात तो मैं कर ही नहीं सकता। और मैं जिस वैज्ञानिक शिखर की बात कर रहा हूँ वह आज से दो-पांच सौ वर्ष पुरानी बात नहीं है। मैं बात आज से पांच हजार वर्ष पूर्व की यानी महाभारत के युग की कर रहा हूँ। और मैं कह ही चुका हूँ कि उस युग ने आधुनिक रथ, गाड़े और हथियार ही नहीं खोजे थे, या उस युग ने शानदार भोजन और पोशाकें ही नहीं खोजी थी, बल्कि संगीत व नृत्य जैसी कलाओं से लेकर खेल-कूद तक के एक-से-एक आयाम भी उस युग ने छूए ही थे। और उस युग की सबसे बड़ी धरोहर उसका शरीर-विज्ञान का ज्ञान था। मनुष्य के शरीर की एक-से-एक बारीकियां उस युग ने जानी थी। मनुष्य शरीर की स्वस्थता कैसे बनाए रखी जाए? अस्वस्थ होने पर स्वस्थता फिर कैसे प्राप्त करी जाए? इन सारे सवालों के जवाब उस युग ने खोजे थे। शरीर की स्वस्थता बनाए रखने हेतु खोजे गए "योगा और प्राणायाम" भारत की सबसे बड़ी देन है। और उसे आज पूरे विश्व ने स्वीकारा ही है। इसी संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र ने 21 जून को "योग-दिवस" भी घोषित किया है। हालांकि उस युग का विज्ञान यहीं तक सीमित नहीं था। कटने और जलने से लेकर शरीर की अन्य सामान्य बीमारियों तक के इलाज उस युग ने खोजे थे। मनुष्य के खान-पान से उसके शरीर का सीधा ताल्लुक है... यह बात भी कृष्ण ने गीता में आज से पांच हजार वर्ष पूर्व कह दी थी। यहां तक कि किस खाने का शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है और किस बीमारी में क्या खाना उचित है, इसका भी पूरा ज्ञान उस युग को था। आप मानेंगे नहीं कि आज भी भारत में उस युग के ऐसे हजारों घरेलू उपचार आजमाए जाते हैं। और उनमें से कई सटीक परिणाम भी लाते हैं। अक्सर तो यह भी देखा गया है कि जहां आज का आधुनिक मेडिकल सायन्स हाथ ऊपर कर देता है वहां पर भी यह घरेलू उपचार कमाल दिखा जाते हैं।

हालांकि यह सब इतिहास की बात है और जीना यहां सबको वर्तमान में पड़ता है। और वर्तमान सत्य यही है कि भारत आज न तो विज्ञान के शिखर पर है, और ना ही समृद्धि के। निश्चित ही इसका एकमात्र कारण यही है कि आज का भारत विज्ञान के प्रति उतना सहिष्णु नहीं रह गया है जितना कि महाभारत के युग में था। यहां कई लोग कारण-अकारण पुराने से चिपके रहने को महानता मानते हैं। आज भी भारत में अनेक लोग उन पुराने उपचारों से प्रभावित हैं। और यही तो वैज्ञानिक असहिष्णुता है। कमाल यह है कि ये असहिष्णु लोग यह समझते ही नहीं कि ये सारे घरेलू उपचार इतिहास की बात हो गई है। वे तभी तक उपयोगी थे जबतक आज का आधुनिक मेडिकल सायन्स अस्तित्व में नहीं आया था। अब तो आज का मेडिकल सायन्स बहुत कुछ जानता है। ऐसे में जो घरेलू उपचार पूरी तरह से व्यर्थ सिद्ध हो गए हैं, या फिर जिनसे बेहतर इलाज खोज लिए गए हैं उन्हें इस युग में ढोना कहां की बुद्धिमानी है? माना कि भारत एक गरीब देश है, मानता हूँ कि यहां के गांव-गांव तक आज का मेडिकल सायन्स नहीं पहुंचा है, अतः तात्कालिक इलाज के तौरपर वहां इन घरेलू उपचारों का एक हदतक आजमाया जाना जायज भी है; परंतु जहां आधुनिक मेडिकल सायन्स उपलब्ध है वहां भी घरेलू उपचार...? यह तो कमाल है। भारत में यह कमाल होता है और वह भी गर्व से, हमारा पुराना महान ज्ञान.... अरे भाई, वह महान था... परंतु जब आज का विज्ञान काफी आगे बढ़ गया है तो फिर नए के प्रति ऐसी असहिष्णुता क्यों? बस नए के प्रति असहिष्णुता की यह जो सोच है उसी ने भारत की वैज्ञानिक प्रगति को बांधा हुआ है। यहां तक कि यहां ऐसे लोगों की भी तादाद कम नहीं है जो भयानक बीमारियों के उपचार हेतु भी “ज्योतिष से लेकर झाड़-फूंक तक” ना जाने किन-किन बातों के आसरे लेते हैं। अब यह तो आज के वैज्ञानिक युग में असहिष्णुता की हद हो गई। सच कहूं तो अपनी धार्मिक और सांस्कृतिक सहिष्णुताओं के बलपर जिस भारत को विश्व के स्वस्थ देशों में होना चाहिए था, वही भारत आज मात्र अपनी वैज्ञानिक असहिष्णुता के कारण विश्व के अस्वस्थ देशों की सूची में शामिल है। अतः मैं भारतवासियों से निवेदन करता हूँ कि मेहरबानीकर वैज्ञानिक सहिष्णुता जगाओ। विज्ञान की तमाम प्रगतियों को गले लगा लो। पुराना जो व्यर्थ सिद्ध हो चुका है, उसे छोड़ो। वरना प्रगति से तो पहले ही गए हुए हो, स्वास्थ्य से भी हाथ धो बैठोगे। अब तमाम झूठे गर्व बंद करो। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत का इतिहास “स्वर्णिम” था। परंतु आप लोगों को जीना आज में है। और आज के युग में जीने तथा प्रगति करने हेतु पूरे देश को विज्ञान के प्रति सहिष्णु होना अति आवश्यक है। अब यह कहना बंद ही करो कि हमारे राम जी के पास हवाईजहाज था। वह था या नहीं था, यह इतिहास की बात है। आज का सत्य यह है कि आज आपको राइट-ब्रदर्स के खोजे हवाईजहाजों में ही घूमना पड़ रहा है। आज का सत्य यह भी है कि आप लोगों को हवाईजहाज विदेशों से आयात करने पड़ रहे हैं। और जो वर्तमान का सत्य है वही एकमात्र सत्य है। ...और उसे अपनाना तथा उसमें जीना ही एकमात्र सच्ची सहिष्णुता है।

खैर, अब आप भारत में विज्ञान के प्रति व्याप्त असहिष्णुता का प्रमुख कारण समझ गए होंगे. जी हां, पुरानी बातों पर झूठा गर्व करना तथा बेहतर मिलने पर भी पुराने से चिपके रहने की जो सोच है; वही भारत की वैज्ञानिक प्रगति में सबसे बड़ी बाधा है. अब यह तो सोच है, और सोच का इलाज सिवाय कि सोच में सुधार लाने के और कुछ नहीं हो सकता. अतः आप भी समझें और सरकार भी, क्योंकि “प्रजा की सोच को वैज्ञानिक करना” यह सरकार का दायित्व है. पुरानी व्यर्थ की सोच और मान्यताओं के झंडे उठानेवालों को नियंत्रित करना, सरकार का काम है. और मैं दावे से कहता हूँ कि जबतक यह कार्य ठीक से नहीं होता, भारत कभी विज्ञान के प्रति पूरी तरह से सहिष्णु नहीं होनेवाला. और मेरी बात नोट कर लो कि जबतक आप विज्ञान के प्रति पूर्ण सहिष्णु नहीं होंगे तबतक आप दूसरे लाख उपाय क्यों न कर लें, प्रगति के शिखर कभी नहीं चूम पाएंगे.

अब सोच में परिवर्तन तो आएगा तब आएगा. और सरकार भी उसपर पुरजोर मेहनत करेगी...तब करेगी. अभी तो मैं वैज्ञानिक शिखर छूने हेतु जो एक और कदम उठाना आवश्यक है, उसकी चर्चा करता हूँ. और वह है बच्चों की परवरिश को लेकर. मुझे बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि परिवारवाले हों या स्कूल के टीचर, दोनों को बच्चों की सायकोलोजी का कुछ पता नहीं है. दोनों अपनी सुविधा हेतु शांत व जी-हुजर बच्चों को ना सिर्फ पसंद करते हैं, बल्कि उन्हें प्रोत्साहन भी देते हैं. जबकि शांत और जी-हुजूर तो बूढ़े भी अच्छे नहीं लगते हैं. और कम-से-कम बच्चे तो हरहाल में नटखट व उपद्रवी ही अच्छे होते हैं. ध्यान से समझें तो बच्चों के उपद्रव सिवाय कुछ नया या मनपसंद करने की जिद के और कुछ नहीं होते. और नया करने की उत्सुकता “वैज्ञानिक-बुद्धि” होने का सबूत है. कायदे से तो उन्हें हरहाल में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए. ..लेकिन होता उल्टा है. उन्हें प्रोत्साहित करने की बजाए हतोत्साहित किया जाता है, सजाएं दी जाती हैं, स्कूलों में टीचरों द्वारा उनका अपमान किया जाता है; बस इस प्रकार की गलत परवरिश के कारण बेचारा क्रिएटिव बच्चा अपनी सारी क्रिएटिविटी बचपन में ही खो देता है. और सच कहूं तो यह सब परिवारवालों तथा शिक्षकों द्वारा अपनी सुविधा की ओर देखने का परिणाम है. ...क्योंकि उपद्रवी बच्चों के पीछे बड़ी दौड़ा-भागी करनी पड़ती है. सत्य तो यही है कि “बच्चों के भविष्य बनाने हेतु जीने का दावा करनेवाले” शिक्षक हों या परिवारवाले; दोनों को बच्चों के भविष्य से कहीं ज्यादा अपने आराम की ही पड़ी होती है.

मजा तो यह है कि कोई इतिहास उठाकर भी नहीं देखता है. अब इतिहास कोई पढ़ने या याद करने का विषय थोड़े ही है. इतिहास के पन्ने तो मनुष्य को जीवन के सबक सिखाते हैं. इतिहास का महत्व ही इतना है कि मनुष्य को उसमें से उन अच्छी बातों को अपनाते चले जाना चाहिए जिनके परिणाम श्रेष्ठ आए हैं. ठीक वैसे ही मनुष्य को इतिहास के खराब पन्नों के अनुभवों से भी सबक लेना चाहिए. ...यही इतिहास का महत्व है. इतिहास से सबक सीख लिए... फिर इतिहास में शून्य आए तो भी फिक्र नहीं. क्योंकि यह

ध्यान रख ही लेना कि जीवन इतिहास से सबक लेनेवालों का बनता है, इतिहास में अक्ल नंबर लानेवालों का नहीं. और सारे सफल मनुष्यों का इतिहास चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा है कि सफलता उन्होंने ही पाई है जो बचपन में उपद्रवी थे. महान एडीसन का ही उदाहरण लो; उन्हें बचपन से नए-नए प्रयोग करने का ऐसा तो भूत सवार था कि एकबार उन्होंने उड़ाने हेतु अपने दोस्त माइकल को कोई केमिकल पिला दिया. ...बेचारा माइकल उड़ तो नहीं पाया परंतु बेहोश अवश्य हो गया. यहां तक कि पन्द्रह वर्ष की उम्र में प्रयोग के चक्कर में एडीसन से ट्रेन में ही आग लग गई. तो क्या उसके माता-पिता ने उसे हतोत्साहित किया या उसका अपमान किया? नहीं, उल्टा मां नैन्सी से उसे प्रयोगों हेतु हमेशा उत्साह ही मिलता रहा. और शिक्षकों को तो उसने अपने को अपमानित करने का मौका ही नहीं दिया. दूसरी कक्षा के बाद वह कभी स्कूल ही नहीं गया. वैसे ही एपल के निर्माता स्टीव जॉब्स बचपन में क्या कम उपद्रवी थे? चालू क्लास में ना सिर्फ उन्होंने टीचर पर पटाखा छोड़ा था, बल्कि एकबार तो मारे गुस्से के अपनी क्लास-टीचर पर जिंदा सांप तक छोड़ दिया था. सो मेहरबानीकर बच्चों की सायकोलोजी नहीं समझते हो तो इतिहास से सबक लो, परंतु बच्चों के निर्दोष तथा क्रिएटिव उपद्रवों पर अकारण की लगाम मत कसो.

खैर, उपरोक्त तमाम सबक बच्चों के माता-पिता व शिक्षकों के लिए हैं. अब एक बात सरकार से; सरकार को शिक्षा में आमूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है. भारत जैसे विशाल और गरीब देश में “सिर्फ ग्रेजुएट होने के लिए पढ़ना” यहां की महान युवा-ऊर्जा को व्यर्थ करना है. यहां डिग्री की नहीं, केरिअर की आवश्यकता है. और केरिअर डिग्री से नहीं, स्किल से बनता है. अतः दसवीं के बाद बच्चों को सीधे उनकी रुचि के क्षेत्र की स्किल-बेस्ड शिक्षा उपलब्ध करवाना चाहिए. यह शिक्षा रसोई बनाने से लेकर मैनेजमेन्ट तक किसी भी क्षेत्र की हो सकती है. हां, जिन्हें डॉक्टर, इंजीनियर, चार्टड एकाउन्टेन्ट या ऐसा ही कुछ बनना है... उन्हें उच्च शिक्षा में अवश्य जाना चाहिए. दूसरी तरफ भारतीय प्रतिभाओं को यहीं पर अच्छे मौके उपलब्ध करवाना भी सरकार का कर्तव्य है. यदि नासा में बड़ी तादाद में भारतीय वैज्ञानिक हैं तो सरकार को उसके कारणों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए. सरकार को अपनी यह नाकामी स्वीकारनी ही पड़ेगी कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी वह देश के युवा को वैज्ञानिक बनने हेतु उचित वातावरण उपलब्ध नहीं करवा पाई है. जबकि आज की तारीख में किसी भी देश की यह सबसे बड़ी जरूरत है. ठीक वैसे ही सरकार को यहां के युवाओं को नए-नए व्यवसाय करने हेतु भी प्रोत्साहित करना चाहिए. उस हेतु स्किल की परीक्षा में पास युवाओं को लोन उपलब्ध कराई जानी चाहिए. भारत सरकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि यह एक नौकरी प्रधान देश बनकर न रह जाए. व्यवसाय फैलाने व बढ़ाने की जवाबदारी भी सरकार की ही है. साथ ही यह जिम्मेवारी भी सरकार की ही है कि देश “विदेशी सामानों का उपभोक्ता” बनने की बजाए, बेहतर सामानों का स्वयं निर्माता बन जाए. और यह सब कार्य युवा ही कर सकते हैं. अतः देश के युवाओं

के लिए स्किल-बेस्ड शिक्षा प्रारंभ करना एवं तत्पश्चात उन्हें व्यवसाय करने हेतु लोन उपलब्ध करवाना, दोनों जितनी जल्दी अमल में आ जाए; बेहतर है. और फिर युवाओं को नई व बड़ी राह पर लगाने हेतु बैंकों के कुछ पैसे डूब भी जाते हैं तो क्या, बड़े-बड़े उद्योगपतियों को लोन देकर बैंकों का अबतक कितना पैसा डूब चुका है? सो मेरा यह सुझाव ध्यान में रख लेना कि शिक्षा में आमूल परिवर्तन कर युवाओं को नए-नए व्यवसाय हेतु वातावरण उपलब्ध करवाए बगैर भारत की तकदीर नहीं बदलनेवाली है. ठीक वैसे ही यदि सरकार वैज्ञानिक बुद्धि रखनेवाले युवाओं को सायन्टिस्ट बनने हेतु उचित वातावरण प्रदान करवा पाती है, तो देश निश्चित ही एक बड़ी वैज्ञानिक शक्ति के रूप में उभर सकता है. क्योंकि भारतीय युवाओं की प्रतिभा तो हमेशा से बेजोड़ रही है. यहां यह और स्पष्ट कर दूं कि ये सारे सुझाव मेरे धरतीवासियों के लिए ही नहीं हैं, बल्कि पूरे विश्व को इन पर गौर करने की आवश्यकता है. मैं न तो स्वार्थी हूँ और ना ही अहंकारी. मुझे तो मनुष्य-मात्र की प्रगति में रस है. अतः मेरे सुझावों को अपनाकर दुनिया का कोई भी देश प्रगति के शिखर छूए; मुझे तो उससे भी उतनी ही तृप्ति मिलनी है जितनी कि भारत के द्वारा प्रगति के शिखर को छूने से मिलनी है. क्योंकि अंत में तो मुझे मनुष्यों से प्रेम है, सीमाओं से नहीं....

मनुष्य का असली कमाल तो यह है कि वह शौकों के प्रति भी असहिष्णु है. अब शौकों के प्रति भी असहिष्णुता...? यह तो निश्चित ही कमाल है! और मनुष्य का यह कमाल पूरी तरह से मेरी समझ के बाहर है. मैं जीवन को लाखों वर्षों से देखता आ रहा हूँ. मैं जानता हूँ कि जीवन क्या है? और आप...? आप जीने के बावजूद नहीं जानते कि जीवन

क्या है. सो मैं अपने अनुभवों के आधार पर आपको “जीवन क्या है” यह समझाने की कोशिश करता हूँ. जीवन...कुल-मिलाकर तीन भागों में विभाजित है. फिर वह जीवन चाहे पशु-पक्षी का हो या मनुष्य का. और जीवन का पहला तथा महत्वपूर्ण हिस्सा है, कार्य करना. बिना कार्य किए यहां कोई भी जीव अपने को बचा नहीं सकता है. छोटी-सी चींटी को भी यहां ना सिर्फ दाना खोजने निकलना पड़ता है, बल्कि वह दाना उसे स्वयं चुगना भी पड़ता है. वैसे ही जंगल के शेर को भी शिकार करना ही पड़ता है. ऐसे में मनुष्य के बिना कर्म किए रह पाने के किसी उपाय का सवाल ही नहीं है. हां, यह कर्म के क्षेत्र अलग-अलग अवश्य हो सकते हैं. क्योंकि व्यवसाय, नौकरी या ऑफिस में किए जाने वाले कार्य ही कर्म नहीं हैं, बल्कि पढ़ने, घर सम्भालने से लेकर रसोई बनाने तक के तमाम कार्य भी ‘कर्म’ में ही आते हैं. और यह जीवन का परम नियम है कि यहां औसतन आठ घंटे कर्म किए बगैर कोई मनुष्य सम्मानपूर्वक का बेहतर जीवन नहीं गुजार सकता है. वैसे ही मनुष्य के जीवन का दूसरा हिस्सा है “आराम”. यहां का कोई जीव चौबीसों घंटे कर्म नहीं कर सकता है. और जिन्हें आप भगवान कहते हैं वे भी इससे आजाद नहीं हैं. क्योंकि नियम हमेशा नियम होता है; वह बिना पक्षपात के छोटी-सी चींटी से लेकर महानतम लोगों तक सब पर लागू होता ही है. सो... तकरीबन आठ घंटे यहां मनुष्य को सोना पड़ता है. हां, मनुष्य की शारीरिक तथा मानसिक बनावट के आधार पर मनुष्य के नींद की आवश्यकता एक-दो घंटे इधर-उधर हो सकती है. ...और जीवन का तीसरा तथा अंतिम पहलू है “जीना”. यह सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है. क्योंकि मनुष्य यहां सिर्फ जीने के मकसद से आया है. मनुष्य ही क्यों, कोई भी जीव यहां सिर्फ जीने के मकसद से ही आता है. आपने गौर किया ही होगा कि जानवर तक यहां जीने में रुचि दिखाते हैं. बंदर भी आपस में उछल-कूद कर जीने का मजा लेते ही हैं. मछलियां भी तैरने का मजा कहां छोड़ती हैं? वहीं पक्षी अकेले भी तथा साथ में मिलकर भी, उड़ने का मजा लेते ही रहते हैं. कोयल कुहू-कुहू करके तो मोर क्रीड़ा करके जीने का मजा लेता है. फर्क सिर्फ इतना है कि वे जानवर हैं और आप मनुष्य हैं. उनके कर्म डिफाइन्ड और लिमिटेड हैं, जबकि आपके पास जीने हेतु अनंत ऑप्शन्स उपलब्ध हैं. लेकिन दुर्भाग्य से मनुष्य तथा जानवरों का यह भेद भी बहुत कम लोग समझते हैं. सच कहूं तो यहां ज्ञान के दावे होते तथा ज्ञान की बातें करते तो मैंने बहुतों को देखा है, परंतु जिसे वास्तव में ‘ज्ञान’ कहा जा सके...ऐसी बातें ना के बराबर देखी-सुनी है.

निश्चित ही आप कहेंगे कि क्या बात करते हो? मनुष्य को अपने और जानवरों का फर्क तक नहीं मालूम? क्या हम इतने अज्ञानी हैं? क्या जगत में ज्ञान की बातें ही उपलब्ध नहीं? क्या यह जो इतने संप्रदाय हैं, हर संप्रदाय के इतने जो शास्त्र हैं; क्या यह सब ज्ञान से परे हैं? अरे, इतने बेचैन क्यों होते हो...? उसपर भी आऊंगा, पर थोड़ा सब्र तो करो. पहले मनुष्यों और जानवरों का फर्क तो अच्छे से समझ लो. माफ करना, मुझे यह बात समझाने हेतु कड़क भाषा का प्रयोग करना ही पड़े ऐसा है. क्योंकि भ्रम युगों पुराना है,

अतः जोर का एक झटका देना ही पड़े ऐसा है. सो, मेहरबानीकर सबसे पहले आप मनुष्य हैं जानवर नहीं, इतना दृढ़तापूर्वक जान लो. और दोनों का फर्क क्या है, यह मैं आपको समझा ही चुका हूँ. समझ में न आया हो तो फिर एकबार सरल भाषा में समझाए देता हूँ. जानवरों के कर्म और शौक दोनों डिफाइन्ड हैं, अर्थात् दोनों की लिमिटेड है. शेर शाकाहारी नहीं हो सकता और गाय शिकार नहीं कर सकती. मछलियां उड़ नहीं सकती और बंदर पानी में जीवन नहीं गुजार सकते हैं. कौआ 'कोयल' के सुर में गा नहीं सकता है और उल्लू 'मोर' की तरह नाच नहीं सकता है. ...लेकिन दूसरी तरफ मनुष्य को कोई सायकोलोजिकल बंधन नहीं है. वह ना सिर्फ हजारों कर्म कर सकता है, बल्कि लाखों तरह के शौक भी पाल सकता है. कुदरत की ओर से मनुष्य ना सिर्फ सायकोलोजिकली पूरी तरह से स्वतंत्र है, बल्कि वह अनगिनत संभावनाओं से भरा भी पड़ा है. ...और यही मनुष्य की गरिमा है. और इस एकमात्र कारण से वह ना सिर्फ कुदरत की सबसे हसीन बल्कि सबसे अंतिम रचना भी है. मनुष्य से ऊपर की कोई रचना कुदरत में संभव नहीं. और चूंकि आप मनुष्य हैं, इसीलिए अनमोल हैं. तथा वह भी इस कदर कि इस पृथ्वी तक का मूल्य एक आप लोगों के ही कारण है. ...वरना तो पृथ्वी से विशाल लाखों ग्रह हैं इस ब्रह्मांड में, लेकिन चूंकि वहां जीवन नहीं है...इसलिए उनका पृथ्वी जितना महत्व भी नहीं है. अब समझो सिर्फ इतना कि जब पृथ्वी का महत्व आप लोगों के कारण है, तो आपलोग स्वयं कितने महत्वपूर्ण हुए? और यह "अपने इस महत्व को पहचानने" को ही मैं ज्ञान कहता हूँ. स्वयं की अनलिमिटेड सायकोलोजिकल संभावनाओं को समझने को ही मैं बुद्धिमत्ता कहता हूँ. और मैं इतना ही कह रहा हूँ कि ज्ञान के दावे करनेवाले बहुत हैं, परंतु वास्तविक ज्ञान बहुत कम उपलब्ध है. और यही ज्ञान मैं आपको आज देना चाहता हूँ.

आप जरा सोचें कि यदि इतना ही सच्चा ज्ञान उपलब्ध है, तो फिर मनुष्य युगों से इतना दुःखी और असफल क्यों है? इसका सीधा एकमात्र तारण यही है कि आपके पास उपयोगी ज्ञान का अभाव है. और जिसे भी आप ज्ञान कहते हैं वे सब आपको अपनी अनंत सायकोलोजिकल संभावनाओं से इन्कार सिखाते हैं. और यह स्पष्ट समझ लेना कि जो कोई अपने में छिपी अनंत सायकोलोजिकल संभावनाओं का अस्वीकार करता है, वह अपने को मनुष्य न मानकर जानवर ही समझता है. बात कड़वी है, परंतु क्या करूं? ...सत्य तो कड़वा होता ही है. और सत्य यही है कि स्वयं को मनुष्य न मानना स्वयं के प्रति असहिष्णुता है. और जो अपने स्वयं के प्रति असहिष्णु है, वह सुखी और सफल हो ही कैसे सकता है? निश्चित ही मेरी इस बात से आप बुरी तरह चौंक जाएंगे. कई लोग क्रोधित भी हो सकते हैं कि क्या हम अपने प्रति असहिष्णु हैं? क्या हम अपने को इन्सान नहीं मानते हैं? क्या हमें जानवरों तथा इन्सानों का फर्क नहीं मालूम है? क्या ये सारे संप्रदाय और शास्त्र तक हमें अपने प्रति असहिष्णुता ही सिखाते हैं? अब सत्य तो यही है, और इसका सबूत युगों से चला आ रहा आप लोगों का जीवन है. अस्तित्व में आने के लाखों वर्ष

बाद भी आप लोग आजतक सुख और सफलता पाने हेतु दर-दर भटक रहे हैं. बमुश्किल हजार में कोई एक सुखी और सफल हो पा रहा है; और वह भी वो ही जो स्वयं के प्रति सहिष्णु है.

चलो, जीवन क्या है यह मैं आपको एक अलग तरीके से विस्तारपूर्वक फिर से समझाने की कोशिश करता हूँ. क्योंकि यह बात ना सिर्फ समझना जरूरी है, बल्कि इसे जहन में उतारना भी आवश्यक है. मैं दावे से कहता हूँ कि यह बात समझे बगैर मनुष्य का सामूहिक विकास कभी नहीं होने वाला. और इसीलिए मैं इस बात पर इतना जोर दे रहा हूँ. ...तो यह बताओ कि मनुष्य की लाइफ-लाइन क्या है? निश्चित ही कर्म. बिना कर्म किए उसके जीवन का गुजारा नहीं हो सकता है. अब कर्म मनुष्य कब कर पाएगा? जब उसका शरीर साथ देगा. और शरीर साथ कब देगा? जब उसकी नींद पूरी हुई होगी. और चूंकि यह शरीर की बात है, इसलिए इसे हरकोई समझता है. शायद ही कोई ऐसा मनुष्य है जो अपनी नींद के प्रति सहिष्णु नहीं है. ऐसा मनुष्य खोजना मुश्किल है जो अपनी नींद पूरी करने की कोशिश न करता हो. और इतनी सी बात तो सभी ज्ञान का दावा करने वाले भी समझते हैं. कोई यहां कभी मनुष्य को सोने हेतु ना तो टोक रहा है, और ना ही कोई यहां उसके सोने का विरोध कर रहा है. कहने का तात्पर्य यह कि मनुष्य की शारीरिक जरूरतों का ज्ञान व ध्यान यहां सभी को है. अतः उसपर ना तो विवाद है, और ना ही उस बात के शास्त्र हैं. यानी “मनुष्य-जीवन” के इस एक-तिहाई हिस्से पर कोई विवाद नहीं है.

अब थोड़ा समझो, आपके सारे ज्ञान और शास्त्र क्या हैं? उनमें इतने आपसी भेद क्यों है? उनमें आपसी विरोधाभास क्यों है? निश्चित ही मनुष्यों के बचे हुए सोलह घंटों के लिए. यानी कर्म और शौक को लेकर. जिसे भी आप ज्ञान कहते हैं वह सिवाय इसके और क्या है कि आपको क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए. आपको कौन-से शौक पालने चाहिए और कौन-से नहीं? और आप लोग भी तीसरी तो किसी बात को ज्ञान कहते नहीं है! और गौर से समझेंगे तो आपके जितने भी सांप्रदायिक शास्त्र हैं वे सभी...यही दो बातें बताने में लगे हुए हैं. मजा यह कि जो कर्म या शौक एक शास्त्र में न करने की सूची में शामिल है, उसे ही दूसरे शास्त्र में महान माना गया है. अब पहला सवाल यह कि मनुष्य एक और नियम अलग-अलग? यह तो हो ही नहीं सकता. और इसीलिए यह अज्ञान है. तो फिर ज्ञान क्या है? सीधी बात है “एक मनुष्य - एक नियम” ज्ञान है. उदाहरण के तौर पर कहूं तो सभी आंख से देखेंगे, यह जीवन का नियम है. और आपके सांप्रदायिक शास्त्र इस दावे में लगे हैं कि जो कान से देखे वह महान और नाक से देखे वह पापी. और मजा यह कि कान और नाक से कोई देख नहीं रहा, देख सभी आंख से रहे हैं. यहां एकबात और अच्छे से समझ लेना कि आपके सभी शास्त्र ज्ञानियों ने लिखे हैं, ऐसा नहीं है. सत्य तो यह है कि ज्ञानियों ने शास्त्र लिखे ही नहीं है. न क्राइस्ट ने बाइबल लिखी है और ना ही कृष्ण ने वेद लिखे हैं. और ना ही बौद्ध-शास्त्र बुद्ध ने लिखे हैं. और फिर यह तमाम शास्त्र हजार-पांच

हजार वर्ष पुराने हैं. जीवन इनसे लाखों वर्ष पहले भी था. ...और शास्त्र उन लोगों ने भी लिखे ही थे. कहने का तात्पर्य यह कि यहां हर युग अपने शास्त्र लिखता ही रहा है, परंतु उनसे कोई विशेष सकारात्मक परिणाम कभी नहीं आए हैं.

दरअसल सत्य-ज्ञान को लंबे-चौड़े शास्त्रों की जरूरत ही नहीं है. संसार के किसी भी सत्य में भेद और विरोधाभास होता ही नहीं है. और ऐसे ही महान सत्यों में से एक सत्य यह भी है कि जानवर एक सायकोलोजिकल लिमिटेशन में कैद है, जबकि मनुष्य अनंत सायकोलोजिकल संभावनाओं से भरा पड़ा है. और जब ऐसा है तो यहां हर एक मनुष्य के कर्म व शौक भिन्न-भिन्न होने ही हैं. ऐसे में एक शास्त्र या एक नियम हरेक पर लागू नहीं किया जा सकता है. और जो कोई यह कोशिश कर रहा है वह सिवाय अज्ञान के और कुछ नहीं फैला रहा है. वह ले-देकर ज्ञान के नाम पर मनुष्य की परम संभावनाओं के प्रति असहिष्णुता ही दिखा रहा है. ठीक वैसे ही जो कोई मनुष्य स्वयं अपने को किसी दूसरों के नियमों के दायरे में बांध रहा है वह अपनी कब्र खुद खोद रहा है. अतः यह सत्य हमेशा के लिए जहन में बिठा लेना कि अपने कर्म और अपने शौक यहां सिर्फ मनुष्य स्वयं तय कर सकता है, दूसरा कोई नहीं. न परिवार, न मित्र, न शास्त्र, न संप्रदाय और ना ही समाज. और बावजूद इसके जो भी यह कोशिश कर रहा है, वह मनुष्य के प्रति सिवाय असहिष्णुता के और कुछ नहीं दर्शा रहा है. कुल-मिलाकर कहूं तो जो कोई भी मनुष्य के कर्म तथा शौकों की अनंत संभावनाओं से इन्कार कर रहा है, वह असहिष्णु है. जो कोई भी मनुष्य को मिली परम स्वतंत्रता से इन्कार कर रहा है, वह असहिष्णु है. ऐसे में कहने की जरूरत नहीं कि जो इस प्रकार के किसी भी बंधन में आ रहा है, वह स्वयं के प्रति असहिष्णु है. ...अब जो अपने स्वयं के प्रति असहिष्णु है उसे कम-से-कम कभी सुखी और सफल होने की तमन्ना नहीं करनी चाहिए.

उम्मीद है कि उपरोक्त बात अब आपकी समझ में आ गई होगी. सो, मैं अब सीधे शौकों के प्रति बरती जानेवाली असहिष्णुता की चर्चा प्रारंभ करता हूँ. और दुःख की बात यह है कि मनुष्यों के शौकों के प्रति असहिष्णुता दिखाने से दुनिया का कोई देश अछूता नहीं है. हां, यह असहिष्णुता कम या ज्यादा हो सकती है; परंतु बिना अपवाद के दुनिया के सभी देश मनुष्यों के शौकों के प्रति असहिष्णु हैं ही. और उसकी बुनियाद में तीन ही चीजें हैं; सांप्रदायिक शास्त्र, विभाजित समाज और मनुष्य के स्वयं के चाहनेवाले. इन तीनों का बिना अपवाद के मनुष्य की परम-स्वतंत्रता से इन्कार है. इनकी जिद्द भी होती है और दबाव भी कि मनुष्य यह शौक पाले और यह शौक न पाले. कमाल है! इनमें से अधिकांशों को तो यह भी नहीं मालूम कि शौक होते क्या हैं? अभी मैं शौक की वास्तविक परिभाषा पूछ लूं तो सभी भाग जाएंगे. खैर, मैं बताता हूँ कि शौक क्या है? और यह समझने हेतु पहले कर्म क्या है...यह समझना जरूरी है. यह तो मैं समझा ही चुका हूँ कि 'कर्म' मनुष्य-जीवन की लाइफ-लाइन है. बिना कर्म किए यहां कोई बेहतर जीवन गुजारने की कल्पना नहीं कर

सकता है. सीधी भाषा में कहूं तो अपने जीवन की जरूरतों को पूरा करने हेतु किए जाने वाले कार्यों का नाम 'कर्म' है. और कर्म मनुष्य दो प्रकार से करता है, एक शारीरिक और दूसरा मानसिक. अब मनुष्य का शरीर हो या उसका मानस, दोनों एक सीमा के बाद थकते ही हैं. मनुष्य के शरीर और मन दोनों को एक सीमा के बाद आराम की जरूरत पड़ती ही है. शरीर की थकान मिटाने हेतु मनुष्य का सोना जरूरी है. और जहां तक मानसिक थकान की बात है तो उसे मिटाने हेतु मनुष्य को मनोरंजन की आवश्यकता पड़ती है. और इस मनोरंजन की पूर्ति हेतु मनुष्य अपनी सायकोलोजी अनुसार शौक पालता है. अब कौन, कहां और कितना सोना चाहता है, यह मनुष्य की आदत तथा परिस्थितियों पर निर्भर है. यह कतई नहीं है कि डनलप पर सोना खराब है तथा जमीन पर सोना महानता है. ऐसी बातें असहिष्णु लोग करते हैं. सवाल सिर्फ गहरी नींद का है, ताकि मनुष्य का शरीर पुनः कर्म हेतु तैयार हो जाए. ...बस वैसा ही मनुष्य के शौकों का है. उसमें भी यह नहीं कहा जा सकता कि भजन अच्छा और भोजन बुरा. सवाल इतना ही है कि जो शौक आपको मानसिक तौरपर तरोताजा कर दे, वह अच्छा. जो आपको मानसिक तौर पर कर्म हेतु तैयार कर दे, वह शौक श्रेष्ठ. और फिर दुनियाभर के सांप्रदायिक शास्त्र जो ज्ञान का दावा करते हैं, वे इतना भी नहीं जानते कि भजन शौक है, कर्म नहीं. लेकिन दुर्भाग्य से इन शास्त्रवादियों ने अज्ञानतावश भजन को 'कर्म' मान लिया है. यही कारण है कि इन्होंने भजन को आजीविका बना लिया है. अतः वे भी और आप भी यह समझ लें कि आजीविका का साधन कर्म में आता है, शौक में नहीं. और आप ही देख लो; आज पूरी दुनिया में बिना अपवाद के पूजा-पाठ एक बहुत बड़ा व्यवसाय बनकर उभरा है. निश्चित ही यह गलत तथा नॉन-प्रोडक्टिव है. इससे राष्ट्र की प्रगति होती नहीं, अटकती है. अब जिन देशों को प्रगति करनी ही नहीं, वे भजन को कर्म माने... तो मुझे कोई ऐतराज नहीं. वहीं वे देश जो प्रगति कर चुके हैं, वे भजन को कर्म मान भी लें... तो भी उससे उनकी अर्थव्यवस्था पर कोई फर्क नहीं पड़ना है. उन्हें भजन के शौक को भी 'कर्म' के तौरपर लेना पुरता ही है. परंतु भारत, जो कि प्रगति करना चाहता है; उसे सावधान हो जाना चाहिए. उसे यह समझ ही लेना चाहिए कि भजन शौक हो सकता है-आजीविका का साधन कतई नहीं. आज भजन को कर्म मानकर करीब दो करोड़ लोग भारत में अपना जीवन चला रहे हैं. यदि ये लोग भजन को शौक मानकर आजीविका हेतु खेती भी करने लग जाएं तो प्याज पांच रुपये किलो व तमाम दालें 20 रुपये किलो में यहां उपलब्ध हो सकती हैं. फिर बचे हुए समय खेलें-कूदें या भजन करें, कौन टोकता है? "समरथ के नहीं दोष गुसाई" की तर्ज पर यह समझ लेना कि प्रगति कर चुके राष्ट्र गलतियां करे तो उनकी गलतियां शौकों में शुमार हो जाती है. लेकिन पिछड़े देशों को तो एक कर्म तक गलत करना नहीं पोसा सकता है. वहीं जिनको बढ़ना ही नहीं है, उनका तो यूं भी कुछ बनना या बिगड़ना नहीं है. परंतु भारत, जो बीच में फंसा पड़ा है; उसे तो शौक और कर्म का वास्तविक भेद समझना ही रहा. ...वरना अपनी तमाम

कोशिशों के बावजूद वह प्रगतिशील देश कभी नहीं बन पाएगा. भारत में करोड़ों लोग हैं जो भजन का शौक भी रखते हैं, और अपनी आजीविका हेतु कर्म भी करते हैं. इसमें रत्तीभर कोई बुराई नहीं. ...बल्कि अच्छी ही बात है. वहीं यहां ऐसे लोग भी हैं जो कर्म करने के पश्चात भजन के बजाए अन्य शौक रखते हैं. तो उसमें भी कुछ गलत नहीं. इन दोनों से देश को कोई नुकसान नहीं हो रहा. देश को नुकसान उन लोगों से हो रहा है जो भजन को कर्म बनाए बैठे हैं. और इसी कारण वे अन्यो के पैसों पर पल रहे हैं. और दुर्भाग्य से कर्म न करने के बावजूद “संपत्ति, सोना और सत्ता” तीनों उन लोगों के पास है. और यह जो कर्मों के प्रति इनकी असहिष्णुता है, यही भारत की प्रगति में एक सबसे बड़ी बाधा है.

खैर, यह तो हुई कर्म को ‘शौक’ तथा शौक को ‘कर्म’ समझने वाले लोगों की बात तथा उनके कारण देश पर पड़ रहे दुष्प्रभावों की चर्चा. और ध्यान रख लेना कि यही वे लोग हैं जो अपना वजूद टिकाए रखने हेतु भजन को श्रेष्ठ तथा अन्य शौकों को तुच्छ बताने में लगे हुए हैं. और इनकी ऐसी बातों से प्रभावित होकर ही दुनिया भर का मनुष्य मारे गिल्ट के इन लोगों के चक्कर लगा रहा है. ...लेकिन अब बहुत हो चुका. आप लोग वैज्ञानिक युग में हो तथा समझदार भी हो. आपलोग शौक व कर्म का भेद समझ सकते हो. और कर्म जीवन की पहली जरूरत है. अपनी जरूरतें अपने कर्मों द्वारा स्वयं पूरी करना मनुष्य का प्रथम कर्तव्य है. यह कर्तव्य मनुष्य अच्छी तरह से तभी निभा सकता है जब कर्मों में उसकी पूरी ऊर्जा लगी हुई हो. कर्मों में ऊर्जा तभी लग सकती है जब वह मानसिक तौरपर पूरी तरह प्रसन्न हो. और मानसिक तौरपर मनुष्य प्रसन्न तभी रह सकता है जब उसके शौक पूर्ण हो रहे हों. इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि जितना जरूरी कर्म करना है, उतना ही जरूरी शौकों की पूर्ति करना भी है. क्योंकि बिना मानसिक प्रसन्नता के मनुष्य श्रेष्ठ कर्म नहीं कर सकता है.

खैर, मैं समझाना यह चाह रहा हूँ कि श्रेष्ठ कर्म जीवन बनाते हैं. उन कर्मों को निपटाने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है. और उस ऊर्जा की पूर्ति हेतु शौकों का पूरा होना जरूरी है. और हर मनुष्य के शौक यहां अपने स्वयं के, यानी कि व्यक्तिगत होते हैं. वह खाने, पीने, पढ़ने, संगीत, पेंटिंग और खेलने से लेकर नाचने-गाने तक के कुछ भी हो सकते हैं. और शौक पूजा-पाठ करने से लेकर हज पर जाने और चार-धाम की यात्रा करने के भी हो ही सकते हैं. क्या फर्क पड़ता है? एक महान व एक बुरा, एक पाप और एक पुण्य; यह बात ही गलत है. शौक मनुष्य का व्यक्तिगत विषय है. शौक का अर्थ ही इतना है कि जो मनुष्य को मानसिक तौरपर इतना तरोताजा कर दे कि फिर उसका मन पूरी तरह से ‘कर्म’ में लग जाए. अब मुझे बताइए कि इस व्यक्तिगत विषय में किसी के कुछ कहने या टोकने की गुंजाइश ही कहां है? लेकिन फिर भी संप्रदाय, समाज, शास्त्र और परिवार बाज नहीं आते हैं. मनुष्य दबाव में उनकी सुनता है और अपने शौकों से समझौता करता है. बस इसी कारण फिर वह मन लगाकर कर्म नहीं कर पाता है. और जब मनुष्य मन लगाकर कर्म ही

नहीं कर पाएगा तो सुखी और सफल क्या खाक हो पाएगा? सो, सौ बातों की एक बात यह कि मनुष्य के व्यक्तिगत शौकों के प्रति दिखाई जानेवाली असहिष्णुता ने मनुष्य का जीवन बर्बाद कर रखा है.

अब मेरी धरती के सबसे महान लाल 'कृष्ण' को ही देख लो. वे कौन-से शौक के प्रति असहिष्णु थे? अरे, मेरा वह लाल तो असली शौकीन था. ...और असली शौकीन कौन है? जो शौक की मस्ती को अपने भीतर बैठे परमात्मा तक पहुंचा सके. शौकीन लोग तो भोजन भी इतने प्रेम से करते हैं कि देखनेवाले देखते रह जाएं. और करनेवाले भजन भी ऐसे करते हैं कि उन्हें सुननेवाले भाग जाएं. अतः मैं एकबार फिर कहता हूँ कि असहिष्णु मत बनो. सवाल भजन या भोजन का कतई नहीं है. यह नहीं है कि रास रचाते वक्त कृष्ण पच्चीस प्रतिशत भगवान हैं, और गीता कहते वक्त वे सौ प्रतिशत भगवान हैं. यह भी कतई नहीं है कि महाभारत के युद्ध में छल-झकपट करते वक्त कृष्ण दस प्रतिशत परमात्मा हैं, और पापियों का नाश करते वक्त सौ प्रतिशत. ...नहीं, कृष्ण छप्पनभोग खा रहे हों या रास रचा रहे हों, वे छल-कपट कर रहे हों या गीता कह रहे हों; वे हरदम सौ फीसदी ही परमात्मा हैं. परमात्मा का अर्थ ही इतना है कि वह कर्म, शौक व आराम तीनों के प्रति पूरी तरह से सहिष्णु हैं. क्योंकि परमात्मा जानता है कि जीवन तो कर्म है, परंतु कर्म "शौक व आराम" पर पूरी तरह से निर्भर है. अतः शौक... 'कर्म' से कम महत्वपूर्ण नहीं है. और शौक, यह मनुष्य का व्यक्तिगत विषय है. उसका कार्य सिर्फ इतना है कि मनुष्य को मानसिक तौरपर कर्म करने हेतु तैयार कर दे. उसकी मानसिक थकान दूर कर दे. बात सिर्फ इतनी-सी है कि जैसे सिर्फ भोजन करना कर्म नहीं हो सकता है, वैसे ही सिर्फ भजन करना भी कर्म नहीं हो सकता है. सो मेहरबानीकर कम-से-कम आपलोग इन्सान के शौकों के प्रति सहिष्णु हो जाओ. कोई कुछ भी करने से यदि प्रसन्नता पा रहा है तो फिर उसे कभी ना तो टोकना, और ना किसी बात के लिए उसे रोकना. यह शौक अच्छे और वह शौक बुरे, उसमें पड़ना ही मत. लेकिन हां, शौक का गलत मतलब मत निकाल लेना. क्योंकि आपलोग अच्छी-से-अच्छी बात की भी खाल निकालने में माहिर हैं. सो... शौक का अर्थ फिर समझ लो, शौक वह क्रिया है जो आपकी मानसिक थकान मिटाकर आपको पुनः कर्म करने हेतु तरोताजा करती है. अतः कोई यह नहीं कह सकता कि मुझे शराब पीने का शौक है और मैं पूरे आठ घंटे शराब पिऊंगा. तब तो वह कर्म करने लायक ही नहीं बचेगा. अगले सोलह घंटे सोता ही रह जाएगा. ऐसे ही कोई दस आदमी का खाना यह कहकर नहीं खा सकता कि वह खाने का शौकीन है. ऐसा करने पर वह अगले दस दिन तक कर्म नहीं कर पाएगा. अतः जो कर्म में बाधा पहुंचाए वह शौक नहीं, व्यसन है. वैसे ही किसी को सताना या नुकसान पहुंचाना भी शौक नहीं है. शौक एक व्यक्तिगत विषय है, यदि उससे किसी दूसरे को रत्तीभर परेशानी होती है तो वह शौक नहीं हिंसा है. शौक का अर्थ इतना ही है कि अपने या दूसरे को सताए

बिना मानसिक ऊर्जा पाना. अतः किसी को मारने या सताने को आप शौक कतई नहीं कह सकते हैं.

कुल-मिलाकर यह समझाना चाह रहा हूँ कि मनुष्यजीवन का अर्थ ही कर्म है. बिना प्रोडक्टिव कर्म किए दूसरों पर बोझ बनना गलत है. कर्म करने हेतु शारीरिक व मानसिक...दोनों ऊर्जा की जरूरत पड़ती है. शारीरिक ऊर्जा तो सोने, खाने व व्यायाम से मिल जाती है. परंतु मानसिक ऊर्जा सिर्फ मनोरंजन से मिलती है. मनोरंजन पाने हेतु मनुष्य का शौकीन होना जरूरी है. मनुष्य के ये शौक व्यक्तिगत होते हैं. और उसे हर मनुष्य को बिना अपने या दूसरे को सताए सहिष्णुतापूर्वक पूरे करने ही चाहिए. साथ ही असहिष्णु संप्रदायों, समाजों और परिवारवालों को किसी भी मनुष्य के अहिंसक शौकों के बीच में कभी नहीं आना चाहिए. क्योंकि जीवन के इस चक्र को समझ ही लेना चाहिए कि मनुष्य यदि शौक पूरे नहीं करेगा, तो वह मानसिक तौरपर स्वस्थ व प्रसन्न नहीं रह पाएगा. मानसिक तौरपर स्वस्थ नहीं होगा, तो वह मन लगाकर कर्म नहीं कर पाएगा. और वह दिल लगाकर कर्म नहीं कर पाएगा, तो जीवन में प्रगति नहीं कर पाएगा. बात भले ही यह छोटी लगे, परंतु शौकों के प्रति बरती जा रही यह असहिष्णुता मनुष्यजीवन की बर्बादी का प्रमुख कारण बनके उभरी है. ...और फिर ये असहिष्णु लोग जो मनुष्य के शौकों को दिन-रात गलत बताते हैं, उनका पूरा जीवन इन शौकीन लोगों के भरोसे ही चल रहा होता है. उदाहरण के तौरपर भारत में ही ऐसे कई साधु-संत हैं जो दिन-रात दूसरों को कबाबी व शराबी कहते रहते हैं. मैं उन्हें इतना ही कहता हूँ कि वे ऐसे लोगों को पापी मानते हैं तो फिर उनके द्वारा खोजे हुए बल्ब, बिजली, गाड़ी, हवाईजहाज वगैरह का उपयोग क्यों करते हैं? हाथ न लगाएं कबाबियों व शराबियों की खोजी एक चीज को. अरे, आपके जीवन का अस्सी प्रतिशत आधार उन लोगों पर टिका हुआ है जो कबाबी हैं. मेहरबानीकर अपने पाखंड बंद करो. असहिष्णुता तो दिखाओ ही मत. महान कार्य करनेवाले अपने किन शौकों से मानसिक ऊर्जा पाते हैं, इससे किसी दूसरे को क्या लेना-देना? न कुदरत-न परमात्मा, यहां कोई इतना असहिष्णु नहीं कि मनुष्य के जाती शौकों के बीच में आए. फिर आप सांप्रदायिक लोग बात-बात पर हर जगह टांग अड़ाने को क्यों चले आते हो? खैर, उनकी छोड़ो. आप तो इतना समझ लो कि ये संप्रदाय और समाज अपनी असहिष्णुता से बाज नहीं आनेवाले. क्योंकि उनका तो अस्तित्व ही दूसरों को नीचा दिखाने तथा पाप-भाव पकड़ाने पर टिका हुआ है. परंतु आप यकीन जान लो कि आप परमात्मा की संतान हैं. और यदि ऐसा है तो फिर भला आपका पाप से क्या वास्ता? सो आप तो मन खोलकर कर्म करो और दिल खोलकर जीओ. आप तो इतना समझ लो कि आपको इनके दबावों से बचना सीखना ही होगा. क्योंकि आप कुछ बड़ा व महान तभी कर पाएंगे जब अपने निर्दोष व अहिंसक शौकों की रक्षा कर पाएंगे. वरना मानसिक-अस्वस्थता से घिरे 'आप' फिर जीवनभर दुःख, चिंता, क्रोध व फस्ट्रेशन के धक्के सहते रहेंगे.

अंत में एक बात और कह दूं, ऐसा नहीं है कि मनुष्य शौकों के महत्व को नहीं जानता है। वहीं यहां ऐसा भी कोई नहीं है कि जिसे दो-चार शौक न हो। दरअसल मनुष्य की सायकोलोजी ही शौक की है। और यह शौक ही है जो मनुष्य को जानवरों से अलग करते हैं। आप समझते क्यों नहीं कि यह पूरी प्रकृति अस्तित्व में ही सिर्फ मनुष्य के लिए है। प्रकृति के अस्तित्व का अर्थ ही इतना है कि मनुष्य उसकी हर चीज का आनंद ले। अतः शौक मनुष्य के अस्तित्व का प्रमुख हिस्सा है। और इसीलिए हर कोई स्वतंत्रतापूर्वक अपने शौक पूरा करने की चाह लिए जी रहा होता है। ...और यही कारण है कि न्यू ईयर का फंक्शन पूरे विश्व में “बिना संप्रदाय या देश के बंधन के” सर्वाधिक धूमधाम से मनाया जाता है। क्यों...? क्योंकि यह दिल खोलकर नाचने-गाने तथा खाने-पीने का उत्सव है। कोई रोक-टोक इसमें किसी बात की नहीं है। इसमें किसी बात की कोई जबरदस्ती भी नहीं है। बस इसीलिए बिना अपवाद के यह दुनिया के तमाम देशों में धूमधाम से ना सिर्फ मनाया जाता है, बल्कि पूरा विश्व समुदाय इस उत्सव का दिल खोलकर आनंद भी लेता है। बस यही चीज मेरी इस बात को सिद्ध करने हेतु पर्याप्त है कि शौक मनुष्य की लाइफ लाइन है। शौक उसकी नस-नस में बसा हुआ है। और अपने शौकों के प्रति सहिष्णुता ही उसे सुख और सफलता के मार्ग पर लगा सकती है। सो मेहरबानीकर अपने तथा दूसरों के शौकों के प्रति सहिष्णु बनें, तथा हरहाल में अपने शौकों की रक्षा करना सीख जाएं।

हालांकि शौकों के मामले में एक और प्रकार की असहिष्णुता है जो किसी कीमत पर बर्दाश्त नहीं की जा सकती है। और यह असहिष्णुता बिना अपवाद के पूरे विश्व में व्याप्त है। और वह है महान लोगों के व्यक्तिगत शौकों में झांकना तथा उनकी चर्चा करना। अब यह एक ऐसी असहिष्णुता है जिससे ना सिर्फ महान लोगों का अपमान होता है, बल्कि मनुष्य स्वयं के जीवन के प्रति भ्रमित भी होता है। अतः मैं चाहता हूँ कि पूरा विश्व अपनी इस असहिष्णुता को समझे और उसे दूर करे। क्योंकि महान लोगों का अपमान बर्दाश्त किया ही नहीं जा सकता है। अब यह मत कहना कि हम क्यों महान लोगों का अपमान करने लगे? हमलोग तो महान लोगों का बड़ा सम्मान करते हैं। सब गलत.... मेरा अनुभव तो यही कहता है कि आपने अपमानित करने में किसी को नहीं छोड़ा है।

हालांकि यह बात समझने हेतु पहले आपको मनुष्यों के प्रकार समझने होंगे। प्रकृति की त्रिगुणी माया के आधार पर मनुष्य भी तीन प्रकार के होते हैं। एक वे हैं जो इतना कर्म भी नहीं कर पाते हैं कि अपने जीवन का ठीक से गुजारा कर सकें। निश्चित ही यह सबसे निम्न श्रेणी के मनुष्य होते हैं। दूसरे वे हैं जो अपने कर्म और कर्तव्यों का अच्छे से निर्वाह करते हैं। इस प्रकार के मनुष्य ना सिर्फ अपना बल्कि अपने आसपास वालों का भी अच्छे से खयाल रखते हैं। लेकिन सबसे निराले, श्रेष्ठ व महान वे हैं, जो अपने साथ-साथ पूरे विश्व का उद्धार करते हैं। और दुर्भाग्य यह है कि इन महान लोगों के प्रति ही आम मनुष्य सर्वाधिक असहिष्णुता दिखाता है। और वह कैसे, तो इस बात को थोड़ा धैर्य से समझना

पड़ेगा. सो यह बताओ कि महान व्यक्ति की महानता क्या है? यही कि वह कुछ ऐसे कर्म करता है जिससे लाखों मनुष्यों का उद्धार होता है. लेकिन यह तो उसके 'कर्म' की बात हुई. परंतु आखिर वह भी है तो एक इन्सान ही. वह अपने महान कर्मों को भी कर तो तभी पाएगा जब जी-भरकर अपने शौकों को पूरा कर पाएगा. और निश्चित ही यह शौक उसका व्यक्तिगत विषय है. वह महान कार्य करने हेतु कौन-से शौकों का सहारा लेता है, इससे किसी को कुछ लेना-देना नहीं होना चाहिए. माना वह महान है, माना उसके कर्म लाखों को प्रभावित करते हैं, माना इस कारण उसके कर्मों का ताल्लुक पूरे विश्व से बैठता है; परंतु ध्यान रहे कि विश्व से ताल्लुक उसके कर्मों का बैठता है, उसके शौकों का नहीं. उनके शौक हरहाल में उनके जाती विषय है. उनके उन शौकों का ताल्लुक ज्यादा-से-ज्यादा उनके आसपास वालों से बैठता है. और इन महान लोगों की श्रेणी में वे सब शामिल हैं जिनके कर्मों द्वारा लाखों जीवन प्रभावित हो रहे हैं. ...फिर वह संत हो या कलाकार, वह व्यवसायी हो या वैज्ञानिक.

खैर, अब होता यह है कि आम जनता हो या मीडिया, चर्चा में हमेशा ये महान लोग ही रहते हैं. ...रहना भी चाहिए. परंतु चर्चा उनके कर्मों की होनी चाहिए, शौकों की नहीं. सबको यह ध्यान रखना ही चाहिए कि उन महान लोगों से आपका संबंध उनके कर्मों का है, उनके शौकों का नहीं. आपको लाभ भी उनके कर्मों से मिल रहा है और आप लोगों को सीखना भी उनके कर्मों से है. उदाहरण के तौरपर कहूं तो कृष्ण से आपका ताल्लुक उनके द्वारा कही गई भगवद्गीता से बैठता है. गीता उनका वह कर्म है जो पूरे विश्व के लिए है. लेकिन उनकी कही महान गीता में किसी को रस नहीं. परंतु उनके "रास" जो उनके जाती विषय हैं, उसमें सबको रस है. अब कृष्ण के रास से ताल्लुक सिर्फ उन गोपियों का है जो उनके साथ रास रचाती थीं. आपका उससे क्या लेना-देना? लेकिन आपकी सारी जिज्ञासाएं महान लोगों के जाती जीवन को लेकर ही उठती हैं. कृष्ण ने कितने विवाह किए? मोहम्मद की कितनी शादियां हुई थी? अरे! जितनी हुई थी उतनी हुई थी, आपको क्या? आपका मोहम्मद से जो कुछ भी ताल्लुक बैठता है वह उनकी कही कुरान के जरिए बैठता है. बाकी उनके विवाहों की संख्या से आपका क्या ताल्लुक?

अतः मेहरबानीकर इन महान लोगों के प्रति असहिष्णु मत बनो. चार्ली चैपलिन ने आपको हंसाया, यही आपका और उसका ताल्लुक है. उसका धन्यवाद मानो, उसके अभिनय की चर्चा करो; परंतु यह तो आपसे होता नहीं. ले-देकर उनके विवाह तथा उनके व्यक्तिगत जीवन में ही आपको रस आता है. ...और यही गलत है. मोहनदास करमचंद गांधी से भारत का ताल्लुक उनके उस महान कर्म से है जिसके जरिए उन्होंने देश को आजादी दिलवायी. लेकिन मेरा अनुभव है कि उनके कर्मों से ज्यादा चर्चा इस बात की होती है कि वे किसके कंधों पे हाथ रखकर चलते थे. वे चाहे जिनके कंधों पर हाथ रखकर चलते थे, परंतु वे कंधे आपके नहीं थे. और फिर फिल्मी कलाकारों का तो मीडिया और आम जनता ने

जीना ही दुश्वार कर दिया है. उनके व्यक्तिगत जीवन में झांकने की तो सारी सीमाएं आज के युग ने लांघ दी है. अरे, कितनी मेहनत कर वे आपका मनोरंजन करते हैं. उनका मनोरंजन उपलब्ध नहीं होगा तो फ्रस्ट्रेशन की सारी सीमाएं लांघ जाओगे. ...पागल हो जाओगे. जरा सोचो, ऐसे तो कैसे असहिष्णु हो चुके हो कि अपना भला करनेवालों का जीना दुश्वार किए हुए हो? कुछ तो शर्म करो.... आपसे तो इतने कर्म भी नहीं हो रहे कि आपका जीवन चैन से गुजरे. और जो महान कर्म कर रहे हैं, उनके व्यक्तिगत शौकों में झांक रहे हो! यह कैसा कमाल कर रहे हैं आप...? वे आपको ऊर्जा दे रहे हैं और आप उनकी ऊर्जा छीन रहे हैं? अरे, जानवर भी अपने पर एहसान करनेवालों के प्रति एहसान-फरामोशी नहीं दिखाता है. क्यों जानवरों को अच्छा कहलाने पर तुले हुए हो?

यही हाल आप महान व्यवसायियों, कलाकारों, वैज्ञानिकों व समाज सुधारकों का भी करते हैं. आपसे कुछ होता नहीं, और जो करते हैं उनके व्यक्तिगत जीवन पर हमला कर देते हैं. किसने क्या खाया, वह कहां घूमता है, किससे उसका प्रेम है, उसे क्या पसंद है...यह सब उसके जाती विषय हैं. आपका ताल्लुक सिर्फ और सिर्फ उनके उन महान कर्मों से है, जिससे आपका भला हो रहा है. कायदे से तो सबको चाहिए कि वे महान मनुष्यों को अपने शौक पूरे करने हेतु स्वतंत्रता का श्रेष्ठ वातावरण प्रदान करें, ताकि वे ऊर्जा पाकर और जोशपूर्वक महान कार्य कर पाएं. लेकिन आप तो उल्टा उनपर जाती हमले करके उनकी ऊर्जा छीनने में लगे रहते हैं. अतः मेहरबानीकर अब भी समय है, चेत जाओ. महान व्यक्ति की ऊर्जा कीमती होती है. उसी ऊर्जा के जरिए वह महान कार्य करता है. और यह जगत उन्हीं महान लोगों के महान कार्यों की बदौलत चल रहा है. ध्यान रख लो कि विश्व आप पांच-सात सौ करोड़ लोगों के भरोसे नहीं, बल्कि इन पांच-सात हजार महान लोगों के भरोसे चल रहा है. इनके शौकों के प्रति तथा इनके व्यक्तिगत जीवन के प्रति जितनी सहिष्णुता दिखाओगे, विश्व उतनी ही प्रगति करेगा. सच कहता हूँ कि उनकी ऊर्जा छीनने के कारण ही आप लोगों का यह हाल है. वरना ये महान लोग तो आपको चांद और मंगल क्या, पूरे ब्रह्मांड की सैर करवाने में सक्षम हैं.

सो, कुल-मिलाकर समझें तो यहां हरेक को अपने कर्मों का दायरा बढ़ाते चले जाना चाहिए. अपने कर्मों के दायरे को- अपने से उठकर जगत-उद्धार तक फैलाना चाहिए. ऐसा नहीं भी कर पाते तो भी कोई बात नहीं. लेकिन कम-से-कम महान लोगों की ऊर्जा तो मत ही छीनो. यह तो पाप पर महापाप हुआ. और दुःख की बात यह है कि आज ऐसे ही महान पापियों से विश्व भरा पड़ा है. ...एक सीधी बात हमेशा के लिए जहन में बिठा ही लो कि कर्म से जीवन चलता है, और शौकों की पूर्ति से ही कर्म करने हेतु ऊर्जा मिलती है. अतः शौकों का ध्यान रखोगे तो कर्म कर पाओगे, और कर्म करोगे तो ही जीवन बनेगा. फिर वे शौक व कर्म अपने हों, दूसरे के हों या महान लोगों के हों; शौक व कर्म के संबंध स्पष्ट ही हैं. अतः उम्मीद करता हूँ कि शौकों के प्रति, खासकर महान लोगों के शौकों के प्रति बरती जा

रही असहिष्णुता पर आप लोग लगाम कसेंगे. सबके व्यक्तिगत जीवन को उनके व्यक्तिगत जीवन तक सीमित रहने देंगे. लोगों के व्यक्तिगत जीवन को टाइमपास और गॉसिपिंग का साधन कभी नहीं बनाएंगे. मैं वादा करता हूँ कि आप लोगों के द्वारा अपनायी गई इस एक सहिष्णुता से पूरे विश्व का मानसिक व शारीरिक जीवनस्तर हजारों गुना सुधर जाएगा.

खैर, अब जब मैंने इस विषय में इतनी बातें करी है तो “शौक और कर्म के संबंध में” एक गहरी बात और कह दूँ जो महान लोग हैं, उनके शौक व कर्म करीब-करीब एक ही होते हैं. उदाहरण के तौरपर कहूँ तो लोगों का जीवनस्तर सुधारना ही बुद्ध और क्राइस्ट का कर्म भी था, और वही उनका एकमात्र शौक भी था. वैसे ही “एडीसन का शौक व कर्म” दोनों विज्ञान था. बिथोवन का कर्म व शौक दोनों संगीत था, तथा धीरूभाई अंबानी का कर्म व शौक दोनों व्यवसाय था. कहने का तात्पर्य इतना ही है कि यहां महान वो ही बनता है, जिसके कर्म व शौक मेल खाना शुरू हो जाते हैं. और यह उसी के होते हैं जो अपने शौकों के प्रति पूरी तरह से सहिष्णु होता है. मैं चाहता हूँ कि आप भी अपने शौकों के प्रति सहिष्णुता दिखाएं, ताकि एक दिन आप अपना व जगत का उद्धार कर सकें.

यह देखकर मुझे सचमुच आश्चर्य होता है कि युगों से मनुष्य अपने कर्मों के प्रति भी असहिष्णु है. और यह भी मनुष्य का अपना ही एक कमाल है. कर्म जो कि उसके जीवन की लाइफ-लाइन है, परंतु वह उसके प्रति भी असहिष्णुता दिखाने से बाज नहीं आता है. मनुष्य यदि इतना नाकाम और असफल है तो मेरी दृष्टि में तो उसका एक कारण उसका अपने कर्मों के प्रति असहिष्णु होना भी है. अब चूंकि मनुष्य जीता ही कामयाबी और सफलता के लिए है, इसलिए यह विषय और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है. क्योंकि “सफलता और कामयाबी” कर्मों के प्रति सहिष्णुता बरते बगैर पाई ही नहीं जा सकती है. और इससे पहले कि मैं मूल विषय पर आऊँ, आपको समझना होगा कि आखिर यह कर्म है क्या? सरलतम भाषा में कहूँ तो जीवन जीने हेतु किया जानेवाला कार्य ‘कर्म’ कहलाता है. और कर्म सफल कब होता है? जब उसके श्रेष्ठ परिणाम आते हैं. और कर्म के श्रेष्ठ परिणाम कब आते हैं? जब उस कर्म की मनुष्य में प्रतिभा होती है, और साथ ही उस कार्य में उसका मन भी लगा होता है. अब यह एक सीधी-सादी शृंखला है. भला इसमें असहिष्णुता की

जगह ही कहां है? बिना किसी को नुकसान पहुंचाए या बगैर किसी का हक छीने जिस किसी भी कर्म से मनुष्य अपना जीवन बेहतर बनाता है, वह कर्म श्रेष्ठ है. उसमें अच्छे कर्म व बुरे कर्म के भेद का सवाल ही कहां पैदा होता है? हां, मनुष्य कर्म कर रहा हो और फिर भी उसके सकारात्मक परिणाम नहीं आ रहे हों, तो गड़बड़ है. ...और यह गड़बड़ चारों ओर व्याप्त है. मनुष्य नाकाम व असफल इसलिए नहीं है कि वह कामचोर है. अधिकांश लोग जीवन बनाने हेतु अपनी जी-जान लगाए ही हुए हैं. लेकिन दिक्कत यह है कि उनके जी-जान लगाने के परिणाम नहीं आ रहे हैं. और वह क्यों...? बस इस 'क्यों' का जवाब खोजने से अधिक उपयोगी विश्व के लिए और कुछ हो ही नहीं सकता है. और मैं इस 'क्यों' को आपको सम्पूर्णता से समझाऊंगा. ...क्योंकि मनुष्यों के द्वारा किए गए कर्मों के उचित परिणाम आने लग जाएं तो विश्व में नाकामी और असफलताएं बचे ही न.

सो, कुल-मिलाकर कर्मों के प्रति बरती जा रही असहिष्णुता ही मनुष्य की नाकामियों का प्रमुख कारण है. ...और असहिष्णुता है चीजों को विभाजित करके देखने की आदत. अर्थात् यह कर्म अच्छा और यह कर्म बुरा. यह कर्म श्रेष्ठ और यह कर्म सामान्य. अब कर्म...कर्म है. उसमें अच्छा-बुरा या श्रेष्ठ और सामान्य जैसा कुछ हो ही नहीं सकता है. सवाल इतना ही है कि कर्म अपने व दूसरों के उद्धार के लिए हों, तथा साथ ही यह भी जरूरी है कि कर्म में लगाई मेहनत के उचित परिणाम आए. ...यानी कर्म व्यर्थ न जा रहे हों. और जहां तक कर्म के उचित परिणाम आने का सवाल है; तो उस बाबत मैं कह ही चुका हूँ कि उसका सीधा ताल्लुक किए जानेवाले कर्म में मनुष्य की प्रतिभा से है. साथ ही जैसा कि मैंने कहा "कर्म करते वक्त उस कर्म में मनुष्य का कितना मन लगा है" उसका भी कर्म के परिणाम पर पूरे-पूरा असर पड़ता है. अब मनुष्य की किस क्षेत्र में प्रतिभा है तथा किस कार्य में उसका मन लगता है, यह हर मनुष्य का अपना जाती विषय है. और इस बाबत सिर्फ वह स्वयं तय कर सकता है, दूसरा कोई नहीं. और यह सीधा-सीधा कर्म और उसके परिणाम का सिद्धांत है. परंतु दुःख की बात यह है कि बावजूद इसके संप्रदायों से लेकर समाज तक तथा परिवार से लेकर शिक्षक तक कोई भी इस विषय में दखलंदाजी करने से बाज नहीं आता है. और इसका एकमात्र कारण यह है कि इनमें से अधिकांशों को ना तो मनुष्य के मन के बाबत, और ना ही उसके जीवन के बाबत कुछ पता है. वे यह समझते ही नहीं कि किसी भी मनुष्य में प्रतिभा पैदा करी ही नहीं जा सकती है. वे यह भी दृढ़तापूर्वक नहीं जानते कि प्रतिभा मनुष्य के मन की गहराइयों में छिपी होती है. अरे, इनमें से अधिकांशों को तो मन और बुद्धि का फर्क तक मालूम नहीं होता है. ऐसे में इनके यह जानने का तो प्रश्न ही नहीं है कि प्रतिभा मन का विषय है, बुद्धि का नहीं. और इस संबंध में सबसे गहरा सत्य यह है कि इन दखलंदाजी करनेवालों में से कोई विश्वासपूर्वक यह भी नहीं जानता कि मनुष्य का मन जन्मों-जन्मांतर का है. किसी भी क्षेत्र की प्रतिभा मनुष्य में रातोंरात पैदा नहीं होती है. हर मनुष्य की प्रतिभा उसकी जन्मों-जन्मांतर की वह पूंजी होती है जिसे इस जनम में वह

अपने “सूक्ष्म-मन” के साथ लेकर आया होता है. इस जनम में तो उसे अपनी उस प्रतिभा को निखारना-मात्र होता है. और मनुष्य में छिपी इस प्रतिभा के हजारों क्षेत्र हो सकते हैं. अब उसमें अच्छे-बुरे या श्रेष्ठ और सामान्य का प्रश्न ही कहां उठता है? सवाल सिर्फ इतना है कि मनुष्य अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में कार्यरत हो तो कार्य के अच्छे परिणाम आते हैं, वरना हताशा ही उसके हाथ लगती है. और यदि आज चारों तरफ इतनी हताशा फैली हुई है तो उसका एकमात्र कारण मनुष्य का अपनी प्रतिभा से विपरीत के क्षेत्र में कार्यरत होना है.

खैर, अब प्रमुख सवाल यह उठता है कि मनुष्य अपनी प्रतिभा के विपरीत का क्षेत्र पकड़ क्यों लेता है? ...तो वह सिर्फ बाहरी प्रभावों, आकर्षणों तथा दबावों के कारण. और यह प्रभाव, आकर्षण और दबाव क्या हैं? यही कि यह क्षेत्र चुनो और यह क्षेत्र मत चुनो. परिवार हो या स्कूल; यहां किसी को बच्चे की आंतरिक प्रतिभा से कुछ मतलब नहीं. बस कर्मों के क्षेत्रों के प्रति बरती जा रही इस असहिष्णुता के कारण बच्चों का जीवन बर्बाद हो रहा है. वह बेचारा बचपन से ही दबावों में आकर अपनी प्रतिभा के क्षेत्र से विचलित हो जाता है. और यह सिलसिला यहीं नहीं थमता. बड़ा होकर फिर वह स्वयं बाहरी आकर्षणों में उलझकर अपनी प्रतिभा के विपरीत के क्षेत्र में कूदना शुरू कर देता है. हालत इस कदर खराब है कि यहां ना तो मनुष्य स्वयं और ना ही कोई ज्ञान का दावा करनेवाला ही समझता है कि मनुष्य अपनी श्रेष्ठता सिर्फ अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में ही सिद्ध कर सकता है. और दुःख की बात यह है कि मनुष्य सफल लोगों का इतिहास उठाकर भी नहीं देखता है. विश्व में सफल दो ही प्रकार के मनुष्य हुए हैं. ...एक वे जिन्हें अपने परिवारवालों और शिक्षकों द्वारा अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में कार्य करने हेतु सहयोग मिला है. इनमें एडीसन, स्टीव जॉब्स से लेकर सचिन तेंदुलकर तक अनेक लोग शामिल हैं. और दूसरे वे जो दृढ़तापूर्वक अपनी प्रतिभा के क्षेत्र से डटे रहे हैं. वॉल्ट डिज्नी, मार्क-ट्वेन से लेकर मार्क-जकरबर्ग तक के सभी लोगों को इस श्रेणी में रखा जा सकता है. अनपढ़ एडीसन यदि 1000 से ज्यादा पेटेंट रजिस्टर करवानेवाला वैज्ञानिक बनकर उभरता है, तो थोड़ा उसके कारणों पर गौर करें. पहली बात तो यह स्पष्ट है कि उनमें बचपन से वैज्ञानिक प्रतिभा थी. और जब बिना पढ़े बचपन से ही उनमें वैज्ञानिक प्रतिभा थी, तो फिर निश्चित ही वह उनके पिछले जन्मों की पूंजी थी. अब आप इस बात से नन्हे अनपढ़ ‘एल’ के एडीसन बनने की दास्तान समझो, यह दास्तान बड़ी ही सीधी व साफ है. एक तो उनके पास पिछले जन्मों की वैज्ञानिक प्रतिभा थी ही, और उसपर उन्हें विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ने हेतु अपनी मां नैन्सी से सहयोग भी मिल गया; अब ऐसे में उनके महान वैज्ञानिक बनने में रह क्या जाता था? ...उन्हें तो महान वैज्ञानिक बनना ही था.

सो, सीधी बात समझें कि जीवन कर्म से बनता है. श्रेष्ठ कर्म मनुष्य अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में ही कर सकता है. और मनुष्य की प्रतिभा जन्मों-जन्मांतर के कर्मजनित संस्कारों से तय होती है. किस मनुष्य में किस क्षेत्र की प्रतिभा छिपी पड़ी है यह मनुष्य स्वयं अपने

मन की गहराइयों में डुबकी लगाकर ही तय कर सकता है. इस विषय में किसी बाहरी आकर्षण या दबाव को कोई जगह नहीं. और कर्मों में अच्छे-बुरे या श्रेष्ठ और सामान्य के भेदभाव को तो रत्तीभर जगह नहीं. ...यू भी यहां सबका जीवन एकदूसरे के कर्मों पर आधारित है. कृष्ण, बुद्ध और क्राइस्ट जैसे महान कर्मवीरों को भी यहां अन्न दूसरे का उगाया ही खाना पड़ता था. वस्त्र भी उन्हें किसी और के बुने ही पहनने पड़ते थे. तो फिर ऐसे में “आम-मनुष्य” का जीवन तो हजारों लोगों के कर्म पर निर्भर रहना ही है. और जब जीवन ही यहां एकदूसरे के कर्मों पर निर्भर है, तो ऐसे में कर्मों के श्रेष्ठ और सामान्य होने का सवाल ही कहां पैदा होता है? सो मेहरबानीकर कर्मों में भेदभाव करनेवाली तमाम शिक्षाओं को नकारो और एक सीधी बात समझो कि बच्चे प्रतिभा लेकर आते हैं. परिवार, शिक्षा और समाज का कार्य इतना ही है कि वे उन्हें उनकी प्रतिभा के क्षेत्र में आगे बढ़ने हेतु माहौल प्रदान करे. सम्पूर्ण मनुष्यजाति के उद्धार का यही एकमात्र सीधा और सरल उपाय है. फिर क्या मनुष्य और क्या देश, सभी एक साथ प्रगति करेंगे ही. और मनुष्य स्वयं ही नहीं “परमात्मा और प्रकृति भी” सम्पूर्ण मनुष्यजाति का उद्धार ही चाहते हैं. सो अपने लिए न सही, परमात्मा और प्रकृति के लिए ही सही; अपना उद्धार कर लो.

हालांकि यह बात जो मैं कह रहा हूँ वह समझने में जितनी आसान लग रही है, अमल में रख पाना उतना आसान नहीं है. क्योंकि कर्मों के बाबत भेद की शिक्षा युगों से चली आ रही है. और दुर्भाग्य से अब कर्मों का यह भेद सबके मानस में गहरा बैठ गया है. लेकिन मैं हरहाल में सम्पूर्ण मनुष्यता का स्थायी उद्धार चाहता हूँ. और उसमें कर्मों के प्रति बरती जा रही असहिष्णुता सबसे बड़ी बाधा है, यह मैं अच्छे से जानता हूँ. ...वैसे तो अबतक आप लोगों को भी यह बात समझ में आ ही गई होगी. सो यदि आप वाकई हर मनुष्य को अपनी-अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में लगा देखना चाहते हैं, यदि आप तहेदिल से सम्पूर्ण मनुष्यता का उद्धार चाहते हैं; तो आपको हरहाल में कर्मों के प्रति अपनी असहिष्णु सोच को बदलना होगा. क्योंकि यह सोच बिना अपवाद के नीचे से ऊपर तक पूरे विश्व में घर कर गई है. और वह भी इस कदर कि आपने अपनी इस सोच में महान लोगों को भी शामिल कर लिया है. और यह सबसे बुरा हुआ है. क्योंकि महान लोग... “महान-लोग” होते हैं. उनके कर्मों द्वारा लाखों-करोड़ों मनुष्यों का उद्धार हुआ ही होता है. अब ऐसे में उनमें से भी किसी को कम श्रेष्ठ व किसी को ज्यादा श्रेष्ठ समझने का क्या औचित्य है? और वह भी सिर्फ कर्म के क्षेत्रों के आधार पर...! यह तो अव्वल दर्जे की मूर्खता है. और बिना अपवाद के पूरा विश्व इस मूर्खता का शिकार है.

चलो, यह बात मैं थोड़े विस्तार से समझाता हूँ. क्योंकि यदि आप “कर्मों के प्रति व्याप्त असहिष्णुता” को पूरी तरह से मिटाना चाहते हैं, तो सबसे पहले आपलोगों को महान लोगों की श्रेष्ठता को “कर्म के क्षेत्रों के आधार पर बांटने की आदत” ...छोड़नी होगी. और जहां तक “कर्म के क्षेत्रों” का सवाल है तो उन्हें मोटा-मोटी तौरपर पांच भागों में

विभाजित किया जा सकता है. धर्म, विज्ञान, कला, व्यवसाय और सेवा. अब धर्म के क्षेत्र में वे लोग आते हैं जो मनुष्य के मन को नई ऊंचाइयां प्रदान करवाने का हुनर रखते हैं, तथा अपना जीवन उस हेतु निछावर करते हैं. इनमें आप कृष्ण, बुद्ध, क्राइस्ट, कबीर, लाओत्से, गुर्जिएफ वगैरह को शामिल कर सकते हैं. वैसे ही विज्ञान के क्षेत्र में एडीसन, आइन्स्टाइन, न्यूटन, राइट-ब्रदर्स वगैरह को सम्मिलित किया जा सकता है. वहीं कला के क्षेत्र ने मोजार्ट, पिकासो, मार्क-ट्वेन और गालिब जैसे अनेक कलाकार दिए ही हैं. ठीक वैसे ही व्यवसाय के क्षेत्र ने भी वॉल्ट-डिज्नी, स्टीव-जॉब्स और टाटा से लेकर मार्क-जकरबर्ग तक अनेक सफल व्यवसायी दिए ही हैं. और सेवा के क्षेत्र की बात करी जाए तो तमाम समाज सुधारकों से लेकर महत्वपूर्ण लीडरों तक... सभी को इसमें शामिल किया ही जा सकता है. अब इन सभी ने मनुष्य के उद्धार में बराबरी पर सहयोग किया है. ऐसे में कैसे आप धर्म के क्षेत्र को ऊंचा तथा व्यवसाय के क्षेत्र को नीचा कह सकते हैं? यदि बुद्ध ने लाखों दिलों को रोशन किया है तो एडीसन ने करोड़ों-अरबों घरों को रोशन किया ही है. अब इसमें बड़े व छोटे योगदान का सवाल ही कहां पैदा होता है? यदि चार्ली चैपलिन ने करोड़ों लोगों को हंसाया है तो रफी ने अपनी आवाज से करोड़ों दिलों को सुकून पहुंचाया ही है. यदि कृष्ण की गीता समझकर लाखों का उद्धार हुआ है, तो टाटा ने लाखों को रोजगार देकर उनके परिवार को जीवन दिया ही है. कुल-मिलाकर कहने का तात्पर्य इतना ही है कि महान लोग... 'महान' ही होते हैं, वे अपने कर्मों से करोड़ों का उद्धार करते ही हैं; ऐसे में उन्हें कर्म के क्षेत्रों के आधार पर कम या ज्यादा महत्वपूर्ण मानना असहिष्णुता की सारी सीमाएं लांघना है. और यह गलत है. ये तमाम भेद आपके द्वारा निर्मित हैं. इससे महान लोगों का कुछ लेना-देना नहीं है. कृष्ण ने तो गीता में स्पष्ट कहा है कि कर्मों के आधार पर मैंने मनुष्यों को चार भागों में विभाजित किया है; ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय व शूद्र. और चारों का समाज के निर्माण में अपना-अपना योगदान है. विश्व का कोई भी देश इन चारों के बगैर चल ही नहीं सकता है. ऐसे में एक के महान व दूसरे के सामान्य होने का प्रश्न ही कहां पैदा होता है? और आप किसी कीमत पर कर्मों के आधार पर "मनुष्यों-से-मनुष्यों का भेद" न करें इसलिए गीता में कृष्ण ने तो यहां तक कहा है कि "जानी तो...कुत्ता, ब्राह्मण, चांडाल व स्त्री तक सबमें समदर्शी होता है" (श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय-5, श्लोक-18). प्रकृति एक संयुक्तता है, इसमें दृष्टि-परिवर्तन को जगह ही नहीं है. अरे, आपके घर व ऑफिस भी तबतक ठीक से नहीं चल सकते जबतक साफ-सफाई करनेवाला स्टाफ मौजूद न हो. अब यदि साफ-सफाई करनेवाले ही नहीं होंगे तो क्या होगा? मैनेजर व एकाउन्टेन्ट को यह कार्य करना पड़ेगा. सो, मेहरबानीकर प्रकृति की इस संयुक्त रचना को समझें. उसकी इस खूबसूरत संयुक्तता में बात-बात पर भेद पैदा करने की असहिष्णुता मत दिखाएं. वरना यह याद रख लेना कि यह असहिष्णुता एक दिन आपको बर्बाद कर देगी.

खैर, जब इतनी बात चली है तो एक कटु सत्य और कह दूं, क्योंकि इन धार्मिक पाखंडियों ने कर्मों में भेद का ऐसा गहरा मायाजाल फैलाया है कि इन्हें ही सर्वाधिक महत्व मिलता रहे. और ये लोग किसी कीमत पर इस मायाजाल को टूटने देना नहीं चाहेंगे. लेकिन मनुष्य के उद्धार की आवश्यकता को देखते हुए इसे तोड़ना तो पड़ेगा ही. इन धार्मिक पाखंडियों का तो कुछ बन-बिगड़ नहीं रहा, इन्हें तो बैठेबिठाए बिना कुछ किए सर्वाधिक महत्व मिल ही रहा है. परंतु समझना आपको है, क्योंकि इस असहिष्णुता के चलते जीवन आपका दांव पर लग रहा है. सो कृपाकर समझें कि आप कर्मों के प्रति इतने असहिष्णु क्यों हो गए हैं? सीधी बात है, कर्म को क्षेत्रों के आधार पर कम व ज्यादा महत्वपूर्ण मानने के कारण. लेकिन यह भेद गलत है. और वह मैं सिद्ध कर सकता हूँ. उस हेतु बस दिल पर हाथ रखकर मुझे ईमानदारी से इतना बताओ कि यदि कुदरत आपको दो में से एक चीज का चुनाव दे, तो आप क्या चुनेंगे- सांप्रदायिक शास्त्र या विज्ञान की खोज? स्पष्ट भाषा में पूछूं तो आप इन सांप्रदायिक शास्त्रों के बगैर जीना पसंद करेंगे या विज्ञान की तमाम खोजों के बगैर? मैं जानता हूँ कि अनेक लोग मेरी इस बात के अनेक अर्थ निकालेंगे. सांप्रदायिक लोग क्रोधित भी होंगे. परंतु हकीकत यही है कि आज का मनुष्य...लाइट, गाड़ी, टीवी या मोबाइल वगैरह में से किसी के भी बगैर के जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता है. मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि विज्ञान 'शास्त्रों' से ज्यादा महत्वपूर्ण है. मैं इतना ही कहना चाह रहा हूँ कि कर्म के सारे क्षेत्र अपनी-अपनी जगह पे बराबरी पर महत्वपूर्ण हैं. और जबतक आप कर्म के आधार पर "महान लोगों" में भेद करना समाप्त नहीं करोगे, तबतक आप नीचे तक भी यह भेद करते ही रहोगे. तबतक आप पढ़ाई को ज्यादा महत्वपूर्ण व खेलों को बेकार का बताते ही रहोगे. हालांकि उसपर आपका कमाल यह भी है कि फिर जब कोई खेल में तेंदुलकर की ऊंचाई तक पहुंच जाता है, तो आप उसे "क्रिकेट के भगवान" तक का दर्जा देने से भी नहीं चूकते हैं. वैसे तो यह अच्छी ही बात है. इसमें सहिष्णुता ही झलकती है. लेकिन भगवान का दर्जा किसी एक क्षेत्र के टॉप पर बैठे व्यक्ति को ही देना, यह भी एक किस्म की असहिष्णुता ही है. सहिष्णुता तो यही कहती है कि हर क्षेत्र के टॉप पर बैठा व्यक्ति अपने क्षेत्र का भगवान है ही. और इस पूरी बात में आपको समझना यह है कि यदि तेंदुलकर के घरवाले भी आपकी तरह कर्म के क्षेत्रों के प्रति असहिष्णु होते, और तेंदुलकर के हाथों से बैट छीनकर उसे किताबें पकड़ा देते; तो क्या होता? तो वे निश्चित ही आज कहीं क्लर्क की नौकरी कर रहे होते. सो यदि आप जीवन में पिछड़े हुए हैं तो दोष भाग्य या भगवान को मत देना. अपने भीतर कर्मों के प्रति छिपी असहिष्णुता को पहचानना. और यह ध्यान रखना कि मनुष्य की नाकामियों का सिलसिला तबतक बदस्तूर जारी रहेगा जबतक नीचे से ऊपर तक, यानी आम मनुष्यों से महानतम लोगों तक "कर्म के क्षेत्रों" को लेकर सहिष्णुता नहीं जाग जाती है.

सच कहूं तो महान लोगों के प्रति आपलोगों ने असहिष्णुता की सारी सीमाएं लांघ रखी है. पूरा विश्व इसमें बराबरी पर शामिल है. और यह बात मैं आपको धीरजपूर्वक विस्तार से समझाता हूँ. क्योंकि कर्मों के प्रति सहिष्णु होने के लिए आपलोगों को यह बात अच्छे से समझनी ही रही. सो उस हेतु सिर्फ इतना बताओ कि आपका 'संत' का क्राइटेरिया क्या है? उसकी परिभाषा क्या है? अब 'संत' एक शब्द है. और शब्द सारे कोरे होते हैं. उसमें रंग उसकी परिभाषा भरती है. परिभाषा गलत बना ली जाए तो शब्द गलत दिशा में ले जानेवाला सिद्ध होता है. अब कायदे से तो 'संत' एक बड़ा ही ऊंचा शब्द है. लेकिन आप लोगों ने इस शब्द के साथ बड़ा खिलवाड़ किया है. यहां सभी ने संत की अपनी ही एक परिभाषा बना रखी है. क्रिश्चियन कहते हैं कि जो सफेद वस्त्र पहने तथा गले में क्रॉस लटकाए वो संत है. तो हिंदू कहते हैं कि जो भगवा पहने वह संत है. वैसे ही मुस्लिम कुछ तो बौद्ध कुछ और कहते हैं! अब यह क्या कमाल हुआ? पानी से लेकर पत्थर तक की पूरे विश्व की एक परिभाषा है, तो क्या 'संत' शब्द इन सभी निर्जिव वस्तुओं से भी गया-बीता है जो आप सबने इसकी अपनी-अपनी परिभाषा बना रखी है? यह अच्छे से समझ लो कि परिभाषा वस्तु की हो, व्यक्ति की हो या व्यवहार की; सबकी वास्तविक व सच्ची परिभाषा तो एक ही होती है. यह भगवा पहनना, दाढ़ी बढ़ाना या फिर अपनी जिद पर अड़े रहना; यह सब रत्तीभर संतों की निशानी नहीं है. यह सब तो बड़ा आसान है, कोई भी कर सकता है. खासकर वह तो कर ही सकता है जिसमें कमाने का अन्य कुछ हुनर ही न हो. इसमें जाता ही क्या है? इसमें तो उल्टा पैसा भी मिलता है व सम्मान भी, और वह भी सिर्फ 'तोता' बनने का. अतः स्पष्ट समझ लो कि संत की एक ही वास्तविक सहिष्णु परिभाषा है. और उस परिभाषा के बाद विश्व के किसी समाज, संप्रदाय या देश को संत की अपनी अलग से कोई परिभाषा बनाने की आवश्यकता नहीं रह जाती है. साथ ही यह भी कह दूं कि सिर्फ उसी परिभाषा के दायरे में 'संत' को विश्व का सबसे सम्माननीय व्यक्ति माना जा सकता है. बाकी अपनी भिन्न-भिन्न परिभाषाओं के आधार पर आपलोग जिन 'संतों' को सबसे ज्यादा महत्व दिए हुए हो; वह पूरी तरह से निराधार है. यह आप सबकी वास्तविक संतों के प्रति असहिष्णुता है.

निश्चित ही आपलोग कहेंगे कि ठीक है; चलो मान लेते हैं कि हमलोग वास्तविक संतों के प्रति असहिष्णु हैं. परंतु हम यह बात समझें कैसे? आप पहले संत की वास्तविक परिभाषा तो बताएं. ...तो वही बताने हेतु तो मैंने यह सारी बातें कही है. और अब मैं सीधे आपलोगों को 'संत' की वास्तविक परिभाषा तथा उनके महान लक्षण बताता हूँ. संत वह होता है जो मन की गहराइयों में डूबकर ईश्वर द्वारा स्वयं को प्रदान करी गई अपनी प्रतिभाओं को पहचानता है. ...फिर उसे निखारता है. और निखारकर फिर अपनी उस प्रतिभा को बिना किसी धन या सम्मान की अपेक्षा के पूरे विश्व के उद्धार हेतु बांटता है. ...जैसे बुद्ध, क्राइस्ट, कबीर ने बिना किसी स्वार्थ के पूरे विश्व को ज्ञान बांटा. बदले में न धन

चाहा, न सम्मान. किसी ने दूसरों के पैसे से बड़े-बड़े आश्रम नहीं बनाए. ये ही क्यों; अलफ्रेड नोबेल, वारेन बुफेट, बिल गेट्स आदि ने भी अपनी संपत्तियां चैरिटी में दी ही हैं. किसी से छिपा नहीं है कि विश्व के सबसे बड़े सम्मान “नोबेल पुरस्कार” की स्थापना अलफ्रेड नोबेल ने ही की थी. उस हेतु उन्होंने अपने जीवनभर की पूंजी चैरिटी में दे दी थी. और आजतक यह पुरस्कार उन्हीं की लगाई पूंजी से दिया जा रहा है. और हाल ही में मार्क जकरबर्ग ने तो कमाल ही कर दिया. उनके यहां पुत्री पैदा होने के सातवें रोज ही उन्होंने अपनी करीब-करीब पूरी पूंजी चैरिटी में दे दी. और ऐसे तो पूरे विश्व में एक नहीं हजारों उदाहरण मिल जाएंगे. टाटा-ग्रुप से कौन वाकिफ नहीं है? उन्होंने अपने व्यवसाय के जरिए देश की कितनी सेवा की है, वह बात किसी से छिपी नहीं है. अब आप ही फैसला कीजिए कि क्या ये महान उद्योगपति वास्तविक संत नहीं हैं? अरे, आप जिन्हें संत कहते हैं वे तो उल्टा आपसे पैसे लेते हैं. और बदले में देते क्या हैं? झूठे गर्व और कोरे आश्वासन! यही कार्य आपके नेता भी करते हैं. और इसी कारण इन दोनों की युगों से पटती आ रही है. दोनों का मकसद एक ही है कि बड़े सकारात्मक कार्य किए बगैर भी आपसे पैसे व सम्मान पाते रहना. और युगों से यह दोनों एकदूसरे के समर्थक रहे हैं. लेकिन इनका नेक्सस तोड़ना होगा. आपको यह समझना ही होगा कि ना तो आपके अधिकांश ‘धर्मगुरु’ संत ही हैं, और ना आपके अधिकांश नेता सेवक ही हैं. संत कह लो या सेवक, यदि कहीं है तो वे विज्ञान, कला तथा व्यवसाय के क्षेत्र में ही ज्यादा हैं. क्योंकि संत का वास्तविक अर्थ ही इतना है कि वह अपना सबकुछ बिना स्वार्थ या भेदभाव के सब पर निछावर कर देता है. एकबार आपने संतत्व के सम्मान हेतु यह वास्तविक क्राइटेरिया अपना लिया, फिर देखना; विश्व की तकदीर किस कदर बदल जाती है.

हालांकि सच कहूं तो अपने को महान गिनने के गुमान में सांप्रदायिक धर्मगुरु से कहीं ज्यादा तो आजकल के लीडर उतावले दिख रहे हैं. खासकर मैं अपनी धरती यानी भारत का उदाहरण दूं तो आजाद भारत के प्रधानमंत्रियों ने इस देश के लिए क्या किया यह तो वे जानें, परंतु देश की सड़कें, ब्रिज, एअरपोर्ट, बाग व स्मारक तक सब उनलोगों ने अपने नाम पर कर लिए हैं. अब उन्होंने कुछ किया भी हो तो भी इतना कुछ तो नहीं ही किया है कि भारत में जहां घूमों वहां उनका ही नाम नजर आए. आम भारतीय को उन लोगों से कहीं ज्यादा सहयोग यहां के कलाकार व उद्योगपतियों ने दिया है. यहां तक कि भारत के चन्द्र प्रतिभावान वैज्ञानिक भी इसमें पीछे नहीं हैं. मैं अपने अनुभवों के आधार पर कहता हूँ कि यदि भारतीय प्रजा के हृदय में कोई सबसे ज्यादा धड़कते हैं तो वे भारत के महान गायक-गायिकाएं हैं. आज भी आम भारतीय के सुकून भरे दो घंटे रफी, लता, किशोर, आशा व मन्नाडे के सहारे ही गुजरते हैं. सच तो यह है कि पिछले सौ वर्षों से “फिल्म व फिल्मी संगीत” इस गरीब भारत के कष्टदायक जीवन का सबसे बड़ा सहारा बनकर उभरा है. सो

यदि रोड व एअरपोर्ट सर्वाधिक किसी के नाम पर होने भी चाहिए थे तो वे भारतीय फिल्म उद्योग के भीष्मपितामह “दादासाहेबफाल्के” के नाम पर होने चाहिए थे.

खैर, अंत में मैं एकबार फिर निवेदन करना चाहूंगा कि कर्म के क्षेत्रों को लेकर जो असहिष्णुता है, उसे जड़-मूल से उखाड़ फेंको. क्योंकि तभी मनुष्य अपनी प्रतिभा के क्षेत्र में लग पाएगा. और ऐसा होगा तो ही उसका तथा सम्पूर्ण मनुष्यजाति का उद्धार हो पाएगा. मेरे हाथ में क्या है, ज्यादा-से-ज्यादा अपने अनुभवों के आधार पर आप लोगों को सही राह दिखाना. तो, वह तो मैं दिखा ही रहा हूँ. आगे अमल में रखना-न-रखना, या रखपाना-न-रखपाना...यह आपका विषय है.

अंत में चन्द बातें मैं अपने देशवासियों से करना चाहता हूँ. क्योंकि उन्हें यह समझना ही रहा कि उनका जितना पुराना सहिष्णुता का इतिहास है, उतना ही पुराना उनका असहिष्णुता का इतिहास भी है ही. सत्य तो यह है कि सहिष्णुता के मामले में पाक-साफ कोई भी धरती नहीं है. और मेरे प्यारे भारतवासियों यह बात तुम्हें भी अच्छी तरह से समझनी रही. क्योंकि झूठे गर्व करना या अपने ही विचारों में रहना किसी बात का समाधान नहीं है. यह देश सदियों तक गुलाम भी रहा है, और आज आजादी के इतने वर्षों बाद भी एक प्रगतिशील राष्ट्र नहीं बन पाया है. और न मालूम हो तो कह दूँ कि ये सब एक या दूसरे प्रकार की असहिष्णुता का ही परिणाम है. वरना आपसे बड़ा जनसंख्या वाला देश ‘चाइना’ इतनी प्रगति कर सकता है, तो आप क्यों नहीं? छोटे-छोटे यूरोपीय देश या फिर सिंगापुर जैसे सामान्य देश जब इतनी प्रगति कर सकते हैं, तो आप क्यों नहीं? बस इस ‘क्यों’ का जवाब खोजना जरूरी है. और मैं जानता हूँ कि आपलोगों से यह होनेवाला नहीं है. बस इसीलिए मैं “भारत” आपका अपना देश...स्वयं आपको आपकी तमाम असहिष्णुताओं के बाबत विस्तारपूर्वक समझाने हेतु प्रकट हुआ हूँ. सीधा कहूँ तो आपके सहिष्णु होने के सारे झूठे गुमान तोड़ने प्रकट हुआ हूँ. क्योंकि गलत होना इतना खतरनाक नहीं होता जितना कि गलत का गर्व होना. और दुर्भाग्य से सहिष्णुता के कई मामलों में भारत युगों से झूठे गर्वों का शिकार है. और उसमें सबसे प्रमुख है उसकी जातिगत आधार पर देशवासियों को विभाजित करने की पद्धति. दुःखद यह है कि इसमें सामाजिक परंपराओं के साथ-साथ धार्मिक-शास्त्रों तथा परंपराओं का भी पूरेपूरा योगदान है.

अब मनुष्य...मनुष्य है, तथा देशवासी हरहाल में देशवासी है. फिर उसे अलग से अन्य कोई जातिगत पहचान की आवश्यकता ही नहीं है. यूं भी मनुष्य यहां पहचाना सिर्फ अपने कर्मों से जाता है. चलो एकबार को मान भी लिया जाए कि जातिगत विभाजन से मनुष्य के रहन-सहन का अंदाजा लगता है, और वह कई बार उपयोगी भी सिद्ध हो सकता

है; परंतु तो भी किसी को मात्र जाति के आधार पर महान या तुच्छ तो समझा ही नहीं जा सकता है. मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ...क्योंकि मैं जानता हूँ कि कई लोग हमेशा जातिवाद के पक्ष में यह तर्क देते रहे हैं. लेकिन सवाल इतना ही है कि इसमें एक जाति के श्रेष्ठ होने व दूसरे के निम्न होने की बात कहां से आ जाती है? मनुष्य की श्रेष्ठता और निम्नता का ताल्लुक उसकी जाति से बिठाने से बड़ी असहिष्णुता और कोई हो ही नहीं सकती है. मेरा दुर्भाग्य यह है कि ऐसी क्रूर असहिष्णुता मेरी ही धरती पर व्याप्त है, और वह भी युगों से. सच कहूं तो यदि आज भारत विश्व के प्रगतिशील देशों में शामिल नहीं है तो सिर्फ उसकी इस एक असहिष्णुता के कारण. क्योंकि जो क्रूरता युगों से बरती जा रही हो उसका मनुष्य के मानस पर बड़ा गहरा असर पड़ता है. हर बीतते दिन के साथ क्रूरता सहने वाला मानसिक तौरपर कमजोर होता चला जाता है. और यहां तो निम्न जाति के समझे जानेवाले लोग मानसिक के साथ-साथ शारीरिक त्रासदी भी युगों से सहते आ रहे हैं. और मुझे यह कहने में जरा भी संकोच नहीं है कि उनपर होनेवाले जुल्मों ने अमानवीयता की सारी हदें लांघ रखी है. उन्हें मारना, सताना, बात-बात पर उनका अपमान करना, मंदिरों में या अन्य किसी सार्वजनिक जगहों पर उन्हें जाने की छूट न होना, पीने के पानी से लेकर उनके खाने के बर्तन तक का अलग होना; अब यह सब क्या है?

थोड़ा सोचो कि घर के ही किसी सदस्य का यदि बात-बात पर अपमान किया जाता है, तो क्या होता है? स्वाभाविक रूप से वह अपना आत्मविश्वास खो देता है. यदि किसी की बात-बिना-बात लगातार अवहेलना करी जाए, तो क्या होता है? निश्चित ही उसका आत्मपतन हो जाता है. और एकबार जिसका आत्मपतन हो जाए, एकबार जो अपना आत्मविश्वास खो दे; फिर उसके लिए ना तो खुलकर जीना संभव हो पाता है और ना ही वह कोई कार्य करने के लायक ही बचता है. ...ऐसे में सोचो कि जब निम्नजाति का कहकर हजारों वर्षों से जिनपर जुल्म हो रहे हों, जिनकी अवहेलना करी जा रही हो; उनका क्या हाल हो चुका होगा? इतनी बड़ी जनसंख्या के साथ यह आतंकियों-सा व्यवहार, और वह भी सदियों से? ...इससे बड़ी असहिष्णुता तो अन्य कुछ हो ही नहीं सकती है. शर्म मुझे आ रही है कि मेरी धरती पर यह आतंक हजारों वर्षों से होता आ रहा है. और इस हेतु मैं “भेद पैदा करनेवाले शास्त्रों को” कभी माफ नहीं कर सकता हूँ. माफ तो मैं इस भेद के नामपर मनुष्यता भुलानेवाले पंडितों, ब्राह्मणों व अन्य ऊंची जाति के लोगों को भी कभी नहीं कर सकता हूँ. क्योंकि मुझ सहिष्णु धरती पर यह एक ऐसा बदनुमा दाग है जिसने मेरा सर पूरी दुनिया के सामने शर्म से झुका दिया है.

खैर, यह तो भला हो गौतम बुद्ध का जिन्होंने आतंक के इस जहर को पहचाना. जिन्होंने मनुष्यता भुला बैठे पंडितों, ब्राह्मणों तथा अन्य ऊंची जातियों के इस भेदभावपूर्ण व्यवहार के असर को जाना. कृष्ण के बाद बुद्ध ही थे जिन्होंने इन लोगों के दर्द को जाना. कृष्ण ने इनका आतंक रोकने हेतु गीता में स्पष्ट किया कि मनुष्य को जन्म के आधार पर

नहीं, कर्म के आधार पर पहचाना जाना चाहिए. लेकिन बुद्ध इतना कहकर ही नहीं रुके. उन्होंने एक नई व्यवस्था ही दे डाली जिसमें 'जातिवाद' को जगह ही नहीं दी गई. उनके द्वारा दी गई व्यवस्था में सबकी एक ही जात थी, और वह थी मनुष्य की. बुद्ध ने पैंतालीस वर्षों तक इस व्यवस्था को स्थापित करने हेतु कड़ी मेहनत की. उनके जीते-जी भारत की आधी के करीब जनसंख्या उनके प्रभाव में आई थी. उस समय मुझे आशा की एक किरण दिखाई दी थी. मुझे लगा था कि अब जातिवाद के नामपर फैलाए जा रहे इस आतंकवाद का अंत आ जाएगा. ...परंतु ऐसा हो न सका. क्योंकि ये सदियों से निम्नजाति के कहकर दबाए गए लोगों के पास धन या सत्ता तो थे नहीं. जबतक बुद्ध थे, उनके प्रभाव ने सबको खामोश कर दिया था. लेकिन बुद्ध के विदा होते ही फिर इन पंडितों, ब्राह्मणों व अन्य ऊंची जाति के कहे जानेवाले सत्ताधीशों ने अपना रंग दिखाना शुरू कर दिया. फिर से दलितों को कुचला जाने लगा. धन व सत्ता के बलपर एकबार फिर उन्होंने अपना आधिपत्य स्थापित किया. वे शास्त्र और वे पंडित, जो बुद्ध के उदय के बाद कमजोर पड़ गए थे; उन्होंने एकबार फिर अपने जहरीले पंख फैलाने में सफलता हासिल कर ली. और वह भी इस कदर कि बौद्ध-धर्म को ही उन्होंने भारत से खदेड़ दिया. ...और यह बहुत बुरा हुआ. कृष्ण के बाद 'बुद्ध' मेरी धरती का दूसरा कमाल थे. इस पूरी बात का दुःखद पहलू यह कि बुद्ध के विचारों की विदाई के साथ ही इस धरती के उत्थान की जो आशा जागी थी, वह भी विदा हो गई.

एक बात समझो. जैसे करोड़ों तारे व ग्रहों के बावजूद वे सब एक संयुक्त ब्रह्मांड का हिस्सा हैं, जैसे आंख, कान, हाथ, लिवर जैसे तमाम अंग एक शरीर के हिस्से हैं; वैसे ही तरह-तरह के लोग एक भारत के हिस्से हैं. और जब तारों या शरीर के अंगों में कोई कम या ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है, तो फिर तमाम भिन्नताओं के बावजूद मेरी धरती पर रह रहे मनुष्यों में कैसे कोई कम या ज्यादा महत्वपूर्ण हो सकता है? अब हो तो नहीं सकता, परंतु हजारों वर्षों से यह होता तो आ ही रहा है. और मैं बेचारा हजारों वर्षों से आतंक का यह खेल देखता आ रहा हूँ. ...हालांकि आजादी के बाद एकबार फिर मुझे सब ठीक होने की उम्मीद जागी है. मेरी धरती के महान लाल बाबा साहेब अंबेडकर ने हजारों वर्षों से चले आ रहे इस भेदभाव के असर को अच्छे से जाना. उन्हें समझ में आ गया कि देश तभी बढ़ सकता है जब सबको बराबरी का अधिकार हो. जब सबको बराबरी के मौके उपलब्ध हों. और उसका एक ही उपाय है कि सदियों से दबाए गए दलितों को आगे बढ़ाया जाए. ऐसी व्यवस्था करी जाए कि जिससे वे अपना खोया आत्मविश्वास फिर से पा लें. तथा यह तभी संभव है जब सदियों से दबाए गए ये लोग सबके साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलने के लायक हो जाएं. और यह आप लोगों का और मेरा सद्भाग्य है कि आजादी के बाद देश के संविधान की डोर इस महान व्यक्ति के हाथों में दी गई. अब अंबेडकर तो इन जातिगत भेदभावों तथा अन्य हिंदू पाखंडों से विमुख होकर पहले ही "हिंदू धर्म" छोड़कर "बौद्ध

धर्म” अपना चुके थे. ऐसे में इन दबाए लोगों को मुख्यधारा में जोड़ने का क्या महत्व है, यह उनसे बेहतर कौन जान सकता था? और उन्होंने संविधान में इन पिछड़ों के लिए “रिजर्वेशन” का प्रावधान रख के यह सिद्ध भी कर दिया. निश्चित ही जो युगों से दबाए गए हों, उनसे रातोंरात यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे अच्छे व समृद्ध वातावरण में पले लोगों के मुकाबले परफॉर्म कर लें. ऐसे में तो संविधान में सबको बराबरी के अधिकार दिए जाने के बावजूद इन लोगों को मुख्यधारा से जुड़ने में न जाने कितने युग और बीत जाते. सो और कुछ नहीं तो उन्हें सरकारी नौकरियों तथा स्कूल-कॉलेज के एडमिशन में प्राथमिकता दी ही जानी चाहिए. बस उनकी इसी सोच और व्यवस्था ने मुझमें एकबार फिर आशा की किरण जगाई थी. क्योंकि युगों से पिछड़ों के नामपर दबाया गया यह समुदाय आज भारत की कुल जनसंख्या का करीब 25 प्रतिशत है. निश्चित ही यह बहुत बड़ी तादाद होती है. और इनकी दयनीय हालत का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि आजादी के करीब सत्तर वर्ष बाद भी इनकी कुल संपत्ति, भारत की कुल संपत्ति का एक प्रतिशत भी नहीं है. यानी कि पच्चीस प्रतिशत जनसंख्या होने के बावजूद कुल संपत्ति का सौवां हिस्सा भी इनके पास नहीं है. ...और यह इसलिए नहीं कि इनमें योग्यता की कमी है. यह सिर्फ इसलिए कि युगों से दबाए जाने के कारण इनके पास अवसर ही नहीं है. उन्हें अवसर प्रदान कराने हेतु मैं अपने महान लाल अंबेडकर को सलाम करता हूँ.

खैर, एकबात और ध्यान रख लेना. कभी यह मत सोचना कि रिजर्वेशन देते-देते सत्तर वर्ष बीत गए. कभी यह खयाल ही मत लाना कि आखिर यह कब तक? यह तबतक बदस्तूर जारी रहना चाहिए जबतक इनकी समृद्धि का आंकड़ा जनसंख्या के आधार को छू नहीं लेता. क्योंकि तभी आप कह सकते हैं कि अब इन्हें भी बराबरी का अवसर उपलब्ध है. और तभी रिजर्वेशन समाप्त किया जा सकता है. मैं जानता हूँ कि इससे उच्चजाति के कहे जानेवाले युवाओं को बड़ी बेचैनी होती है. उन्हें लगता है कि रिजर्वेशन उनके अवसर छीन रहा है. उन्हें अक्सर अपने मतलब के लिए भड़काया भी जाता है. कई बार यह भड़काना आंदोलन का उग्र स्वरूप भी ले चुका है. लेकिन उन्हें अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर सोचना चाहिए. उन्हें एक अच्छे नागरिक की तरह पूरे देश के लिए सोचना चाहिए. और फिर उन्हें यह भी समझना चाहिए कि युगों से पिछड़ों को दबाने में उनके ही पूर्वजों का हाथ रहा है. ऐसे में अपनी करनी का तो स्वयं को और अपनों को भुगतना ही पड़ता है. सो बेहतर है कि वे इस रिजर्वेशन के प्रावधान को देश हेतु एक कुर्बानी के तौरपर लें. वैसे रिजर्वेशन के खिलाफ अक्सर एक और तर्क दिया जाता है. कहा जाता है कि इसका असर पदों की गुणवत्ता पर पड़ता है. अब वह तो पड़ता ही है. लेकिन इसका “आज” क्या किया जा सकता है? यह तो शास्त्र लिखकर ऐसी तुच्छ व्यवस्था देनेवाले पंडितों को युगों पहले सोचना चाहिए था. जब आपलोगों ने युगों तक ऐसी क्रूर व्यवस्था की मलाई खाई है, तो अब थोड़ा सह भी लो. वह भी हंसते हुए तथा समझदारीपूर्वक. ...वैसे तो अक्सर यह आवाज

भी उठती रहती है कि रिजर्वेशन का आधार जाति के बजाए “आर्थिक” होना चाहिए. यानी कि हर उस व्यक्ति को रिजर्वेशन मिलना चाहिए जो आर्थिक रूप से पिछड़ा हो, फिर चाहे वह किसी भी जाति से क्यों न हो. और यह बात कई लोगों को तर्कसंगत भी लगती है. ...परंतु मैं स्पष्ट कर दूँ कि यह तर्क भी पूरी तरह से बेबुनियाद और आधारहीन है. क्योंकि कहा जानेवाला उच्चवर्ग भले ही आर्थिक तौरपर कमजोर हो, परंतु उनके मानसिक हालात पिछड़ों से हरहाल में बेहतर हैं. और फिर आर्थिक हालात मनुष्य की प्रगति में उतने बाधक नहीं हैं जितने कि मानसिक हालात. विश्व इतिहास के अधिकांश महान व सफल लोग कठिन आर्थिक हालातों से ही उभरकर ऊपर आए हैं. लेकिन जिसने एकबार मानसिक तौरपर विश्वास खो दिया, उसका ऊपर उठना मुश्किल हो जाता है. अतः आर्थिक आधार पर आरक्षण को तर्कसंगत माननेवालों को भी चेत जाना चाहिए. उनकी यह सोच देश हित में कतई नहीं है. सबको यह समझ ही लेना चाहिए कि भारत एक देश के तौरपर तबतक प्रगति नहीं कर सकता है जबतक सबको प्रगति करने के मानसिक व आर्थिक अवसर बराबरी पर उपलब्ध न करा दिए जाएं.

सो, मैं सबसे निवेदन करता हूँ कि जो हो गया-सो हो गया. सोच को सुधारकर बिगड़ी बनाई जा सकती है. युगों से दबे लोगों को बराबरी पर खड़ा किया जा सकता है. निश्चित ही यह मनुष्यता पर बड़ा उपकार होगा. लेकिन मेहरबानीकर इसे समाजवादी विचारधारा समझने की गलती मत कर लेना. मैं समाजवाद का कतई पक्षधर नहीं. मेरा यह दृढ़ मानना है कि मनुष्य का जीवन उसके कर्मों पर आधारित ही होना चाहिए. उसमें क्षमता हो तो पूरे विश्व की संपत्ति अपने नाम कर ले, कौन रोकता है? अब कृष्ण... ‘कृष्ण’ थे, और वे कृष्ण अपने बलबूते पर बने थे. साधारण ग्वाले “कन्हैया” से लेकर “द्वारकाधीश कृष्ण” तक का सफर उन्होंने अपनी प्रज्ञा के बलपर तय किया था. और कृष्ण वे अकेले थे, उन्होंने अपना कृष्णपन बांटा नहीं था. सो यहां सवाल कतई एक का कमाया सबमें बांटने का नहीं है. यहां सवाल सिर्फ युगों से चले आ रहे सामाजिक अन्याय को न्याय में बदलने का है. और यह भी स्पष्ट कर दूँ कि यह सिर्फ रिजर्वेशन के अमलीकरण से नहीं होगा. इस हेतु पंडितों, ब्राह्मणों तथा उच्चवर्ग के कहे जानेवाले अन्य लोगों को अपनी मानसिकता को भी बदलना होगा. स्पष्ट शब्दों में कहूँ तो उनकी इन्सानियत जागना बेहद जरूरी है. क्योंकि इनमें से अधिकांश उच्च जाति के लोग इन पिछड़ों के प्रति तुच्छ दृष्टि रखते ही हैं. यह तो कानून का डर है, वरना खुलकर सामने आ जाते. लेकिन सबको यह समझना चाहिए कि जब कुदरत ने कभी “मनुष्य से मनुष्य का” कोई भेद नहीं करा है, तो फिर भेद करनेवाले आप कौन होते हैं? सबको यह समझना ही रहा कि आपका उन्हें हीन समझना, सारी सुविधाओं के बावजूद उनके विकास में बाधक सिद्ध हो रहा है. सबको यह समझना ही रहा कि मानसिक हीनता के शिकार व्यक्ति का उठना आसान नहीं रह जाता है. अतः उम्मीद करता हूँ कि सभी मिलकर “उपलब्ध अवसरों के आधार पर सबको बराबरी पे लाने हेतु”

अपनी पूरी जी-जान लगाएंगे. और ऐसा करके मुझपर लगे असहिष्णुता के इस सबसे बड़े धब्बे को हमेशा के लिए मिटा देंगे.

वैसे तो देश के विकास में एक और बाधा है. यहां पर एक संप्रदाय-विशेष ऐसा भी है जो बुरी तरह से पिछड़ा हुआ है. और यह चिंता का खास विषय इसलिए है कि इनकी जनसंख्या बहुत ज्यादा है. जी हां, मैं मुसलमानों की बात कर रहा हूँ. सभी जानते हैं कि इनकी जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का करीब चौदह प्रतिशत है. और स्पष्ट कहूं तो इनके इस कदर पिछड़े होने में इन्हीं का हाथ है. क्योंकि इन्हें कभी भी, कहीं भी दबाया नहीं गया है. उल्टा सदियों तक मुगलों का इस देश में शासन रहा है. परंतु चूंकि इन लोगों ने ना तो कभी महिला की स्वतंत्रता पर और ना ही बच्चों की पढ़ाई पर कोई विशेष ध्यान दिया है. वे अपने ही मानसिक दायरे में रहना ज्यादा पसंद करते हैं. वे यह समझने को तैयार ही नहीं हैं कि जीवन विशाल व अनंत है. यह रोज-रोज नई करवट लेता है. जीवन नित नई उड़ानें भरता है. कोई एक मान्यता इसे बांधकर नहीं रख सकती. जीवन वक्त के साथ बहती धारा का नाम है. मेरे लिए यह विशेषरूप से चिंता का विषय इसलिए है कि मुस्लिम समुदाय देश की कुल आबादी का चौदह प्रतिशत है. और जमीनी हकीकत यह है कि जनसंख्या में चौदह प्रतिशत होने के बावजूद मैं नहीं मानता कि कुल संपत्ति पर इनका अधिकार दो-तीन प्रतिशत से ज्यादा है. और यह निश्चित ही घोर चिंता का विषय है. इन्हें इस कदर पिछड़ा तो रखा ही नहीं जा सकता है. वहीं इन्हें आरक्षण भी नहीं दिया जा सकता है. ...क्योंकि ये सताए गए लोग भी नहीं हैं. इन्हें प्रगति के ज्यादा नहीं तो बराबरी पर अवसर तो हमेशा उपलब्ध रहे ही हैं. यह बात मैं इसलिए कह रहा हूँ कि कई मुगल सम्राटों के राज में इन्हें ज्यादा महत्व मिला ही है. यदि इसके बावजूद ये लोग आज पिछड़े हुए हैं तो इसका कारण उन्हें ही खोजना रहा. देश का संविधान इस मामले में इनकी कोई विशेष मदद करने से रहा. और मैं यह साफतौर पर कहता हूँ कि यदि इन्होंने अपनी सोच को जीवन की बहती धारा से नहीं मिलाया तो ये लोग कभी भी बराबरी पर नहीं आनेवाले. ऐसे में नुकसान इनका भी है, तथा एक देश होने के नाते मेरा भी. क्योंकि मुसलमानों का जीवनस्तर बढ़े बगैर मैं कभी भी समृद्ध देशों की सूची में शामिल नहीं हो सकता हूँ. सो देश की होनहार मुस्लिम आवाम से मेरा निवेदन है कि वे महिलाओं को नौकरी की स्वतंत्रता प्रदान करें, बच्चों के उज्वल करिअर की चिंता करें; तथा अपनी सोच को वक्त के साथ बहने दें. मैं जानता हूँ कि आपको मुझसे बेहद प्यार है. मेरी व आपकी प्रगति एकदूसरे से भिन्न नहीं है. सो मेरी बात धैर्यपूर्वक समझें, तथा उसपर अमल कर अपने देश को दुनिया के सर्वोच्च शिखर पर बिठाने में सहयोग करें. आपके स्वार्थी कट्टर लोग मेरी इस बात का विरोध करेंगे. परंतु एकबात स्पष्ट समझ लो कि एक आप ही नहीं, दुनिया का कोई भी समुदाय जबतक तमाम प्रकार की कट्टरता को ठुकरा नहीं देता, प्रगति नहीं कर सकता है. क्योंकि मेरी यह बात हमेशा के लिए हरकोई ध्यान रख लेना कि “मनुष्य के जीवनस्तर और उसकी प्रगति का” सहिष्णुता से

सीधा ताल्लुक है. साथ ही यह भी ध्यान रख लेना कि किसी भी प्रकार की कट्टरता या दृढ़ता “सहिष्णुता” में एकमात्र बाधा है. सो, मैंने अपनी ओर से सारी बातें खुलकर कह दी. आगे क्या करना, यह आपलोगों के विवेक पर निर्भर है.

साथ ही एकबात मैं तमाम पृथ्वीवासियों से भी कहना चाहूंगा. क्योंकि अब जो बात मैं कहने जा रहा हूँ वह पूरे विश्व को समझने की है. सबको यह स्पष्ट तौरपर समझ ही लेना चाहिए कि आपलोगों का अस्तित्व इस पृथ्वी के कारण है, इस पृथ्वी का अस्तित्व आपलोगों पर निर्भर नहीं है. आपलोग तो कितनी ही बार इस पृथ्वी पर आए और चले गए. इस पृथ्वी पर नदियां तब भी बहती थी, जब आपलोग नहीं थे. पृथ्वी पर फूलों का उगना या वर्षा का होना आपके अस्तित्व पर निर्भर नहीं है. साथ ही यह भी समझ लो कि आपको हवा-पानी से लेकर खनिज तक, तथा हरियाली से लेकर वर्षा तक सबकुछ; यानी जीवित रहने की तमाम सुविधाएं इस सोलार सिस्टम में सिर्फ इस पृथ्वी पर ही उपलब्ध हैं. लेकिन दुःख की बात यह है कि बावजूद इसके आपलोग अपनी धरती के प्रति सहिष्णु नहीं हैं. यहां हरेक को अच्छे से समझ लेना चाहिए कि उसे जीवन इस धरती ने दिया है. अतः उसे सबसे पहले अपने देश और इस पृथ्वी के प्रति सहिष्णु होना चाहिए. ...परंतु ऐसा है नहीं. यहां हरकोई अपनी मान्यताओं और विचारों के प्रति ज्यादा कटिबद्ध है, और यह गलत है. मैं अपनी ही धरती यानी भारत का उदाहरण देता हूँ. अब देश है तो आप हैं, यह धरती है तो आप हैं; इसमें तो कहीं कोई विवाद हो ही नहीं सकता है. तो फिर अपने ही देश “भारत माता की जय” बोलने में क्या अड़चन होनी चाहिए? लेकिन कई लोग उसमें भी अपनी मान्यताएं बीच में ले आते हैं. कई लोग गलत तर्कों का हवाला भी देते हैं. ...जय तो सिर्फ “एक ईश्वर की”. अब यह क्या बात हुई? अरे जय तो सबकी, जिससे कुछ मिलता है. किसी को गाली देना हो तो समझे, जय बोलने में क्या ऐतराज? और फिर आप जिन-जिन मान्यताओं का हवाला देते हैं, वे सब दो-पांच हजार वर्ष पुरानी हैं. मैं उससे कहीं ज्यादा पुराना हूँ. ऐसी कितनी ही मान्यताओं को मैं आते व जाते देख चुका हूँ. सो अपनी मान्यताओं को आधार बनाकर मेरी जय बोलने से इन्कार करना पूरी तरह से गलत है. इसका अर्थ यह मत निकाल लेना कि मुझे अपनी जय बुलवानी है. मुझे इसमें कोई रुचि नहीं है. और फिर मेरी तो वैसे ही जय है. एक सौ बत्तीस करोड़ मनुष्यों को अपने सीने पर पाल रहा हूँ, अब इससे बड़ी मेरी जय और क्या होगी? सो यह स्पष्ट समझ लो कि “मेरी जय” इतनी विशाल है कि वह किसी के जय बोलने या न बोलने पर निर्भर नहीं है. सवाल सिर्फ इतना है कि जो जीवन दे रहा है, जिसपर जीवन आधारित है; उसकी जय बोलने में ऐतराज कैसे हो सकता है? ...इतनी असहिष्णुता जीवन देनेवाली धरती के प्रति कोई दिखा ही कैसे सकता है? तुमको पानी मैं देता हूँ, कितने ही घाव सीने पर खाकर तुम्हारा अन्न मैं उगाता हूँ, मेरे बिना तुम पलभर को जीवित नहीं रह सकते; इतना महत्वपूर्ण तथा करुणावान होने के बावजूद मेरी जय बोलने से आपलोग दृढ़तापूर्वक का इन्कार कर ही कैसे सकते हैं?

अब यह तो बात का एक पहलू हुआ. चन्द लोग ऐसे भी हैं कि हम भारत माता की जय नहीं बोलेंगे, जय हिंद बोलेंगे. अरे...कोई कुछ भी मत बोलो, मुझे क्या फर्क पड़ता है? बात भारत माता की या जय हिंद की नहीं है. सवाल भावना का है. सवाल सम्मान का है. सवाल इस बात का है कि जीवन देनेवाली धरती से ज्यादा सम्मान अन्य किसी को दिया ही कैसे जा सकता है? ...हालांकि इस विवाद के और भी कई पेंच हैं. सच कहूं तो हाल ही में उभरे इस विवाद से मेरा हृदय रो-रो दिया है. मैं बिना भेदभाव के सबसे इतना प्यार करता हूँ, और यहां चन्द लोग अपने मतलब हेतु मेरा भी इस्तेमाल करने से बाज नहीं आते हैं. मुझे दुःख इस बात का है कि “भारत माता की जय” का विवाद छेड़नेवाले तथा उसके पक्ष में चिल्लाने वालों को भी मुझसे कुछ लेना-देना नहीं है. वे भी यह विवाद छेड़कर अपनी राजनैतिक रोटियां ही सेक रहे हैं. ...देख लो अपनी शक्ल आईने में. पैदा करने तथा पालने वाली धरती के प्रति कैसी असहिष्णुता दिखा रहे हैं आप? एक मान्यताओं का आसरा लेकर जय बोलने से इन्कार करता है, दूसरा राजनैतिक लाभ प्राप्त करने हेतु जय बोलने का राग छेड़ता है. यह तो अच्छा है कि मेरे भीतर इन्सानों-सा कमजोर हृदय नहीं है, वरना तो शायद हृदय पीड़ा से ही फट गया होता. और फिर मैं तो मन को महत्व देता हूँ, जबान को नहीं. जय बोलना भावना का विषय है. मुंह से जय बोलो या न बोलो, उसका कोई महत्व नहीं है. अब यूं तो मेरी सबसे ज्यादा जय नेता लोग बोलते हैं. बात-बात पे झंडावंदन कर ये नेता लोग मुझे सम्मान भी देते रहते हैं. तो क्या उनके मन में देश के प्रति बड़ी उच्च भावना है? नहीं, यह सब ऊपरी दिखावा-मात्र है. उल्टा इन नेताओं ने तो भ्रष्टाचार करके मुझे लूटा ही है. सो किसी के प्रति सम्मान होना, यह हृदय का विषय है. यह झंडावंदन करना या थिएटर में खड़े होने के मेकेनिकल एक्ट का कोई महत्व नहीं है. और कायदे से तो ये सारे दिखावे के एक्ट बंद हो जाने चाहिए. अपनी धरती के प्रति सम्मान लोगों के हृदय में होना ही चाहिए. और फिर नाटक तो यूं भी किसी बात का सबूत नहीं. और आप सब नाटक में बड़े माहिर हो. दिल में देशभक्ति हो न हो, परंतु पन्द्रह अगस्त को गाड़ी में झंडा जरूर लगाएंगे. भीतर धर्म हो न हो, मंदिर-मस्जिद-चर्च जरूर हो आएंगे. लेकिन सच्चा प्रेम कभी भी “आई लव यू” कहने का मोहताज नहीं होता है. उल्टा सच तो यह है कि सच्चा प्रेम अकारण “आई लव यू” कह ही नहीं पाता है. सो वाकई दिल में देशभक्ति और धर्म जगाना चाहते हो, तो ये सारे ऊपरी नाटक बंद करो. क्योंकि ये तमाम नाटक सिवाय देशभक्त व धार्मिक होने की झूठी तसल्ली देने के और कुछ नहीं करते हैं.

एक बात और कह दूं. अन्य कुछ हो न हो परंतु नेता तथा सरकारी कर्मचारियों के हृदय में तो देश के प्रति सच्चा सम्मान होना ही चाहिए. क्योंकि इन दोनों को तो सीधे तौर पर देश पालता है. लेकिन सच कहूं तो यह भी इस देश का दुर्भाग्य है कि यही दोनों देश को लूटने में लगे हुए हैं. न केवल इन दोनों की दीवारों पर ही तिरंगे से लेकर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की तस्वीर लटकी होती है, बल्कि इनके बिल्लों पर भी भारत लिखा ही होता है. फिर

भी उसी दीवार के नीचे नेता भ्रष्टाचार करने से व सरकारी कर्मचारी रिश्वत लेने से बाज नहीं आते हैं. अतः मैं कहना इतना ही चाह रहा हूँ कि देशभक्ति हृदय में होनी चाहिए. यह दिखाने की या कसमें खाने की चीज नहीं है. और यह नारे लगाने की चीज तो कतई नहीं है. सच तो यह है कि जो चीज तहेदिल से हृदय में समाई हो, उसे प्रदर्शित करने तक की जरूरत नहीं पड़ती है. सो मेहरबानीकर देश के प्रति अपना कर्तव्य सहृदय निभा सकते हो तो निभाओ, वरना छोड़ो. परंतु कम-से-कम मेरी जय करना या न करना, और करना तो किस तरह से करना जैसे विवाद छेड़कर मेरा उपयोग तो मत ही करो. आप लोगों को पालने के एवज में इतनी अपेक्षा तो मैं कर ही सकता हूँ.

खैर, यहां यह और स्पष्ट कर दूं कि सबके हृदय में देश के प्रति वफादारी तभी जाग सकती है, जब सबपर एक कानून लागू हो. धर्म, जात या प्रभाव के आधार पर कानून में जो भेद है, या फिर उसके अमलीकरण में जो फर्क आ जाता है; वह मुझे कतई मान्य नहीं है. कानून धरती का चलेगा. और संविधान मेरा कानून है. और उसके साथ यह खिलवाड़ अब मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता कि एक धर्म के लोगों के लिए एक कानून व दूसरे धर्म के लोगों के लिए दूसरा कानून. एक ही देश के एक राज्य हेतु अलग कानून व दूसरे राज्य के लिए भिन्न कानून. नेता व ब्यूरोक्रेट्स के लिए कानून का नजरिया अलग तथा आम आदमी के लिए अलग. गरीब कानून की चक्की में पिसकर रह जाए और अमीर कानून का मजाक उड़ाए...? यह सब अब लंबा नहीं चल सकता है. अमीर व्यक्ति बैंकों का हजारों करोड़ खा जाए तो कोई बात नहीं, लेकिन गरीब किसान का हल दस हजार रुपये के लिए जब्त कर लिया जाए; यह कैसा इन्साफ हो रहा है इस देश में? और इसका एकमात्र कारण है कि देश के अधिकांश नेता तथा ब्यूरोक्रेट्स भ्रष्टाचारी तथा रिश्वतखोर हो चुके हैं. हालांकि सभी ऐसे हैं ऐसा भी मैं नहीं कह रहा हूँ. यह इस देश का सद्भाग्य रहा है कि यहां का एक भी प्रधानमंत्री कभी भी भ्रष्टाचारी नहीं रहा है. बड़े पदों पर बैठे एक-से-एक बड़े सरकारी अफसर हैं ही, जो वाकई पूरा देश ईमानदारी से सम्भाले हुए हैं. परंतु दुर्भाग्य से ऐसे नेताओं तथा ब्यूरोक्रेट्स की तादाद काफी कम है. लेकिन मेरा और देश की जनता का, दोनों का भला चाहते हो तो अब यह सबकुछ बदलना पड़ेगा. ...वरना इतनी देर हो जाएगी कि सबकुछ हाथ से निकल जाएगा.

सौ बातों की एक बात यह है कि नेताओं व सरकारी कर्मचारियों को यह बात अच्छे से समझनी रही कि उनके कंधों पर एक सौ बत्तीस करोड़ लोगों की जवाबदारी है. और इस जवाबदारी से बढ़कर धर्म का दूसरा कोई अवसर हो ही नहीं सकता है. वहीं आम प्रजा को भी कम-से-कम अपने उद्धार की जवाबदारी ठीक से निभानी ही रही. क्योंकि जबतक सबका विकास नहीं होता, देश का समूचा विकास होने से रहा. यदि भारत से ज्यादा जनसंख्या वाला देश चाइना इतना गजब का इन्फ्रास्ट्रक्चर खड़ा कर सकता है, इतने बड़े पैमाने पर मेन्यूफैक्चरिंग कर सकता है; तो आप क्यों नहीं? बस इस एक सवाल का सही

उत्तर खोज लो, सारी समस्याओं का अंत आ जाएगा. हालांकि मैं जानता हूँ कि आप नहीं खोज पाएंगे. ...सो मैं ही इशारा किए देता हूँ. यह मत समझना कि चाइनिज लोग ज्यादा प्रतिभाशाली होते हैं. नहीं..., बात सिर्फ इतनी-सी है कि वे काम करने में विश्वास करते हैं. वे जानते हैं कि जीवन बिना केरिअर बनाए चलनेवाला नहीं है. अब यह जीवन का एक सीधा और साफ तथ्य है. और कायदे से तो इसे सबसे पहले और सबसे ज्यादा भारतवासियों को समझना था. क्योंकि आज से पांच हजार वर्ष पूर्व कृष्ण ने गीता में कह डाला था कि “स्वधर्म” ही मनुष्य का सच्चा धर्म है. और स्वधर्म का अर्थ इतना ही है कि जो कुछ भी मनुष्य की आजीविका का साधन है, जो कुछ भी कार्य उसके जीने का सहारा है; उसमें उसे ईमानदारी से रहना चाहिए. यदि मनुष्य अपने कार्य तथा कर्तव्यों के प्रति ईमानदार है तो उसे अन्य किसी धर्म की आवश्यकता ही नहीं है. और यह बात कृष्ण ने कब कही? तब, जब अर्जुन शास्त्रों का सहारा लेकर तथा पाप-पुण्य का हवाला देकर युद्ध के मैदान से भागना चाह रहा था. तब कृष्ण ने अर्जुन को समझाया कि तू क्षत्रिय है, राज करना तथा राज्य पाना तेरा कर्म है. तेरा मन भी यही है. तू पिछले तीस वर्षों से भी कहीं ज्यादा समय से ‘राज्य’ हेतु कौरवों से झगड़ता आ रहा है. अतः शारीरिक व मानसिक दोनों स्तर पर यही तेरा स्वधर्म है. और मनुष्य किसी भी शास्त्र के बहकावे में आकर या पाप-पुण्य की बात करके अपने स्वधर्म से पीछे नहीं हट सकता है. ...क्योंकि जीना सबसे बड़ा धर्म है. परिवार को पालना मनुष्य का सबसे बड़ा कर्तव्य है. और यदि मनुष्य स्वधर्म से ही पीछे हट गया, तो जीएगा कैसे; और कर्तव्य निभाएगा कैसे?

यह बात चाइना की समझ में तो आ गई पर भारतवासियों की समझ में नहीं आ रही है. लेकिन “स्वधर्म” ही धर्म है, यह बात पूरे देश को समझने की है. ...अब कहने को तो यहां कृष्ण को सभी पूजते हैं. मानने को तो सभी गीता को सबसे बड़ा ‘सत्य’ मानते ही हैं. परंतु यह सब ऊपरी है. एकबार फिर कह दूं कि यह सब भी सिवाय नाटक के और कुछ नहीं है. स्वधर्म...चाइना में ईमानदारी से निभाया जा रहा है. भारत में स्वधर्म कम तथा धर्म के नामपर नाटक ज्यादा चल रहा है. अरे, कृष्ण सीधा-सीधा सत्य तो समझा रहे हैं. वे स्पष्ट कह रहे हैं कि जीवन जीने के लिए होता है. जीने हेतु कर्म करना आवश्यक है. और जो मनुष्य ईमानदारी से अपना कर्म कर रहा है, व उसके सहारे दिल खोलकर जी रहा है; उसे अन्य किसी धर्म की कोई आवश्यकता ही नहीं है. अब यह बात चाइनिज लोग समझते हैं, और आप कृष्ण के कहने के बावजूद समझने को तैयार नहीं हैं. सच कहूं तो यह जो कमाल है न भारत का, वही भारी पड़ रहा है. क्योंकि इसका परिणाम यह हो रहा है कि भारत में कार्य करनेवालों की संख्या चाइना से आधी भी नहीं है. अब ऐसे में कोई भी देश या कोई भी परिवार प्रगति कर ही कैसे सकता है? देश में दो करोड़ के करीब तो पंडित-मौलवी-पादरी हैं, जिन्हें कार्य करने की आवश्यकता ही नहीं है. उन्हें तो ईश्वर ने कह दिया है कि आपलोगों को देश की श्रद्धालु जनता फाइव-स्टार लक्झरी देकर पालेगी. फिर एक करोड़

के करीब राजनैतिक कार्यकर्ता व गुंडे हैं जो एक या दूसरी पार्टी का झंडा लिए घूमते रहते हैं. इस देश की सिस्टम ने उन्हें भी सेट कर ही दिया है. उनका जीवन भी बिना कार्य करे चल ही रहा है. उसपर एक करोड़ से ज्यादा सरकारी कर्मचारी हैं. उन्हें तो गजब का वरदान प्राप्त है. वे तो जब, जिससे और जितना चाहिए, कारण-बिना कारण मांग ही सकते हैं. सो, सबसे पहले तो इन चार-पांच करोड़ लोगों पर सरकारी लगाम लगनी चाहिए. यदि यह एक कार्य सरकार नहीं कर सकती तो फिर ऐसी सरकार की हर बात हवाई ही समझूंगा. क्योंकि पांच करोड़ हट्टे-कट्टे व प्रतिभाशाली लोग बिना कुछ किए पले और वह भी अच्छे से, तो वह देश प्रगति कर ही कैसे सकता है? भला पंडिताई, नेतागिरी या बाबूगिरी व्यवसाय कहे ही कैसे जा सकते हैं? फिर आती है देश की महिलाएं. उन्होंने भी काम करना अभी ही शुरू किया है, और वह भी ज्यादातर सिर्फ शहरों में. और यहां के युवाओं का तो कहना ही क्या? वे तो यह मानकर ही चल रहे हैं कि उन्हें पढ़ाने, उनका विवाह करवाने तथा उनका केरिअर बनाने की जिम्मेदारी परिवार की है. पहले परिवार अपना स्वधर्म निभाए, फिर हम देखेंगे. ...अब एक कमाए व चार खाए तो कोई परिवार नहीं बढ़ सकता है. बीस प्रतिशत जनता ही कार्य करे, तो कोई देश प्रगति नहीं कर सकता है. यहां सबको समझना रहा कि... “स्वधर्म ही धर्म है”.

अतः यह सरकार का कर्तव्य है कि यहां-वहां के चुनावी जुमले व नारे देने के बजाए एक ‘स्वधर्म’ का नारा बुलंद करे. स्त्रियों को कार्य करने हेतु प्रेरणा भी दे व वातावरण भी. मैं यह नहीं कह रहा कि ‘हाउस-वाइफ’ होना गलत है. वह भी एक कार्य ही है. वह भी स्वधर्म का एक हिस्सा ही है. ...बशर्ते वह वास्तव में हाउस-वाइफ की जिम्मेदारी पूरी ईमानदारी से निभा रही हो. हाउस-वाइफ का कार्य यह है कि घर में सबको समय से अपनी पसंद का भोजन मिले. घर का वातावरण हमेशा खुशनुमा रखना भी हाउस-वाइफ का ही कर्तव्य है. साथ ही घर के बुजुर्गों की सेवा करना तथा उनके सम्मान का खयाल रखना भी एक हाउस-वाइफ के कर्म-क्षेत्र में ही आता है. यही क्यों, घर के बच्चों को ठीक से पालना तथा उन्हें जीवन की सही राह दिखाना भी एक हाउस-वाइफ का कर्तव्य है. ...यदि कोई ईमानदारी से यह सारे कर्तव्य निभाती हैं, तो यह अपनेआप में एक महान कार्य है. लेकिन कुछ न कर घर पे बैठे रहनेवाली औरतें हाउस-वाइफ कतई नहीं कही जा सकती हैं. फिर इससे तो बेहतर है कि वह अपने पति के कार्य में हाथ बंटाए या बाहर कहीं नौकरी कर ले. कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य जन्म लिया है तो कार्य तो करना ही पड़ेगा. कार्य न करना अपने साथ-साथ...अपने परिवार तथा देश के प्रति भी एक अन्याय है. और यह बात मुस्लिमों को विशेष रूप से समझने की है. यदि पचास प्रतिशत जनसंख्या कार्य ही नहीं करेगी तो आप आगे कैसे बढ़ेंगे? हालांकि आजकल तो उनकी सोच में भी बड़ा सकारात्मक परिवर्तन आया ही है. खासकर भारत में तो मुस्लिम महिलाएं काफी हद तक

एक्टिव हैं ही. और यह परिवार तथा देश, दोनों की प्रगति हेतु जरूरी भी है. ...फिर भी मैं कहूंगा कि महिलाओं की स्वतंत्रता पर मुस्लिम समुदाय को अभी बहुत कुछ करना है.

खैर, किसी भी देश का निर्माण उसके युवा करते हैं. और परिवार तथा सरकार दोनों को चाहिए कि अठारह वर्ष की एक आयु सीमा तय कर दी जानी चाहिए. उसके पश्चात लड़का हो या लड़की, उन्हें पढ़ना हो या न पढ़ना हो; परंतु उन्हें अपने पैरों पर तो खड़ा होना ही चाहिए. कायदे से 18 वर्ष के बाद पढ़ाई भी करनी हो तो भी स्कूल की फीस स्वयं कुछ कार्य करके निकालनी ही चाहिए. यही नहीं, 18 वर्ष के बाद युवा को अपनी पॉकेट-मनी ना सिर्फ स्वयं कमाते सीखना चाहिए बल्कि उसी के दायरे में रहते भी सीखना चाहिए. ...फिर चाहे उनका परिवार कितना ही संपन्न क्यों न हो? क्योंकि सबको यह ध्यान रखना ही चाहिए कि देश हो या परिवार, बातें करने से नहीं बल्कि कार्य करने से आगे बढ़ेंगे. वहीं सबको यह भी नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्यों के कार्यों में निखार भी “सही उम्र में आत्मनिर्भर हो जाने से” ही आता है. और फिर दूर क्यों जाना? मनुष्यजाति का पूरा इतिहास ‘स्वधर्म’ की दुहाई दे ही रहा है. कृष्ण यदि अपने बलबूते पर द्वारका जैसी संपन्न नगरी बसा पाए तो सिर्फ इसलिए कि उन्हें बचपन से ‘स्वधर्म’ का पाठ सिखाया गया था. वे छोटी-सी उम्र से गायें चराने गोवर्धन जाया ही करते थे. एडीसन छोटी-सी उम्र से अखबार बेचा करते थे. और महान वॉल्ट डिज्नी भी बचपन में घर-घर जाकर अंडे व अखबार बेचा ही करते थे. सो मैं एकबार फिर कहता हूँ कि अपना जीवन अपने कर्मों से बनाने के अलावा मनुष्य का दूसरा कोई धर्म नहीं है. बाकी सब माने जाने वाले धर्म तो इस ‘महान-स्वधर्म’ के सामने वैसे ही फीके पड़ जाते हैं. मनुष्य हो, परिवार हो या देश हो; जो भी आगे बढ़ा है, वह स्वधर्म को निभाने के कारण ही आगे बढ़ा है.

हालांकि सामने सरकार के लिए भी एक नहीं अनेक चुनौतियां मुंह फाड़े खड़ी ही हैं. अब अठारह वर्ष बाद कार्य करना अनिवार्य हो, ऐसा कानून तो बनाया नहीं जा सकता है. और यूं भी कानून बनाने से कुछ होता भी नहीं है. कानून तो दहेज-प्रथा से लेकर भ्रष्टाचार तक सबके लिए बने ही हुए हैं. परंतु जमीनी हकीकत यह है कि दोनों दिन-ब-दिन बढ़ते ही जा रहे हैं. अतः मैं एकबार फिर कहूंगा कि कानून किताबों का विषय नहीं है. कानून मनुष्य के हृदय में स्थित हो, तो ही काम का है. आप किसी भी यूरोपीय देश में चले जाइए, आपको किसी भी सिग्नल पर ट्रैफिक हवलदार खड़ा नहीं मिलेगा. लेकिन चूंकि कानून का सम्मान सबके दिलों में है, आपको वहां कोई सिग्नल तोड़ता भी दिखाई नहीं देगा. और आपके महान देश यानी मेरी बात करी जाए तो हर सिग्नल पर ट्रैफिक हवलदार दिखाई पड़ जाएंगे. पर वे भी इस इन्तजार में कि कोई सिग्नल तोड़े और उनका दिन बने. सो सबसे पहले सबको यह समझना होगा कि ‘सत्य’ मनुष्य का हृदय है. क्रिया या व्यवस्था कतई सत्य नहीं है. क्रिया और व्यवस्था पाखंड को तो बढ़ावा दे सकती है, परंतु किसी बात को ठीक से अमल में कभी नहीं रख सकती. और सच कहूं तो पाखंड भारत की

सबसे बड़ी समस्या है. जितना पाखंड भारत में है उतना विश्व के किसी अन्य देश में नहीं है. और यही कारण है कि यहां की किसी भी समस्या का निराकरण कभी नहीं हो पाता है. जिसे देखो वह सबकुछ ऊपरी तौरपर करने में ही लगा हुआ है.

होगा, अभी तो वापस सरकार के सामने मौजूद चुनौतियों पर लौट आऊं. इस देश की सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि यहां की हर बड़ी समस्या अंडा पहले या मुर्गी पहले की तरह उलझ गई है. और यही समस्या का सबसे खतरनाक पहलू है. समस्या चाहे किसी के व्यक्तिगत जीवन में पनप रही हो या वह देश या समाज पर दस्तक दे रही हो; यदि उसपर तात्कालिक ध्यान न दिया जाए तो वह उलझ जाती है. फिर समस्या “अंडा-मुर्गी” का खेल खेलना शुरू कर देती है. फिर उसके समाधान का सिरा न इधर मिलता है, न उधर. फिर वह न यह करने से सुलझती है, न वह करने से. फिर तो ‘यह व वह’ ‘इधर व उधर’ दोनों का साथ में ध्यान रखकर उसे सुलझानी पड़ती है. और यह कतई आसान नहीं होता है. क्योंकि फिर बड़े धैर्य व ध्यान से समस्या का सामना करना पड़ता है. और मैंने इतने वर्षों में व्यक्ति हो, समाज हो, या फिर संप्रदाय व देश ही क्यों न हो; सबको समस्याओं के तल पे “अंडा-मुर्गी की तर्ज पर” उलझते देखा है. और यह जो मैं कह रहा हूँ, वह बड़ा महत्वपूर्ण है. अतः मेरी यह बात ध्यान रख लेना कि समस्या के उजागर होते ही उसे सुलझाना आसान होता है. फिर वह पतंग के मंझों की तरह उलझकर रह जाती है. और भारत की सारी समस्याएं आज इसी तरह उलझी हुई हैं. इस शृंखला में रोजगार की ही बात करूं तो आज यदि देश का युवा अठारह वर्ष बाद कार्य करना चाहे तो भी रोजगार के उतने अवसर यहां उपलब्ध नहीं हैं. अतः सरकार को दोनों बातों पर एक साथ ध्यान देना होगा. एक तरफ जहां युवाओं को कार्य करने हेतु प्रेरणा देनी होगी, वहीं दूसरी तरफ रोजगार के नए-नए अवसर भी पैदा करने होंगे. हालांकि कम-से-कम हर युवा अपने पारिवारिक कार्य में तो हाथ बंटा ही सकता है. भले ही उसकी एवज में वह अपने घरवालों से ही पॉकेटमनी ले ले. और कुछ नहीं तो थोड़ा-बहुत तो आत्मनिर्भर हरकोई हो ही सकता है. वहीं एक और भयावह समस्या है जो बुरी तरह से अंडा पहले या मुर्गी पहले की तर्ज पर उलझी हुई है. ...और वह है बाल-मजदूरी की. अब यह विषय बेहद पेचीदा है. यह तो तय है कि दस-बारह वर्ष की उम्र कार्य करने की नहीं, पढ़ने की होती है. निश्चित ही इस हेतु कानून भी बना दिया गया है. लेकिन सामने देश की वास्तविकता से भी सभी वाकिफ हैं ही. देश में इतनी गरीबी है कि यहां लाखों परिवार ऐसे हैं जहां पे बच्चों से काम न करवाए तो घर पे खाना ही न पके. कई परिवार तो ऐसे हैं कि वे सिर्फ इन दस-बारह वर्षों के बच्चों के भरोसे ही पल रहे हैं. अब दस-बारह वर्ष के बच्चों को कार्य नहीं करना चाहिए यह तो ठीक है, पर सरकार के पास इस बात का कोई जवाब नहीं है कि ये बच्चे कार्य नहीं करेंगे तो इनका तथा इनके परिवार का क्या होगा? उसका कोई समाधान किसी ने कभी नहीं दिया है. और सच कहूं तो यह

समाधान दिए बगैर बाल-मजदूरी का कानून किस काम का? बस ऐसी ही हजार उलझनों में आज भारत उलझा हुआ है.

अब जो है, सो तो है ही. परंतु बारी-बारी करके हर उलझन से निकलना भी पड़ेगा ही. और इसका सबसे सरल उपाय “वैचारिक-सहिष्णुता” के अलावा कुछ नहीं है. पूरे देश को वैचारिक स्तर पर इतना सहिष्णु होना ही पड़ेगा कि देश की हर ज्वलंत समस्या पर खुलकर “बौद्धिक-चर्चा” हो. फिर वह समस्या कश्मीर की हो या धारा 370 की. फिर वह समस्या राम मंदिर-बाबरी मस्जिद की हो या धार्मिक कट्टरता की. फिर वह चर्चा बाल-मजदूरी को लेकर हो या देश में व्याप्त अंधविश्वासों को लेकर. और चाहे वो चर्चा नेता, धर्मगुरु व सरकारी कर्मचारियों पर लगाम कसने की ही क्यों न हो, मैं तो कहता हूँ कि देश के हर नागरिक को इन चर्चाओं में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेना चाहिए. लेकिन सबको एकबाट समझना चाहिए कि ‘देशहित’ उनके जाती विचारों या मान्यताओं से बढ़कर होता है. खासकर इस बात का ध्यान धर्मगुरु व नेताओं को विशेषरूप से रखना चाहिए. क्योंकि इन दोनों को अपने खिलाफ कुछ सुनने की आदत ही नहीं है. पर वक्त बदल रहा है. वक्त को बदलना ही पड़ेगा. देशहित में यहां सबको अपने विचारों तथा मान्यताओं के विपरीत चर्चाएं प्रेमपूर्वक सुनने की आदत डालनी ही पड़ेगी. मैं फिर कहता हूँ कि किसी के भी जाती विचार या किसी की भी मान्यताएं इस धरती के हित से ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है. और इस हेतु सबको अपने स्वार्थ तथा अहंकार को त्यागने की आवश्यकता है. खासकर “एक देश-एक कानून” पर तो चर्चा की भी आवश्यकता नहीं है. क्योंकि यह संविधान की वास्तविक मूल भावना है. जब सबको समान अधिकार, तो सबके लिए अलग-अलग कानून हो ही कैसे सकते हैं? और जिन्हें ऐतराज हो वे चाहे तो देश छोड़ दें या फिर चाहे तो बराबरी का अधिकार छोड़ दें. दुनिया के सभी विकसित देशों में “एक देश-एक कानून” लागू है. और भारत में भी यह होना ही चाहिए. इतनी स्पष्ट बात सिर्फ मैं ही कर सकता हूँ, क्योंकि मैं सबके प्रति करुणा से भरा हुआ हूँ. मुझे कोई स्वार्थ नहीं, इसलिए कोई डर नहीं. मैं सिर्फ सबका सामूहिक विकास चाहता हूँ. और मुझे यकीन है कि मेरी हर बात को मनुष्य कुदरत के द्वारा स्वयं को बख्शे विशाल हृदय से समझेगा. मुझे तो यकीन यह भी है कि हरकोई ना सिर्फ समझेगा, बल्कि उसपर अमल कर अपनी तथा अपने मुल्क के विकास की एक मजबूत नींव भी रखेगा.

खैर, भारत की अनेक समस्याएं हैं. निश्चित ही सब समस्याओं पर निजात पाकर उसे विश्व के प्रगतिशील देशों में शामिल भी होना है. और इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत की सारी समस्याओं की जड़ में भिन्न-भिन्न प्रकार की व्याप्त असहिष्णुताएं ही हैं. मोटा-मोटी तौरपर उनमें से सभी प्रमुख असहिष्णुताओं की चर्चा मैं संक्षेप में कर ही चुका हूँ. लेकिन अब आगे मैं जो चर्चा करने जा रहा हूँ, वह वाकई बड़ी दुःखद है. और वह चर्चा है आजाद भारत के प्रधानमंत्रियों को लेकर. अब प्रधानमंत्री देश का प्रमुख होता है. पूरे देश

की बागडोर उसी के हाथ में रहती है. अब जो इतने बड़े पद पर विराजमान हो, कम-से-कम उससे तो मैं देश के प्रति पूरी तरह से सहिष्णु होने की अपेक्षा कर ही सकता हूँ. लेकिन आजाद भारत के अबतक के सभी प्रधानमंत्रियों ने बिना अपवाद के मेरी अपेक्षाओं को तोड़ा है. हालांकि इसका अर्थ यह कतई मत निकाल लेना कि देश को गलत प्रधानमंत्री मिले हैं. भारत की आजादी के बाद से आजतक, यानी नेहरू से लेकर मोदी तक; सबके सब श्रेष्ठ लोग ही इस पद तक पहुंचे हैं. भारत के किसी भी प्रधानमंत्री पर जाती तौर पे भ्रष्टाचार का एक आरोप नहीं लगाया जा सकता है. ...आप कहेंगे कि इतना सब है, फिर आपको शिकायत क्यों है? वह भी बताता हूँ, कुछ धीरज तो रखो.

सो, शुरुआत मैं नेहरू से ही करता हूँ. आजाद भारत की अनेक समस्याएं थीं. खासकर विभाजन के वक्त हुए हिंदू-मुस्लिम झगड़े से उभरी कटुता दूर करना नेहरू के सामने सबसे बड़ी चुनौती थी. ...वरना देश अंतःकलह में ही उलझकर रह सकता था. लेकिन सौम्य, शांत तथा सुलझे हुए नेहरू ने सफलतापूर्वक हिंदू-मुस्लिम भाईचारा फिर से स्थापित किया. आजाद भारत की दूसरी सबसे बड़ी समस्या उन राजे-रजवाड़ों को लेकर थी जो अब भी अपनी अलग सल्तनत टिकाए रखना चाहते थे. लेकिन सद्भाग्य से इस समस्या को आजाद भारत के पहले गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल, जिन्हें लौह-पुरुष के नाम से भी जाना जाता है, ने अच्छे से सुलझाया. सो नेहरू और पटेल की इस बात हेतु मैं जितनी तारीफ करूँ कम है. लेकिन मेरा इतना ही कहना है कि एक प्रधानमंत्री के लिए इतना ही काफी नहीं है. प्रधानमंत्री का पद सबसे बड़ा पद होता है. एक तरीके से पूरे देश का वह इकलौता राजा होता है. पूरे देश की जिम्मेदारी उसके कंधों पर होती है. उसे सिर्फ देश के प्रति ही सहिष्णु होना चाहिए. एकबार जो इस पद पर बैठ जाए उसे पार्टी व परिवार से ऊपर उठकर सिर्फ देश के लिए सोचना चाहिए. मेरी दृष्टि में देश के लिए ऐसी सोच रखनेवाला ही एकमात्र सच्चा और सहिष्णु प्रधानमंत्री है. क्योंकि प्रधानमंत्री को यह ध्यान रखना चाहिए कि उनकी किसी भी चूक का हर्जाना पूरे देश को भुगतना पड़ता है. जबकि कोई सामान्य व्यक्ति चूक करता है तो उसका हर्जाना सिर्फ उसे, या बहुत हुआ तो उसके परिवारवालों को भुगतना पड़ता है. और सामान्य नागरिक तथा प्रधानमंत्री का यह फर्क कम-से-कम पद संभालने वाले प्रधानमंत्री को समझ में आ ही जाना चाहिए. अभी जवाहरलाल नेहरू की ही बात करूँ तो सभी जानते हैं 1947-48 के भारत-पाकिस्तान के प्रथम युद्ध के समय आनन-फानन में ब्रिटेन में पदस्थापित उस समय के तात्कालिक हाई-कमिश्नर वी. के. कृष्णामेनन ने तमाम प्रोटोकॉल को दरकिनार करते हुए ब्रिटेन को 200 जीप का ऑर्डर दे दिया था. अब हो सकता है कि मेनन का यह निर्णय समय की मांग रही हो. परंतु सत्य यह है कि उन जीपों की डिलिवरी लगभग दो वर्ष बाद हुई, और वह भी पूरी जीपें तो डिलिवर नहीं ही हुई. अब जब सांसदों ने इसे लेकर हंगामा मचाया तो भी नेहरू ने सबको बात भूलने की ही सलाह दी. मैं ना तो नेहरूजी पर ना ही मेनन पर उंगली उठा रहा

हूँ. मैं कहना सिर्फ इतना चाह रहा हूँ कि नेहरूजी की कटिबद्धता देश के प्रति होनी चाहिए थी, मेहनत के प्रति नहीं. ...ऐसे ही 1955 में जब नेहरूजी के दामाद श्री फिरोज गांधी ने “जीवन बीमा घोटाले” का पर्दाफाश किया तो नेहरूजी ने तात्कालिक वित्तमंत्री टी. टी. कृष्णामाचारी का इस्तीफा अवश्य लिया, परंतु मजबूरी में. ...यानी उनका यह निर्णय तहेदिल से नहीं था. और इसका सबूत यह कि घोटाले को उजागर करने के बाद कायदे से जिस फिरोज गांधी को पदोन्नति मिलनी चाहिए थी, उल्टा उसके बाद फिरोज गांधी तथा नेहरूजी के संबंधों में कटुता आ गई. इसका अर्थ स्पष्ट है कि नेहरू को फिरोज गांधी द्वारा अपनी ही सरकार का घोटाला उजागर करना रास नहीं आया. ...और यही गलत है. यही मैं कहना चाह रहा हूँ. सवाल आप भ्रष्टाचारी हैं या नहीं, उसका नहीं है. सवाल यह है कि आपकी कटिबद्धता देश के लिए है या फिर पार्टी, सरकार तथा सरकार की इमेज के लिए है? अब नेहरू ने तो अपना पूरा जीवन देश को निछावर किया था. देश को आजाद करवाने वाले अग्रणी नेताओं में से वे एक थे. ऐसा व्यक्ति भी मजबूर? और वह भी प्रधानमंत्री के पद पर होते-सोते? बस यही मुझे मंजूर नहीं है. मेरा स्पष्ट कहना है कि प्रधानमंत्री को कोई बंधन नहीं पालना चाहिए... सिवाय कि “देशहित” के.

चलो, अब बात इंदिरा गांधी की करता हूँ. निश्चित ही वे आजाद भारत की सबसे मजबूत प्रधानमंत्री थीं. उनकी दृढ़ता का नमूना वे पाकिस्तान युद्ध में सिद्ध कर चुकी हैं. सबको याद होगा कि उसी युद्ध के बाद बांग्लादेश पाकिस्तान से अलग हो गया था. यही क्यों, जब पंजाब पर आतंक का साया मंडरा रहा था, तब भी उन्होंने सेना को ‘स्वर्ण-मंदिर’ परिसर के भीतर भेजने का बोल्ड स्टेप लिया ही था. और यह भी सभी जानते हैं कि उनके इसी बोल्ड स्टेप के कारण उन्हें शहीद भी होना पड़ा था. लेकिन देश की एकता और अखंडता सर्वोपरि है ही. और यह इंदिरा गांधी ने कर दिखाया था. परंतु जब देश का राजनैतिक वातावरण उनके खिलाफ होने लगा, जब हाईकोर्ट ने उनका चुनाव निरस्त कर दिया; तो अपनी इसी दृढ़ता का उन्होंने दुरुपयोग किया. अपनी सत्ता बचाने हेतु 1975 में उन्होंने देश में इमरजेन्सी लगा दी. और इमरजेन्सी यानी हजार तरीके के प्रतिबंध. और हर प्रतिबंध सिवाय असहिष्णुता के और कुछ नहीं है. अकारण मानवीय स्वतंत्रता पर हमला, सबसे बड़ी असहिष्णुता है. और यह असहिष्णुता भी क्यों, सिर्फ सत्ता बचाने के लिए? बस इसी बात का मुझे आश्चर्य है. मेरा सवाल इतना ही है कि एक प्रधानमंत्री को देश के प्रति कटिबद्ध होना चाहिए या अपनी सत्ता के प्रति? अरे...सत्ता रहे ना रहे, देश का वातावरण नहीं बिगड़ना चाहिए.

खैर, आगे बात राजीव गांधी की करता हूँ. उनके द्वारा इस देश में टेक्नोलोजी के क्षेत्र में लायी गई क्रांति हेतु मैं हमेशा उन्हें सलाम करता रहूंगा. उनकी सरलता भी दिल को भानेवाली ही थी, इसमें भी कोई दो राय नहीं हो सकती है. परंतु प्रधानमंत्री पद की गरिमा को धब्बा उन्होंने भी पहुंचाया है, यह तो मुझे कहना ही पड़ेगा. और उसका सबसे बड़ा

उदाहरण चर्चित शाहबानो केस है. आपको केस याद न हो तो मैं यह पूरा वाकया सबको संक्षेप में समझाता हूँ. मध्यप्रदेश की आर्थिक राजधानी इंदौर का यह किस्सा है. वहां के एक वकील मोहम्मद अहमद खान ने अपनी दूसरी शादी के कुछ दिनों बाद अपनी पहली पत्नी शाहबानो को उससे पैदा हुए अपने पांच बच्चों सहित घर से निकाल दिया. अब यह किसी भी प्रकार से मानवीय कृत्य नहीं कहा जा सकता है. यहां तक कि वह शुरुआती दौर में शाहबानो को जो दो सौ रुपये महीना गुजारा देता था, वह भी कुछ समय बाद उसने देना बंद कर दिया. अब ऐसे में एक महिला अपना तथा अपने पांच बच्चों का गुजारा कैसे करे? सो मजबूर शाहबानो ने कोर्ट का दरवाजा खटखटाया. स्थानीय कोर्ट के जज ने पूरा मामला सुनते हुए वकील मोहम्मद खान से शाहबानो को 125 रुपये महीना गुजारा भत्ता देने का आदेश दिया. परंतु वकील खान ने कोर्ट के इस आदेश को मानने से इन्कार कर दिया. जुझारू शाहबानो ने इसके खिलाफ हाईकोर्ट में अर्जी दाखिल की. हाईकोर्ट ने भी शाहबानो की मांग स्वीकारते हुए वकील खान को उसे 179.20 रुपये मासिक गुजारा देने का आदेश दिया. लेकिन वकील खान को गुजारा देना कतई मंजूर नहीं था. उसने गुजारा भत्ता देने से बचने हेतु “मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड” से मदद मांगी. यही नहीं, उनकी सहायता से उसने हाईकोर्ट के फैसले को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती भी दे डाली. सुप्रीम कोर्ट में यह मामला जजों की एक बेंच ने सुना, तथा अंत में उसने भी हाईकोर्ट के भत्ता दिए जाने के आदेश पर मुहर लगा दी. निश्चित ही देश की निचली अदालत से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक सबने दुखियारी महिला को उसका हक दिलवाने के पक्ष में फैसला दिया. ...लेकिन देशभर के मुसलमान कोर्ट के इन फैसलों के खिलाफ आंदोलन पर उतर आए. क्यों...? क्योंकि उनका कहना था कि यह कोर्ट द्वारा उनके धार्मिक मामलों में दखलंदाजी है. अब भला कोई भी धर्म मानवता से बढ़कर कैसे हो सकता है? परंतु धार्मिक कट्टरपंथियों को यह बात ना तो कभी समझ में आई है, और न आएगी. लेकिन देश का संविधान तो मानवीय आधार पर खड़ा है. उसमें सभी नागरिकों को समान अधिकार उपलब्ध है. और निश्चित ही आप हिंदू, क्रिश्चियन या बौद्ध महिला को इस तरह से खदेड़कर सड़क पर नहीं ला सकते. तीन बार तलाक-तलाक-तलाक कह देने से उन्हें तलाक नहीं दे सकते. महिला को देश में पुरुष के बराबरी पर अधिकार उपलब्ध है ही. और उसी अधिकार के तहत तलाक दिए जाने पर महिला तथा उसके बच्चों को जीवन गुजारने हेतु मासिक भत्ता देने की कानूनी जवाबदारी पुरुष की है ही. और देश के कानून ने एक अबला मुस्लिम महिला के साथ इन्साफ किया. लेकिन बावजूद इसके मुस्लिम समाज भड़क गया. ...बजाए खुश होने के कि उनकी एक महिला को न्याय मिला, उल्टा उन्होंने कोर्ट के फैसले के विरोध में देशव्यापी आंदोलन छेड़ दिया. क्यों...? कौन-सा धर्म कहता है कि महिलाओं को जीने का अधिकार नहीं है? कौन-सा धर्म कह सकता है कि महिला इन्सान ही नहीं है. क्या एक महिला के अरमान नहीं होते? क्या वह स्वतंत्र नहीं होती? क्या महिला का दिल नहीं धड़कता है? अब पुरुषों का तो समझ में

आता है कि उन्हें महिलाओं को दबाकर रखने में रस है. परंतु कम-से-कम मुस्लिम महिलाओं को तो शाहबानो द्वारा छोड़ी गई उनके हक की इस लड़ाई में उनका साथ देना था. परंतु आश्चर्यजनक रूप से कोई मुस्लिम महिला भी आगे नहीं आई. उल्टा कड़ियों ने तो पुरुष के सुर-में-सुर मिलाया. अब कौन क्या मानता है, यह महत्वपूर्ण नहीं है. महत्वपूर्ण यह है कि देश अपने नागरिक की सुरक्षा चाहता है. और देश अपने नागरिक की वह सुरक्षा “धर्म, जात, तथा पद” की गरिमा से ऊपर उठकर चाहता है. और भारत का संविधान उस हेतु कटिबद्ध है. यहां तक कि अब तो हिंदू लड़कियों को भी अपने पिता की प्रॉपर्टी का हिस्सेदार माना गया है. माना ही जाना चाहिए. एक माता-पिता के लिए संतान... “संतान” होती है; उसमें लड़के-लड़की का भेद हो ही नहीं सकता है. और वैसे ही एक देश के लिए उसका नागरिक उसका नागरिक होता है. ...उसे उसका हक दिलवाना देश के संविधान का कर्तव्य होता है. और भारत के संविधान ने अपनी इस जवाबदारी का अच्छे से निर्वाह किया है. और यदि कोई यह सोचता है कि “मुस्लिम पर्सनल लॉ” संविधान के इस मानवीय पहलू के बीच में आता है, तो फिर ऐसे “मुस्लिम पर्सनल लॉ” को रद्द कर दिया जाना चाहिए. और यह बात एक मुस्लिम पर्सनल लॉ तक सीमित नहीं है. सभी धर्मों के सभी पर्सनल लॉ को समाप्त कर ही दिया जाना चाहिए. सबको यह स्पष्टतापूर्वक समझ ही लेना चाहिए कि “एक देश-एक कानून” ही देश को चलाने का एकमात्र सही तरीका है. और फिर मुस्लिम पुरुषों ने शाहबानो का विरोध किया तो भी कम-से-कम मुस्लिम महिलाओं को तो शाहबानो जैसी जांबाज का साथ देना ही चाहिए था. इतनी कष्टपूर्ण परिस्थितियों में भी शाहबानो सिर्फ अपनी नहीं, बल्कि समस्त मुस्लिम महिलाओं के हक की लड़ाई लड़ रही थी. और फिर कम-से-कम मुस्लिमों के हित का दावा करनेवालों को तथा अपनेआप को मुस्लिम बुद्धिजीवी कहलाने वालों को तो शाहबानो का साथ देना था. लेकिन दुर्भाग्य से सारे दावे कागजों तक ही सिमटकर रह गए. आश्चर्य मुझे मुस्लिम महिलाओं पर हो रहा है. यदि वे ही बहकावे में आकर बराबरी का हक नहीं चाहती, तो दूसरा कोई उनकी मदद कैसे कर सकता है? ये लोग तो आपको धर्म के नाम पर डराएंगे, बहलाएंगे और फुसलाएंगे, परंतु आप तो अपने प्रति होश में रहें. आपको तो जागना चाहिए था. आप मुस्लिम महिलाओं को तो शाहबानो द्वारा छोड़ी गई तथा जीती हुई जंग का पूरेपूरा फायदा उठा लेना चाहिए था.

खैर, अब आत्महत्या पाप है, यह तो सभी मानते ही हैं. आत्महत्या कानूनन स्वीकार्य नहीं है, यह भी सब जानते ही हैं. बस ठीक वैसे ही कोई भी जाति या संप्रदाय अपनी कट्टरता के कारण या अपने अंधेपन और लाचारी के कारण दबकर जीना चाहे, तो वह स्वीकार्य नहीं किया जा सकता है. क्योंकि वह भी एक प्रकार की आत्महत्या ही हुई. तथा ऐसी सामूहिक आत्महत्याएं रोकना देश की सरकार तथा उसके संविधान का प्रथम कर्तव्य है. राजीव गांधी को कायदे से सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद मुस्लिम महिलाओं के साथ हो रहे भेदभाव को खत्म करने का मौका मिला था. यानी दस करोड़ मुस्लिम

महिलाओं को नया जीवन देने का एक सुनहरा अवसर उनके हाथ लगा था. और उनके पास ऐतिहासिक बहुमत भी था. पहली बार लोकसभा में किसी पार्टी के चार सौ से ज्यादा सांसद जीतकर आए थे. शायद ऐसा ऐतिहासिक बहुमत फिर किसी को ना भी मिले. लेकिन मुझे दुःख भी होता है तथा आश्चर्य भी कि मौका भुनाना तो दूर उल्टा राजीव गांधी मुस्लिम वोटों के चक्कर में पड़ गए. हाथ आए अच्छेखासे मौके को अपने बहुमत के बलपर पलटकर रख दिया. उन्होंने लोकसभा में “द मुस्लिम वुमन एक्ट 1986” पास करवाकर सुप्रीम कोर्ट के फैसले को ही उलट दिया. ...यानी वोट पहले, फिर भले ही शाहबानो और उसके बच्चे सड़कों पर दम तोड़ दे; उन्हें कोई ऐतराज नहीं. करोड़ों मुस्लिम महिलाओं को दोहरा व्यवहार सहना पड़े, राजीव गांधी को उसकी चिंता नहीं. अब देश के नागरिकों के प्रति ऐसी तो कैसी असहिष्णुता? एक प्रधानमंत्री को वोट और सत्ता का ऐसा तो कैसा मोह? और वह भी इस कदर कि उस हेतु इन्सानियत तक को दांव पर लगा दिया जाए? पद व सत्ता हेतु महिला के अधिकारों से खिलवाड़ किया जाए? यह तो प्रधानमंत्री के पद के प्रति तथा अपने कर्तव्यों के प्रति असहिष्णुता की हद हो गई. प्रधानमंत्री और मजबूर...? सच कहूं तो यह बात ही मेरे गले नहीं उतरती है. परंतु मैंने आजाद भारत के सभी प्रधानमंत्री को एक या दूसरी मजबूरी से घिरा ही पाया है. और मेरी दृष्टि में राजीव गांधी द्वारा हाथ लगा “एक देश-एक कानून” स्थापित करने का यह मौका चूकना, एक दिन आजाद भारत की सबसे बड़ी भूल सिद्ध होगी.

खैर, आगे मैं बात मनमोहन सिंहजी की करता हूँ, जो दस वर्ष प्रधानमंत्री रहे. उनकी ईमानदारी पर शक करने का सवाल ही नहीं उठता है. परंतु उनके नाक तले कितना भ्रष्टाचार होता रहा, यह जगजाहिर है. उन्हें पता चलने के बाद भी वे कोई कारगर कदम नहीं उठा पाए, यह भी जगजाहिर है. वे जब पूछो तब अपनी राजनैतिक मजबूरियों का हवाला देते रहे. बस यही बात मुझे आघात पहुंचाती है. प्रधानमंत्री भी मजबूर...? तो फिर ऐसे देश के आम नागरिक का क्या हाल होगा? और वह इन मजबूर प्रधानमंत्रियों के कारण हो चुका है. और सच कहूं तो प्रधानमंत्रियों की इन मजबूरियों ने ही देश को आगे बढ़ने से रोका हुआ है. यही कारण है कि जब भी कोई नया प्रधानमंत्री आता है, मुझे उम्मीद जागती है. ...शायद यह दृढ़ निकलेगा. शायद यह सिर्फ देश के प्रति कटिबद्ध होगा. और उम्मीद पर जहां कायम है. एक न एक दिन तो इस देश को ऐसा प्रधानमंत्री मिलेगा ही जैसा कि मैं चाहता हूँ.

खैर, जो आज प्रधानमंत्री नहीं उनकी बहुत चर्चा करके मैं अपना दिल क्यों दुखाऊं? जो हो चुका, वह हो चुका. इतिहास से सबक लिया जा सकता है. और देश के आने वाले प्रधानमंत्रियों को इतिहास से सबक लेना ही रहा. सो अभी तो मैं सीधे देश के वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की बात करूं. क्योंकि उनसे सीधी बातचीत संभव है. ...तो नरेन्द्र, तुम पैदा मेरे सीने पर हुए हो तथा पले व बड़े भी मेरी ही छाती पर हो. मैंने तुम्हारा

पूरा जीवन देखा है. एकबार को एक पिता अपनी संतान को समझने में गलती कर सकता है, परंतु मैं कभी भी किसी को समझने में कोई गलती नहीं करता हूँ. यही तो मेरी असली शक्ति है. मेरे इसी सायकोलोजिकल ज्ञान के कारण तो मेरी बात ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है. मैं मनुष्य का आज ही नहीं, उसके जन्मोंजन्मांतर को जानता हूँ. क्योंकि मैं मन की शृंखला तथा प्रकृति के गणित दोनों को अच्छे से समझता हूँ. सो मुझे उम्मीद है कि नरेन्द्र...आप मेरी बात को पूरी गंभीरता से लेंगे. सबसे पहले मैं यह समझाना चाहता हूँ कि प्रधानमंत्री का पद होता क्या है? यह निश्चित ही देश का सर्वोच्च पद होता है. यह एक ऐसा पद होता है जिस पे सम्पूर्ण देश की जवाबदारी होती है. पूरा देश उस पद पर बैठनेवाले की क्षमता और नीयत के भरोसे होता है. और यह पद जवाबदारी-मात्र नहीं है. प्रधानमंत्री पद की सबसे बड़ी गरिमा ही यह है कि उसे अपनी जवाबदारियां निभाने हेतु पूर्ण सत्ता भी प्राप्त है. यानी अपनी जवाबदारी निभाने हेतु इस पद पर बैठे व्यक्ति को किसी प्रकार की कोई लाचारी नहीं है. ऐसे में यदि कोई भी प्रधानमंत्री अपने कर्तव्यों का ठीक से निर्वाह नहीं कर पाता है तो सवाल सिर्फ उसकी नीयत और क्षमता पर ही उठेंगे. उम्मीद है कि यह सीधी बात मोदीजी आपकी समझ में आ गई होगी. और फिर तुम्हारा तो नाम ही नरेन्द्र है. सच कहूं तो यह नाम मुझे वैसे ही बहुत पसंद है. क्योंकि इसी नाम का एक और लाल मेरी छाती पर पला और बढ़ा था. उसने पूरे विश्व में मेरी धार्मिक तथा सांस्कृतिक धरोहर का परचम लहराया था. आज मेरे उस महान लाल को दुनिया विवेकानंद के नाम से जानती है. इस बात का जिक्र मैं इसलिए कर रहा हूँ कि उसमें और तुममें कई समानताएं हैं. फिलोसोफी और राजनीति तुम दोनों के व्यक्तित्व का प्रमुख हिस्सा हैं. विवेकानंद की फिलोसोफी तो जगजाहिर हो गई, परंतु उनकी राजनैतिक प्रतिभा कुछ समाज-सेवाओं तक ही सीमित रह गई. और तुम्हारा उससे उल्टा है. तुम्हारी राजनैतिक प्रतिभा तो विश्व के सामने आ गई, परंतु भीतर के फिलोसोफर को अभी बाहर आना बाकी है. और तुम्हें मालूम हो न हो, मेरी यह बात ध्यान रख लेना कि तुम्हारे में फिलोसोफिकल चाह ज्यादा गहरी है. और वह आज नहीं तो कल प्रगाढ़ता से बाहर आएगी भी. वैसे योग को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलवाए जाने को मैं तुम्हारे द्वारा फिलोसोफी की तरफ बढ़ाए एक कदम के तौरपर ही ले रहा हूँ.

चलो, व्यक्तिगत बातें तो होती ही रहेगी. अभी तो मैं एक प्रधानमंत्री को कैसा होना चाहिए वह बताता हूँ. और इस बाबत सीधा कहूं तो एक प्रधानमंत्री को पूरी तरह से सहिष्णु होना चाहिए. और पूरी तरह से सहिष्णु होने का मतलब जानते हैं...मोदीजी आप? यह थोड़ा ध्यान से समझ लेना. क्योंकि जबतक इस देश को एक पूरी तरह से सहिष्णु प्रधानमंत्री नहीं मिल जाता है, तबतक इस देश का ज्यादा कुछ होनेवाला नहीं है. और पूरी तरह से सहिष्णु प्रधानमंत्री का अर्थ होता है “मन से शून्य” प्रधानमंत्री. यूं भी किसी भी फिलोसोफिकल व्यक्ति की सबसे बड़ी ऊंचाई उसके “मन का शून्य होना” ही होता है. यह नियम है कि “जिस व्यक्ति का जितना शून्य-मन, उतना ही वह संसार के लिए उपयोगी

होता है”। वैसे तो तुम्हारे में फिलोसोफिकल चेतना जागृत है ही, सो यकीनन मैं जो इशारा करना चाह रहा हूँ वह तुम समझ ही गए होओगे. परंतु फिर भी मैं थोड़ा विस्तार से समझाए देता हूँ. शून्य मन का अर्थ है, जिसके भीतर अब कोई चाह नहीं बची. और इतने बड़े पद पर पहुंचने के बाद कोई चाह बचे भी क्यों? और जब चाह नहीं तो लाचारी व दबाव भी नहीं. यही क्यों, शून्य मन का तो अपना कोई विचार या अपनी कोई मान्यता भी नहीं होती. सच तो यह है कि शून्य-मन का अपना कोई भूतकाल ही नहीं होता. कहने का तात्पर्य यह कि शून्य-मन को कोई विचारधारा, कोई संस्था, कोई व्यक्ति या कोई समूह प्रभावित नहीं कर सकता है. वह तो “एक दृढ़ निश्चय” से अपनी राह चलता रहता है. जैसे पापियों का अंत करने हेतु कृष्ण एक दृढ़ निश्चय से जीवनभर आगे बढ़ते रहे. या फिर ज्ञान बांटने के एक दृढ़ उद्देश्य से बुद्ध और क्राइस्ट जीवनभर घूमते रहे. बस वैसे ही एक दृढ़ प्रधानमंत्री को “देशहित के एक संकल्प” से आगे बढ़ते रहना चाहिए. जो निर्णय देशहित में उपयोगी, कर लिया. जब जो विचार देशहित के लिए उपयोगी, उसे सर-आंखों पर बिठा लिया. एक सच्चा सत्ताधीश हमेशा स्थितप्रज्ञ होता है. और स्थितप्रज्ञ क्या होता है, यह तो तुम जानते ही हो. कृष्ण गीता में स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताते हुए कह ही चुके हैं कि उसे मान-अपमान, अपना-पराया, प्रिय-अप्रिय या नफे-नुकसान का कोई भेद नहीं होता है. उसे तो सिर्फ इतना होश होता है कि “जब जो होना चाहिए वह होना चाहिए-और जब जो नहीं होना चाहिए वह नहीं ही होना चाहिए”. स्थितप्रज्ञ को पाप-पुण्य या अच्छे-बुरे का भी कोई भेद नहीं होता है. कहने का तात्पर्य यह है कि एक स्थितप्रज्ञ योगी अपने कर्मों के प्रति इतना दृढ़ होता है कि कोई बाहरी कारण या प्रभाव उसे तय कर्म करने से रोक नहीं सकते हैं. दरअसल स्थितप्रज्ञ पूरी तरह से स्पॉन्टेनियस होता है. और स्पॉन्टेनियस में सिवाय स्पॉन्टेनिटी के और कुछ नहीं समा सकता है. यह बात आप समझ सकते हैं. क्योंकि स्थितप्रज्ञ हो या स्पॉन्टेनिटी हो, या फिर उसे ‘मन का शून्य’ कह लो; यह सब सिर्फ एक स्पीरिच्युअल ऊंचाई छू चुका मनुष्य ही समझ सकता है. और मोदीजी! मैं आपको स्पीरिच्युअल ऊंचाई पर बैठा व्यक्ति ही मानता हूँ. और मेरा क्या है, मैं तो आनेवाले हर नए प्रधानमंत्री से स्थितप्रज्ञ होने की, यानी कि मन से शून्य होने की आस लगाए ही रहता हूँ. और आप भी इसमें अपवाद नहीं हैं. आपके पद संभालते ही मेरी इस आस ने अंगड़ाई ली ही थी. परंतु मेरी वह आस पूरी नहीं हो पाई है. मैंने आपको भी कम या ज्यादा लाचार पाया ही है. और यह जो लाचारी है वह मेरे गले बिल्कुल नहीं उतरती है. लाचारी क्या है? क्या होगा ज्यादा-से-ज्यादा? अरे, देशहित से बढ़कर कुछ होता है? लेकिन मैंने आपके समेत हर प्रधानमंत्री को तीन जगह पर पक्का लाचार पाया है. उसमें पहली है, राजनैतिक लाचारी. अगला चुनाव जीतने की लाचारी. पार्टी नाराज होगी, तो क्या होगा? सहयोग देनेवाली संस्था नाराज होगी, तो क्या होगा? कुछ नहीं होगा, ज्यादा-से-ज्यादा दोबारा प्रधानमंत्री नहीं बन पाएंगे. तो बनना भी किसे है? एक ही बार में पक्का काम करके चले जाएं. लेकिन दुर्भाग्य से यह हिम्मत कोई

नहीं जुटा पाता है. एक प्रधानमंत्री पांच वर्ष के लिए पद पर विराजमान होता है, परंतु पद सम्भालते ही सबसे पहले वह पांच साल बाद के आनेवाले चुनावों के बोझ तले दब जाता है. कोई यह नहीं समझता कि पार्टी हो या संस्था, दोनों गौण हो जाएंगे यदि आप देशहित की दृढ़ राह पकड़कर बढ़ते चले जाओगे. आम जनता “पार्टी या संस्था” से कहीं ज्यादा उस नेता के प्रति समर्पित रहेगी, जो सिर्फ और सिर्फ उनके हित की चिंता कर रहा है. सच कहूं तो इस महान पद को तमाम राजनैतिक दबावों से मुक्त करने हेतु मैं तो प्रधानमंत्री पद के लिए “डायरेक्ट चुनाव” करवाने का पक्षधर हूँ. और मैं चाहता हूँ कि तमाम राजनैतिक दल तथा देश के बुद्धिजीवी इस पर गंभीरता से चर्चा करें. यूं भी इस पद को सुशोभित एक व्यक्ति करता है, कोई पार्टी, कोई विचारधारा या कोई संस्था नहीं. ऐसे में यदि डायरेक्ट चुनाव होते हैं तो व्यक्ति को एक विश्वास जागता है कि ‘वह’ जीतकर आया है. जनता ने उसपर विश्वास किया है. वह जवाबदेह अब सिर्फ जनता को है. ...किसी पार्टी या संस्था को नहीं. मेरा यकीन करो कि इससे प्रधानमंत्री को निर्णय करने की अद्भुत दृढ़ता मिलेगी. ...और यही चाहिए. यही देशहित में है. क्योंकि अभी तो प्रधानमंत्री अपनी ही पार्टी के दबाव में आकर मर जाता है. और काफी हद तक आप पर भी मैंने यह दबाव देखा ही है. आपके सत्ता सम्भालने के बाद आप ही की पार्टी के अनेक नेताओं ने “असहिष्णुता” की हदों को लांघनेवाले अनेक बयान दिए ही हैं. परंतु आप ना तो उनपर आज तक लगाम लगा पाए हैं, और ना ही उनके खिलाफ कोई कार्रवाई कर पाए हैं. और यह ज्यादा गंभीर इसलिए भी हो जाता है कि पहले ही आपकी पार्टी अलग विचारधारा का प्रतीक मानी जाती रही है. आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि बाबरी मस्जिद ध्वस्त किए जाने जैसे असहिष्णु कृत्य का इल्जाम भी आपकी पार्टी पर लगाया ही जाता है. ऐसे में आप यह समझ ही सकते हैं कि ऐसी तमाम विचारधाराओं से प्रेरित बयान देश में असहिष्णुता ही बढ़ाएंगे. जबकि एक प्रधानमंत्री कभी किसी एक विचारधारा का पक्षधर नहीं रह सकता. ...तो भी आपका कार्रवाई न करना क्या दर्शाता है? निश्चित ही सिवाय कि एक राजनैतिक मजबूरी के और कुछ नहीं. और इसीलिए मैं प्रधानमंत्री पद के डायरेक्ट चुनाव की वकालत कर रहा हूँ.

खैर, दूसरी बात कहूं तो मैंने बिना अपवाद के हर प्रधानमंत्री को लोकप्रियता के सामने झुकते देखा है. सच कहूं तो मैंने विश्व भर के नेताओं को इस बीमारी का शिकार पाया है. कृष्ण की गीता के हवाले से मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मनुष्य मान-अपमान को जब तक सम नहीं समझता, तब तक वह दृढ़तापूर्वक लोकहित के कदम नहीं उठा सकता. क्राइस्ट हों या बुद्ध, वे सच्चे संत ही इसलिए हैं कि उन्हें जो सही लगा वह उन्होंने बिना लोकमत की चिंता किए...कहा. बदले में लोगों ने क्राइस्ट को सूली पर लटकाया या बुद्ध का अपमान किया, उससे उन्हें फर्क नहीं पड़ा. यह एक कटु सत्य है कि आमलोग अक्सर लुभावनी गलत बातों के शिकार होते हैं. लेकिन लुभावनी लगने से कोई चीज हितकारी नहीं हो जाती है. सो एक नेता को लोगों की मान्यता के बजाए लोकहित के निर्णय दृढ़तापूर्वक

लेने होते हैं. कहने की जरूरत नहीं कि वही एकमात्र सच्चा नेता है. परंतु मैंने हर नेता को यह चिंता करते देखा है कि यदि लोक-मान्यता के खिलाफ कोई निर्णय लिया तो चुनाव में वोट कम हो जाएंगे. ...तो हो जाने दो. पद से ऐसा भी क्या मोह कि उसकी लालसा में अपने कर्तव्यों से बार-बार विमुख हो जाते हो? और फिर मैं कह दूँ कि श्रेष्ठ निर्णय हमेशा श्रेष्ठ ही होता है. आज नहीं तो कल वह जनता को समझ में आता ही है. मेहरबानी कर आमप्रजा को इतना नासमझ भी मत समझो. और ऐसे हजारों उदाहरण इतिहास में मौजूद भी हैं. क्राइस्ट का ही उदाहरण लो. भले ही उनके जीते-जी उनकी बात लोगों के गले नहीं उतरी, परंतु आज वे सबके दुलारे हैं ही. सो मोदीजी, मैं उम्मीद करता हूँ कि आप लोकप्रियता के मुकाबले श्रेष्ठ निर्णयों पर ज्यादा जोर देंगे. जैसे बीमारियां दूर करने हेतु डॉक्टर मरीज को कड़वी दवाइयां देते ही हैं, ठीक वैसे ही एक प्रधानमंत्री को देश के उद्धार हेतु अनेक कटु निर्णय लेने ही पड़ते हैं. यह स्पष्ट समझ लेना कि जो कटु निर्णय लेने से बचता है वह सही मायने में देश का उद्धार कभी नहीं कर सकता है. आप समझदार हैं, सो आपको इशारा काफी है.

इसके अलावा तीसरी लाचारी ऐसी है जिसे मनुष्य ने स्वयं ओढ़ी हुई होती है. और वह है अपने व्यक्तिगत विचारों की. फिर वे विचार चाहे आर्थिक नीति को लेकर हों या किसी प्रकार की कोई अन्य विचारधारा को लेकर हों. अब यह स्थितप्रज्ञ के लक्षण कतई नहीं है. प्रधानमंत्री के पद को यह कतई शोभा नहीं देता है. और यही बात मैं भगवद्गीता के दृष्टांत से समझाता हूँ. क्योंकि नरेन्द्र मोदीजी आप गीता के बड़े वाचक तथा प्रशंसक हैं. अर्जुन युद्ध से इन्कार क्यों कर रहा है? क्योंकि वह वर्तमान से भाग रहा है. वह भूतकाल के शास्त्रों तथा कौरवों से भूतकाल के रिश्तों के मोह में फंस गया है. इस भागना चाह रहे अर्जुन से कृष्ण क्या कह रहे हैं? कृष्ण इतना ही कह रहे हैं कि “जीवन और उसका सत्य” दोनों वर्तमान है. अतः वर्तमान क्षण हेतु ये तमाम शास्त्र इतिहास हो चुके हैं. वैसे ही कौरव तेरे भाई हैं, या युद्ध के मैदान में कोई गुरु है, यह सब भी इतिहास हो चुका है. तू ध्यान से देख, सामने दुश्मन की सेना है. तेरे भाई उस सेना में तुझसे रिश्ते जताने नहीं बल्कि तुझे मारने हेतु जमा हुए हैं. वैसे ही तेरे गुरु द्रोण भी तुझे शिक्षा देने हेतु नहीं, बल्कि तेरा विनाश करने हेतु दुश्मन की सेना में सम्मिलित हैं. यही बात अर्जुन, पितामह से लेकर तेरे अन्य तमाम रिश्तेदारों पर भी लागू है. अतः एकबात ध्यान रख ले अर्जुन कि भूतकाल से मनुष्य को कभी भी अपने वर्तमान निर्णय को प्रभावित नहीं होने देना चाहिए. लेकिन अर्जुन तू तो इससे भी अनूठा कमाल कर रहा है. तू तो भविष्य की चिंता भी कर रहा है. और उस हेतु भी शास्त्रों की दुहाइयां दे रहा है. नर्क में सड़ने से लेकर आनेवाली संतानों के पतन तक का गम पाल रहा है. लेकिन यह धीरपुरुष के लक्षण नहीं हैं. धीरपुरुष के वर्तमान निर्णयों पर भविष्य की चिंताओं का रत्तीभर प्रभाव नहीं होता है. धीरपुरुष तो इस क्षण जो होना चाहिए, उसे ही जानता है. और वह उसे दृढ़तापूर्वक करता भी है. अतः तुझे भी यह समझना चाहिए कि

वर्तमान में तेरे सामने युद्ध है. तुझे यह युद्ध बिना भूत और भविष्य की चिंता किए दिल खोलकर लड़ना चाहिए. हे अर्जुन, जबतक मनुष्य के निर्णयों को भूतकाल तथा भविष्य प्रभावित करते हैं, तभी तक वह 'कर्ता' रहता है. अतः तू भूतकाल व भविष्य हटाकर इस युद्ध का 'निमित्त' बन जा. क्योंकि निमित्त को कभी भी कोई भी पाप नहीं लगता है.

खैर, अब नरेन्द्र! तुम्हारे भीतर तो फिलोसोफी कूट-कूटकर भरी हुई है. अतः मैं भगवद्गीता का हवाला देकर क्या समझाना चाह रहा हूँ वह समझने में तुम्हें क्षणभर का समय भी नहीं लगना चाहिए. प्रधानमंत्री को अपने तमाम पूर्व-विचारों तथा संबंधों से मुक्त होना ही चाहिए. और मुझे तुमपर नाज है, क्योंकि तुम अपने तमाम पारिवारिक रिश्तों से सर्वथा मुक्त हो. आपके सगे भाई तक सामान्य जीवन ही व्यतीत कर रहे हैं. और यही तुम्हारी सबसे बड़ी खूबी है कि तुमने हमेशा रिश्तों की बजाए योग्यता को तवज्जो दी है. बाकी तो सभी जानते हैं कि पारिवारिक मोह ने भारतीय राजनीति का क्या हाल कर दिया है. आजाद भारत के मेरे देखे राजनेताओं में तुम पहले हो जो तमाम प्रकार के संबंधों से परे हो. और यही धार्मिकता का लक्षण है. वरना तो इस देश में धर्मगुरु तक अपनी संतानों को बढ़ाने में लगे हुए हैं. खैर, ऐसी ही स्थितप्रज्ञता तुम्हें विचारों के मामले में भी लानी है. देश के सामने हर पल हर रोज एक नई चुनौती आती है. आनेवाली हर चुनौती को सिर्फ वर्तमान के तराजू पर ही तौला जा सकता है. और तभी श्रेष्ठ निर्णय लिया जा सकता है. सो संबंध शून्य ही नहीं, विचार शून्य होना भी जरूरी है. देश को किसी एक आर्थिक विचारधारा से भी आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है. और फिर भारत का तो आर्थिक ढांचा ही सबसे निराला है. यहां भूखमरी के हद तक की गरीबी में पच्चीस करोड़ के करीब लोग रह रहे हैं. कुछ भी कर उनका उत्थान करना सरकार का पहला कर्तव्य है. देश के बजट का एक मोटा हिस्सा सरकार को उनके हित की योजनाओं में लगाना ही रहा. दूसरी ओर सामने यह भी हकीकत है कि देश इन्फ्रास्ट्रक्चर के मामले में बुरी तरह से पिछड़ा हुआ है. सो बजट का एक बड़ा हिस्सा इन्फ्रास्ट्रक्चर बढ़ाने को भी समर्पित करना ही रहा. साथ ही यह भी जगजाहिर सत्य है कि देश को प्रगति की राह पर औद्योगिक जगत ही लगा सकता है. सो उन्हें अच्छा औद्योगिक वातावरण प्रदान करना भी आवश्यक है. उस हेतु आर्थिक सुधारों के साथ-साथ उन्हें समय-समय पर आवश्यक छूटें भी मुहैया करानी ही पड़ती है. कहने का तात्पर्य यह कि भारत जैसे विशाल देश को चलाना रस्सी पर चलने जैसा है. किसी भी तरफ का संतुलन बिगड़े तो बड़ी गड़बड़ हो सकती है. और यह संतुलन कतई पूर्व-निर्धारित आर्थिक नीतियों के सहारे नहीं बिठाया जा सकता है. तथा यही बात आर्थिक के अलावा के भी तमाम अन्य पहलुओं पर बराबरी पे लागू होती है. सो कुल-मिलाकर कहने का तात्पर्य यह है कि एक प्रधानमंत्री को तमाम प्रकार की लाचारियों तथा दबावों से मुक्त होना चाहिए, फिर वह स्वजनित हो या बाह्य प्रभावों के कारण हो.

चलो, अब एक सीधी बात कहता हूँ. भारत ही नहीं, विश्व का कोई भी देश चाहता क्या है? सीधे तौरपर आर्थिक प्रगति. बिना अपवाद के आज विश्व का हर देश चाहता है कि उसके नागरिक आर्थिक रूप से समृद्ध हों. हर किसी के पास एक सुरक्षित तथा चिंतामुक्त जीवन हो. ...तथा देश में शानदार आर्थिक इन्फ्रास्ट्रक्चर हो. इसके अलावा की जिन भी चाहों की चर्चा होती है; फिर वह धर्मगुरु कर रहा हो या राजनेता, फिर वह एक बुद्धिजीवी कर रहा हो या कोई सामान्य व्यक्ति; किसी की भी किसी अन्य चाह का कोई ताल्लुक वास्तविकता से नहीं बैठता है. ऐसी तमाम फिजूल की चाहों की चर्चा या तो स्वार्थवश, या फिर अज्ञानतावश करी जा रही है. और मैं यह स्पष्ट कर दूँ मिस्टर मोदी कि इसमें राम मंदिर व बाबरी मस्जिद जैसी चाहें भी शामिल ही हैं. अब एकबार को चुनाव जीतने हेतु कोई जुमला देना तो बर्दाश्त किया जा सकता है, परंतु चुनाव जीतने के बाद क्या? ...फिर अगले चुनावों की तैयारी? तब तो कोई भी कर चुका देश का उद्धार! मैं दिल बड़ा करके यह भी मान लेता हूँ कि एक राजनेता तथा राजनैतिक पार्टी के लिए चुनाव जीतना जरूरी है. बिना चुनाव जीते किसी भी राजनेता को अपनी क्षमता तथा भावना प्रदर्शित करने का मौका नहीं मिलता है. सो एकबार को चुनावी जुमले देने की बात तो गले उतरती भी है, परंतु उसके बाद क्या? मेरा यह दृढ़ मानना है कि एकबार चुनाव जीत लिया, फिर उसके बाद के सारे चुनाव राजनेता को अपने कार्यों के बलपर ही जीतना चाहिए. एकबार चुनाव जीतने के बावजूद फिर से चुनाव जीतने हेतु चुनावी जुमलों का सहारा लेना, सिर्फ इस बात का सबूत है कि आप कार्य नहीं कर पाए हैं. और यह बात सिर्फ देश के प्रधानमंत्री पर ही नहीं, प्रदेश के तमाम मुख्यमंत्रियों पर भी लागू होती ही है. क्योंकि एक मुख्यमंत्री भी अपने प्रदेश का राजा होता ही है.

मैं तमाम बातें स्पष्ट भी कह रहा हूँ, तथा प्रैक्टिकल भी. और यह सभी जानते हैं कि आजादी के सत्तर वर्ष बाद भी चुनावों में धर्म व जातियों का प्रभाव आज भी कायम है. इन सत्तर वर्षों में दुनिया कहां-की-कहां पहुंच गई, परंतु भारत “राजनीति” के प्रति आज भी पूरी तरह से असहिष्णु ही है. यह निश्चित ही आपके तथा मेरे, दोनों के लिए बड़ी शर्मनाक बात है. सच कहूँ तो हर शपथ लेते नए प्रधानमंत्री के साथ मेरी उम्मीदें हमेशा अंगड़ाई लेती हैं कि यह देशहित में बोल्ट निर्णय लेकर सारी व्यवस्था ठीक कर देगा. परंतु आजतक कोई मेरी उम्मीदों पर जरा भी खरा नहीं उतरा है. ...और मोदीजी आपसे तो मैं कुछ ज्यादा ही उम्मीद लगाए बैठा हूँ. और उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि आपको कोई भी आसानी से दबाव में नहीं ला सकता है. यह आपके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी खूबी है कि आप चाहें तो दुनिया के तमाम दबावों को पलभर में शून्य कर सकते हैं. और मैं इसे प्रधानमंत्री पद के लिए सबसे बड़ा गुण मानता हूँ. दूसरा यह कि आप अपने पद तथा परिवार को पूरी तरह से अलग करके देखते हैं. यह भी एक बड़ा गुण है. और तीसरी बात कहूँ तो आपके भीतर का फिलोसोफर मुझे बड़ी उम्मीद बंधाता है. क्योंकि एक फिलोसोफर

ही स्वधर्म को अच्छे से समझ सकता है. एक फिलोसोफर ही यह जान सकता है कि स्वधर्म के मार्ग में सिवाय 'स्वधर्म' के और कुछ नहीं समा सकता है. एक सच्चा फिलोसोफर ही यह महसूस कर पाता है कि जीवन ही धर्म है. मनुष्यता ही धर्म है. वही यह समझ सकता है कि धर्म मात्र "मंदिर-मस्जिद-चर्च" का नाम नहीं है. एक वही यह देख पाता है कि धर्म अपने कर्तव्यों का ठीक तरह से निर्वाह करने का नाम है. अतः एक फिलोसोफर प्रधानमंत्री ही यह समझ सकता है कि उसका धर्म सिर्फ 'देशहित' है, और इसके अलावा के अन्य किसी धार्मिक बंधन की उसे कोई आवश्यकता नहीं है. मुझे उम्मीद है कि आज नहीं तो कल तुम्हारा फिलोसोफिकल हृदय पूरी तरह से प्रकट हो ही जाएगा. उस दिन स्वधर्म यानी देशहित को एकमात्र धर्म मानकर आप पूरी तरह से भिड़ भी जाओगे. धर्म और जाति की चर्चा मैंने विशेष तौरपर इसलिए छोड़ी है कि अभी हाल ही में बिहार विधानसभा के चुनाव के वक्त आपने वहां जाकर अपनी जाति बताते हुए जातिवाद का कार्ड छोड़ा था. और वह इस बात को सिद्ध करने हेतु पर्याप्त है कि अभी आपका स्वधर्म पूरी तरह से जागा नहीं है. आप जैसे समझदार को यह समझाने की जरूरत ही कहां है कि जाति के आधार पर वोट पड़ना देशहित में कतई नहीं है. यह वोट का दुरुपयोग है, और वोट के ऐसे दुरुपयोग से अयोग्य व्यक्तियों के चुनाव जीतने की संभावना बनी रहती है. यही बात धर्म के आधार पर डाले गए वोटों पर भी लागू होती है. अब आप तो समझदार हैं, तथा समझदार को इशारा काफी है.

सो मेरी उन उम्मीदों को मत तोड़ो जो मैंने तुमसे लगाई है. मेरी बात का विश्वास करो कि ईमानदारी से स्वधर्म की राह पर चलनेवाले की हमेशा जीत ही होती है. अब प्रधानमंत्री बन ही चुके हो. सो देशहित में सांप्रदायवाद, जातिवाद तथा परिवारवाद की तमाम पुरानी जड़ों को उखाड़ फेंको. वोट सिर्फ अपनी नीतियों तथा अपने कामों के बलपर मांगो. मैंने अरबों मनुष्यों को आते व जाते देखा है. मैं मनुष्यों के मन तथा उनकी सायकोलोजी को सबसे बेहतर जानता हूँ. अतः कह सकता हूँ कि तुम्हारे लिए भी चुनाव पुरानी गलत परंपराओं के बजाए किए गए कार्यों के बलपर जीतना ज्यादा आसान होगा. और यूं भी मैं अक्सर कहता हूँ कि "जो सब करते हैं वही आप करते हैं, ऐसे में आपका भी वही होगा जो सबका होता आया है". मेरा इशारा समझो, मैंने ऐतिहासिक बहुमत से राजीव गांधी को जीतते भी देखा है, तथा अगले ही चुनावों में उन्हें हारते भी देखा है. और वह भी "शाहबानो केस" में स्वधर्म से भटकने के बाद. अतः जब आपमें दृढ़ता और क्षमता दोनों है, तो स्वधर्म के समर्पित सिपाही होने में बाधा ही कहां है? आपको चुनाव जीतने हेतु अपनी जाति की चर्चा करने की आवश्यकता ही क्या है? बात-बेबात 'राम मंदिर' का आलाप छोड़ने की जरूरत ही क्या है? मैंने पहले ही कहा कि मैं सायकोलोजी का बादशाह हूँ. और मैं स्पष्ट कर दूँ कि इन तमाम प्रकार की चेष्टाओं को मैं आपके द्वारा अपनी ही क्षमताओं पर किए जानेवाले अविश्वास के तौरपर ले रहा हूँ. जबकि इसकी आवश्यकता ही

नहीं है. जब मैं एक महान धरती तुम्हारी क्षमता पर विश्वास रखे हुए हूँ, तो मेरे दृढ़-संकल्पी लाल नरेन्द्र! तुम क्यों अपनी क्षमता पर अविश्वास रखते हो? पार्टी के अन्य नेता तुम जैसे क्षमतावान होते तो वे प्रधानमंत्री न बन जाते? उनकी दिखाई राजनैतिक कमजोरियों की राह पर चलने की तुम जैसे सक्षम व्यक्ति को क्या आवश्यकता है? मैं इशारे कर सकता हूँ... और चूंकि तुम इशारों की भाषा समझ सकते हो, इसीलिए मैं तुमसे इतनी व्यक्तिगत बातें कर रहा हूँ.

सो मैं एकबार फिर निवेदन करता हूँ कि भारत की वास्तविक आवश्यकता को पहचानो. मानसिक व सांस्कृतिक तौरपर यह पहले से ही काफी विकसित देश है. बस इसे आर्थिक समृद्धियों के शिखर पर पहुंचाना बाकी है. और आज की तारीख में यही एकमात्र तुम्हारा स्वधर्म है. इसमें निश्चित ही भ्रष्टाचार एक बहुत बड़ी बाधा है. और देश में कितना भ्रष्टाचार है, यह तुम जानते ही हो. हालांकि भ्रष्टाचार को नेस्तनाबूद करने हेतु कुछ कदम आपकी सरकार ने उठाए अवश्य हैं, परंतु वे नाकाफी हैं. इस गति से तो अगले सौ वर्षों में भी भ्रष्टाचार पर काबू नहीं पाया जा सकता है. अब मोदीजी, आपके आने से एक बात तो तय हो गई कि शीर्ष स्तर पर भ्रष्टाचार समाप्त हो गया. यूं भी शीर्ष नेतृत्व से तो भ्रष्टाचार तुम्हारे शपथ लेते ही मिट जाना तय था. लेकिन असली समस्या तो निचले स्तर के स्थानीय नेताओं की तथा सरकारी कर्मचारियों की है. और ये कर्मचारी लोग कितनी दादागिरी करते हैं, कितना डराते हैं, इसकी आप कल्पना नहीं कर सकते हैं. यदि आप इनकी बात न मानो तो ये आपको हजार मुसीबतों में डाल देते हैं. इस मामले में मामूली पुलिस इन्सपेक्टर से लेकर बड़े-बड़े इन्कमटैक्स ऑफिसर तक कोई कमजोर नहीं है. पुलिस वाले को रिश्वत न दो तो वे झूठा केस तक लगा देने से बाज नहीं आते हैं. और इन्कमटैक्स ऑफिसर गलत 'एडीशन' कर देता है. ...फिर बिना गुनाह के भी लोग लगाते रहें कोर्टों के चक्कर. एक-दो नहीं, तमाम सरकारी विभागों की यही कार्यप्रणाली है. इससे कोई अनजान नहीं, और मोदीजी आप भी नहीं. और शासन सम्भालने के तीन वर्ष बाद भी इन घूसखोर सरकारी अफसरों के खिलाफ आपने बहुत कुछ ज्यादा नहीं किया है. और आमप्रजा आज भी रिश्वत देने पर मजबूर ही है. क्योंकि गलत केस लड़ने में पैसा भी खर्च होता है तथा मानसिक त्रासदी से भी गुजरना पड़ता है. ऐसे गलत केसों में जीत-हार कोई मायने नहीं रखती. रिश्वत न देने की पूरी सजा बेचारा केस जीतने के बावजूद भी भुगत ही चुका होता है. सवाल यह कि इतना सबकुछ होने के बावजूद इन सरकारी कर्मचारियों के खिलाफ सख्त कानून क्यों नहीं बनता है? इसकी सिर्फ दो वजह है. एक तो हर राजनेता की नजर इनके वोटों पर लगी होती है. और दूसरा उनके छोटे नेताओं की इन सरकारी अफसरों से सांठ-गांठ होती है. आखिर भ्रष्टाचार तो दोनों मिलकर ही करते हैं. और कोई प्रधानमंत्री आजतक ना तो सरकारी कर्मचारियों के वोटों का मोह छोड़ पाया है, ना ही पार्टी के निचले स्तर तक के नेताओं को खुश रखने की मजबूरी को. और मोदीजी आज की तारीख तक तो आप भी

इसके शिकार हैं ही. परंतु देशहित में आपको अपनी दृढ़ता का उपयोग करना होगा. आप सक्षम हैं, आपके लिए यह कोई बहुत बड़ी बात नहीं. और वाकई आप अपनी ओर से संजीदा हैं तो मैं सरकारी कर्मचारियों पर लगाम लगाने हेतु एक सीधा सुझाव देता हूँ. इन सरकारी अफसरों की रिश्वतखोरी चलती किस आधार पर है? झूठा केस लगाने की धमकी के आधार पर. या फिर केस को कमजोर करने हेतु जो राजी-खुशी रिश्वत दी जाती है, बस वह उनकी कमाई का दूसरा जरिया है. अब जो रिश्वत राजी-खुशी दी जाती है, उसका हाथोंहाथ तो बहुत कुछ किया नहीं जा सकता है. परंतु धमकाकर जो रिश्वत वसूल की जाती है उसपर लगाम कसकर इन राजी-खुशी दी जानेवाली रिश्वतों पर लगाम अवश्य कसी जा सकती है. अतः सरकार को एक कानून पास कर ही देना चाहिए कि जो भी केस पूरी तरह से आधारहीन पाया जाए, उस अफसर के विरुद्ध व्यक्ति प्रताड़ना का केस कर सकता है. वह व्यक्ति उस झूठा केस लगाने वाले सरकारी कर्मचारी से ना सिर्फ केस में खर्च पैसा वसूलने की अर्जी दे सकता है, बल्कि अपने पर गुजरी मानसिक त्रासदी का हर्जाना भी मांग सकता है. क्योंकि अभी सरकारी अफसर फिर चाहे वह इन्कमटैक्स डिपार्टमेंट से ताल्लुक रखता हो या वह पुलिस महकमे में हो, उनके द्वारा आधारहीन केस बनाए जाने पर भी उनपर कोई कारवाई नहीं होती है. और बेचारा जिसपर केस लगाया गया होता है उसके दस-बीस साल बिगड़ जाते हैं. अतः आधारहीन केस बनाने वाले अफसरों पर उल्टा केस लगाने की छूट होनी ही चाहिए. और यही एकमात्र डर है जो सरकारी अफसर को बांधकर रख सकता है. तथा यही एकमात्र वह हथियार है जिससे आमप्रजा के सर से सरकारी अफसर का डर कम किया जा सकता है. और वैसे भी ऐसे भ्रष्टाचारी अफसरों के देश में “आमप्रजा” को सरकारी अफसरों के बराबरी पर अधिकार दिए ही जाने चाहिए. अतः यह कानून बना ही दिया जाना चाहिए कि गलत केस बनाने का आरोप सिद्ध होने पर ना सिर्फ उस अफसर को बर्खास्त किया जाएगा, बल्कि तीन वर्ष की कड़ी कैद की सजा भी उसे भुगतनी ही पड़ेगी. यदि गलत कार्य करनेवाली जनता को भुगतना है, तो फिर आधारहीन केस करनेवाले अफसर को क्यों नहीं? अब मैंने तो रास्ता सुझा दिया. आगे क्या व कैसे करना यह प्रधानमंत्रीजी आपके हाथ में है. परंतु यह कह दूं कि आमप्रजा इन रिश्वतखोर सरकारी अफसरों के आतंक तले जी रही है. आमप्रजा को इनसे मुक्ति दिलवाना आपका पहला कर्तव्य है. और सच कहूं तो इस हेतु कई अनावश्यक कानूनों को खत्म करने की भी आवश्यकता है. और फिर मोदीजी चुनावों में कितना खर्च होता है आप जानते ही हैं. साथ ही आप यह भी जानते हैं कि उसका एक बड़ा हिस्सा राजनैतिक दलों को बड़े औद्योगिक घरानों से ही मिलता है. और आप यह भी जानते ही हैं कि बदले में सरकारों को उनके कई काम करने ही होते हैं. ...यह भी एक किस्म का सीधा-सीधा भ्रष्टाचार ही है. और आपकी सरकार में भी यह भ्रष्टाचार हो ही रहा है. सो यदि वाकई आप भ्रष्टाचार के खिलाफ जंग लड़ना चाहते हैं तो सबसे पहले राजनैतिक दलों की तमाम आर्थिक गतिविधियों को भी

“राइट टू इन्फॉर्मेशन एक्ट” के तहत ले आइए. इसके बगैर मैं मान ही नहीं सकता कि आप भ्रष्टाचार को जड़-मूल से खत्म करने हेतु पूरी तरह से कटिबद्ध है. और आप भी जानते हैं कि आधे-अधूरे प्रयासों के कोई बहुत दूरगामी व सकारात्मक परिणाम नहीं आते हैं. और कुछ भी कर प्रधानमंत्री पद हेतु डायरेक्ट इलेक्शन करवाने का प्रस्ताव पास करवाइए. एकबार प्रधानमंत्री पद का डायरेक्ट इलेक्शन हो गया तो चुनावी खर्च भी कम हो जाएगा, तथा नेताओं की तादाद पर भी लगाम लगेगी. और जाहिरी तौरपर इसका सीधा असर भ्रष्टाचार पर पड़ेगा.

खैर, इसमें से ऐसी कोई बात नहीं है जो आप नहीं जानते हैं. मैंने आपका जीवन देखा है. चाय बेचने से लेकर प्रधानमंत्री के पद तक पहुंचते देखा है. सबसे बड़ी बात यह है इस पूरी यात्रा में मैंने हमेशा आपको दृढ़तापूर्वक बढ़ते देखा है. और इसी दृढ़ता से आकर्षित होने के कारण मैं तुमसे इतनी बात कर रहा हूँ. क्योंकि क्रांतिकारी परिवर्तन सिर्फ दृढ़ इरादेवाले लोग ही ला सकते हैं. और जो दृढ़ लोग ऐसे सकारात्मक क्रांतिकारी परिवर्तन लाते हैं, वे ही “ऐतिहासिक पुरुष” कहलाते हैं. सो भारत को समृद्धि के शिखर पे बिठाकर ऐतिहासिक-पुरुष बनने का यह मौका मत छोड़ें. और आप जानते हैं कि चन्द क्रांतिकारी निर्णयों से ही यह संभव हो सकता है. देश की सबसे बड़ी समस्या यह है कि यहां ‘सेवा’ के नामपर सबसे ज्यादा ‘मेवा’ खाया जा रहा है. इस कृत्य में धर्मगुरु, राजनेता व शैक्षणिक संस्थाएं प्रमुख रूप से शामिल हैं. अब धर्मगुरु तथा राजनेताओं को कैसे काम पर लगाना, यह मुझे तुम्हें समझाने की आवश्यकता नहीं है. नेताओं की तो नस-नस से आप वाकिफ हैं. रहा सवाल झूठे आसरे-आश्वासन बांट रहे धर्मगुरुओं का, तो उनपर कानूनी लगाम कसी ही जा सकती है. मैं जानता हूँ कि आपका सिर्फ कर्मों पर विश्वास है. किसी धागे-अंगूठी या ज्योतिष के सहारे आप नहीं जीते. तो फिर इन पर प्रतिबंध लगाइए. क्योंकि इनके झूठे आश्वासनों में सबसे ज्यादा गरीब लोग ही फंसते हैं. बेचारे चमत्कार की उम्मीद में इनके पास पहुंच जाते हैं, और अपना बचा-खुचा भी गंवा बैठते हैं. दुर्भाग्य यह है कि हिंदू, क्रिश्चियन या मुस्लिम किसी भी धर्म के पाखंडी इन आसरे-आश्वासनों की दुकानें चलाने में पीछे नहीं हैं. ...अब पानीपूरी से जीवन की समस्याएं निपटने का क्या ताल्लुक है? सो, यह सब तो आप समझते ही हैं. दूसरा बड़ा कार्य यह करिए कि बिना काम के नेताओं की गुंडागर्दी समाप्त कर दीजिए. देखिए यह दोनों कदम उठाने का देश के अर्थतंत्र पर कितना सकारात्मक असर होता है. क्योंकि देश तभी प्रगति करता है जब धन मेहनती व योग्य लोगों के हाथ में होता है. जब धन का रोटेशन होता है. अब एक तो पाखंडी धर्मगुरुओं, नेताओं या भ्रष्टाचारी अफसरों के पास पैसा उनकी मेहनत का या उनकी योग्यता का वैसे ही नहीं होता है, और ऊपर से वह पैसा रोटेशन में भी नहीं आता है. और जाहिरी तौरपर इसका सीधा असर देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है. अर्थात ये लोग ना-सिर्फ दूसरों का हक छीन रहे हैं, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था के साथ खिलवाड़ भी कर रहे हैं.

वैसे आपने हाल ही में एक कमाल अवश्य कर दिखाया. 500 व 1000 के नोट तात्कालिक प्रभाव से खारिज करके आपने 'कालेधन' पर एक शानदार 'सर्जिकल स्ट्राइक' कर दी. आपका यह कदम वाकई सलामी के योग्य है. आपका यह एक कदम देश की तकदीर बदल सकता है. ऐसे ही दृढ़ कदमों की तो मैं चर्चा कर रहा था. और तभी तो कहता हूँ कि आपमें दृढ़ता की कोई कमी नहीं है. बस उसकी धार को रोज-रोज मजबूत करते चले जाना है. यूं भी प्रधानमंत्री देश का पिता होता है और पिता को अक्सर संतानों के हित हेतु कड़े कदम उठाने ही पड़ते हैं. संतानें नादान होती हैं. वे अपना हित-अहित समझने में अक्सर मार खा जाती हैं. ऐसे में उनके हित की रक्षा हेतु कड़े कदम उठाना एक पिता का कर्तव्य हो जाता है. कालेधन पर सर्जिकल स्ट्राइक कर आपने वाकई एक पिता का कर्तव्य निभाया है. क्योंकि भारत इतना गरीब नहीं है. गरीब इसको संपत्ति के उटपटांग बंटवारे ने बनाया है. और कालेधन का निश्चित ही इसमें बहुत बड़ा योगदान है. चलो, उसपर तो सर्जिकल स्ट्राइक आपने कर ही दी. ...लेकिन यहां रुकना मत. इस देश की तकदीर बदलने हेतु अभी कई और सर्जिकल स्ट्राइक करनी पड़े... ऐसा है. खासकर भ्रष्टाचार पर. सरकारी अफसरों पर भी कड़ी कानूनी तलवार लटकाई जानी अति आवश्यक है. अभी तो ये सब बेलगाम घोड़े हुए जा रहे हैं. अच्छेखासे आदमी को भी फंसाने का डर दिखाकर उन्हें लूट लेते हैं. मैं तो कहता हूँ कि दूसरी सर्जिकल स्ट्राइक आप इन पर कर दो. वहीं एक और सर्जिकल स्ट्राइक है जो इस देश की आमप्रजा के हित में करना आवश्यक है. और वह है गलत मान्यताओं और परंपराओं पर सर्जिकल स्ट्राइक. एकबात समझ लेना मोदीजी, व्यक्ति प्रधानमंत्री बनने से ऐतिहासिक नहीं हो जाता. मनुष्य ऐतिहासिक गलत आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक परंपराओं पर सर्जिकल स्ट्राइक करने से होता है. और ऐसी सर्जिकल स्ट्राइक करनेवालों में कृष्ण, बुद्ध, दयानंद सरस्वती और कबीर से लेकर राजा राममोहनराय तक के नाम और काम आपको याद ही होंगे. आप स्वयं एक कर्मठ व्यक्ति हैं. सिवाय कर्म के अन्य किसी चीज पर आपका कोई विश्वास नहीं. और यही जीवन का एकमात्र सत्य भी है. तो ऐसे में पूरे देश को कर्मप्रधान बनाना आपका कर्तव्य है. देश की आमप्रजा को झूठे व कोरे आसरे-आश्वासनों के मायाजाल से छुड़वाकर उन्हें कर्म के मार्ग पर लगाना आपकी नैतिक जिम्मेदारी है. क्योंकि आमप्रजा झूठे आश्वासनों के चक्कर में अपनी मेहनत की कमाई खोती चली जा रही है. और निश्चित ही इसका उनकी कर्मठता पर भी सीधा असर पड़ रहा है. ...वहीं दूसरी ओर इन्हें लूटनेवाले बिना कुछ किए धनपति हुए जा रहे हैं. ...बस इसी को रोकना है. इस हेतु जहां एक ओर झूठे आसरे-आश्वासनों के खिलाफ जनजागृति फैलानी है, वहीं दूसरी ओर ऐसे झूठे आसरे-आश्वासन बांटकर धन लूटनेवालों के खिलाफ सख्त कानून बनाना है.

यह सब बातें मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि कालेधन पर सर्जिकल स्ट्राइक कर आपने मेरी उम्मीदें बढ़ा दी हैं. क्योंकि उससे आपने यह सिद्ध कर ही दिया है कि आप एक

चौड़ी छाती के व्यक्ति हैं. ...लेकिन एक बात और कह दूं कि वहां भी उतने-मात्र से काम नहीं चलनेवाला है. आपने भले ही अपनी ओर से ईमानदारीपूर्वक तथा पूरी नैतिकता के साथ गोपनीयता बरतते हुए पांच सौ व हजार के नोटों को डिमोनेटाइज करने का ऐतिहासिक कदम उठा लिया, परंतु उसका लाभ आमजनता को मिले यह देखना भी आपका कर्तव्य है. और उस हेतु इससे भी कई गुना अधिक दृढ़ता आवश्यक है. और सच कहूं तो उसका कई कारणों से मुझे अभाव नजर आ रहा है. मैं इसके चन्द उदाहरण देता हूँ. जहां एक ओर देश की आमप्रजा पांच सौ-हजार रुपए के लिए तरस रही थी, उसी समय ऐसी खबरें बाहर आई कि आप ही की पार्टी के कर्नाटक के एक नेता ने शादी में पांच सौ करोड़ का खर्च किया. तो आपने उस शादी का हिसाब, शादी से पूर्व ही क्यों नहीं ले लिया? आपको जरूरत पड़ने पर वह शादी रुकवाने तक के कड़े कदम उठाने थे. वह तो आपने नहीं किया, पर हां... शादी समाप्त होने के बाद उनके वहां इन्कमटैक्स के छापे अवश्य पड़े. लेकिन मैं उसे एक खानापूति ही कहूंगा. क्योंकि तबतक चिड़िया खेत चुग चुकी थी. आप यह क्यों नहीं समझ रहे कि देश की जनता ने आप पर ऐतिहासिक भरोसा किया है. आपने उनसे पचास दिन कष्ट के मांगे, तो उन्होंने आपको हंसते हुए वह दे दिए. लेकिन आपको भी यह नहीं भूलना चाहिए कि वे यह कष्ट “कल के अच्छे की उम्मीद में” आज हंसते हुए झेल रहे हैं. वे आप पर यह विश्वास कर रहे हैं कि आप कालेधनवालों से बिना पक्षपात के सख्ती से निपटोगे. लेकिन धनपतियों के यहां करोड़ों के नए नोट मिलना आमप्रजा को भी और मुझे भी डरा देता है. यहां एक बात मैं स्पष्ट कर दूं कि इस कदम के बाद भी दस और कड़े कदम उठाए बगैर यह स्कीम सफल नहीं होगी. यूं भी इस स्कीम में अपेक्षा से कहीं ज्यादा पैसा बैंकों में जमा होने से यह स्कीम काफी हद तक कमजोर पड़ ही चुकी है. अब तो इसका एक ही उपाय है कि जिन्होंने भी गलत तरीके से पैसा जमा कराया है, उनसे ना सिर्फ पेनल्टी समेत टैक्स वसूला जाए, बल्कि उन्हें जेल में भी भेजा जाए. लेकिन यदि अब वे बचके निकल गए तो मेरी बात याद रखना कि देश की जनता आपको कभी माफ नहीं करेगी. क्योंकि उसने आपके एक इशारे पर हंसते हुए कष्ट सहना स्वीकारा है. और आप जानते हैं कि अब आगे का पूरा दारोमदार इन्कमटैक्स डिपार्टमेन्ट पर है. कहीं उन्होंने ले-देकर मामले निपटा दिए तो यह आपकी बड़ी हार होगी. अब इन्कमटैक्स डिपार्टमेन्ट बेदाग तो है नहीं. वहां भी भ्रष्टाचार के आरोप में अफसर पकड़े ही गए हैं. और फिर “भारतीय बाबू” किसी भी क्षेत्र के हों, वे कैसे हैं, यह आपसे छिपा तो है नहीं.

खैर, वहीं नेताओं के बाबत तो आपको बताने की जरूरत ही नहीं है. वे तो किसी भी पार्टी के हों, उनमें से अधिकांशों के बाबत छोटे-से-छोटा बच्चा तक जानता है. इसी तरह नकली “पंडित, मौलवी, पादरियों” के पास धन की क्या रेलमछेल है इससे भी कहां कोई अनजान है? और आपको प्रहार आमजनता पर नहीं, इन लोगों पर करना है. लेकिन दुर्भाग्य से यह सब तो बचते नजर आ रहे हैं. यह मैं ऐसे ही नहीं कह रहा. आप भी जानते हैं कि

कई भ्रष्ट बैंक अधिकारियों के कारण अनेक रसूखदारों को तो करोड़ों के नए नोट पहले ही उपलब्ध हो चुके हैं। जबकि इसी दरम्यान देश की आमजनता पांच-पांच सौ रुपए के लिए तरसती रह गई थी। और यही गलत है। तभी तो कह रहा हूँ कि यह कदम ऐतिहासिक अवश्य है, परंतु भ्रष्टाचारियों के होते-सोते इसका लाभ आमजनता को मिले, यह आसान नहीं दिख रहा है। और ऐसा नहीं हुआ तो उठाया गया यह अच्छा कदम भी उल्टा अतिघातक सिद्ध हो सकता है। क्योंकि इस कदम से देश के छोटे उद्योगों को जो मार पड़नी थी, पड़ ही चुकी है। वहीं किसानों को तथा मजदूरों को भी जिन मुश्किलात का सामना करना था, वे कर ही चुके हैं। अब ऐसे में यदि कालेधनवाले भी बच के निकल गए तो फिर यह काफी खतरनाक सिद्ध होगा। यह कहने की भी जरूरत नहीं है कि आप ही की पार्टी के कई नेताओं तथा उनके चाहने वालों के पास भी कालाधन है ही। और यह आपकी जिम्मेदारी है कि इनके खिलाफ आनेवाली हर शिकायत पर पहले एक्शन हो। यह आपको समझाने की जरूरत नहीं कि देश की सफाई करना अच्छी बात है, परंतु शुरुआत अपने घर से ही होनी चाहिए। यदि इसमें राजनैतिक मजबूरी आड़े आई तो सब करा-कराया शून्य ही समझना। क्योंकि अपनों को छोड़ना व दूसरों को पकड़ना तो पिछले सत्तर सालों से चलता आ रहा है। मैं आपसे यह उम्मीद करता हूँ कि एकबार को दूसरे छूट जाएं चलेगा, पर अपने नहीं छूटने चाहिए। और ईमानदारी से यह कर दिखाया तभी मैं मानूंगा कि आप वाकई छप्पन इंच की छाती रखते हैं। वहीं यह कहने की भी जरूरत नहीं कि इन कालेधनवालों पर नकेल आपको सरकारी अफसरों के जरिए ही कसना है। और ऐसे में यह न हो कि फिर भ्रष्ट अफसरों की नए सिरे से चांदी हो जाए। सो, यह समझ ही लो कि आपने सही दिशा में पहला कदम तो उठा लिया है, परंतु किसी भी प्रकार के पक्षपात या प्राशासनिक चूक के कारण यह कदम उल्टा पड़ा तो ध्यान रख लेना कि इससे देश का गरीब बेमौत मारा जाएगा। ...मुझे यकीन है कि आप ऐसा होने नहीं देंगे। और इस हेतु क्या कदम उठाने हैं, यह बताने की आपको आवश्यकता नहीं है।

खैर, इसी शृंखला में आपको एक बात और तय करनी ही होगी कि अब बैंक के लोन भी हरहाल में मजबूताई से वसूल किए जाएं। कहीं ऐसा न हो कि जनता का बैंकों में भरा पैसा उद्योगपतियों द्वारा लिए गए लोनों में डूब जाए। सो उम्मीद है कि आप ऐसा कुछ नहीं होने देंगे। तथा जब एक ऐतिहासिक कदम उठाया है, तो पूर्ण सफलता भी बिना पक्षपात व दबाव के हासिल करेंगे ही। लेकिन यहां भी मुझे एक बात का आश्चर्य है। आप जानते हैं कि राजनैतिक चन्दे का बड़ा हिस्सा काला धन ही होता है। तो फिर आपने जनता को कष्ट में डालने से पूर्व उनपर नकेल क्यों नहीं कसी? उन्हें मिल रही सारी छूटें क्यों यथावत रखीं? यदि आप वाकई कालेधन पर नकेल कसना चाहते थे, तो पहला नंबर ही आपको राजनैतिक पार्टियों का लगाना था। उन्हें ना सिर्फ RTI के दायरे में लाना था, बल्कि उनके कैश से लिए जानेवाले चन्दों पर पूर्णतः प्रतिबंध भी लगाना था। देश को कैशलेश

करने से पूर्व राजनैतिक चन्दों को कैशलेस करना जरूरी था. अरे, कदम बढ़ाना ही है तो एक-एक करके क्या बढ़ाना? पहले कदम में ही यात्रा समाप्त कर देनी चाहिए. ...तभी तो कहता हूँ कि इस कदम से आपकी छाती का चौड़ा होना तो सिद्ध होता है, परंतु वह छप्पन इंच की है, यह सिद्ध नहीं होता है. लेकिन आपके चार कड़े कदम और उठाने से वह जरूर सिद्ध हो सकता है. और मुझे उम्मीद है कि जल्द ही आप 'कालेधन व भ्रष्टाचार' के खिलाफ सारे आवश्यक कड़े कदम उठाकर अपनी छप्पन इंच की छाती के दर्शन ना सिर्फ देशवासियों को, बल्कि पूरे विश्व को करा देंगे. मेरा क्या है, मैं भारत तो ऐसी ही सकारात्मक उम्मीदों में जीता आ रहा हूँ. वहीं सच कहूँ तो मुझे विरोधी पार्टियों द्वारा इस ऐतिहासिक कदम का विरोध करना बिल्कुल भी समझ में नहीं आया. उन्हें उल्टा इस महान कदम को सफल बनाने हेतु आगे आना था. यदि ऐसा होता तो अबतक देश इस कदम का सकारात्मक असर देख चुका होता. परंतु सब-के-सब अपने कालेधन तथा राजनैतिक चाह के मोह में उलझकर रह गए. अपने जाती स्वार्थों को उन्होंने देशहित से ऊपर रखा. यही तो इस देश का दुर्भाग्य है. यहां के नेता देश के बजाए "पद और पार्टी" के प्रति ज्यादा वफादार हैं. और उनकी पद-लालसा ने समझ ही लिया कि यदि उन्होंने इस महान कदम का साथ दिया तो फिर मोदीजी का कद काफी बड़ा हो जाएगा. बस अपना अस्तित्व टिकाए रखने हेतु उन्होंने इस कदम का विरोध किया. वहीं ऐसे दलों की भी भरमार है ही जो अपने कालेधन की चिंता में विरोध पर उतर आए. खैर, अब यह समझ ही लो कि इस सर्जिकल स्ट्राइक को अंजाम तक पहुंचाना आपकी अकेले की दृढ़ता पर निर्भर है. आप इस दिशा में बिना भेद व पक्षपात के "अपनों तथा मित्रों पर भी" कड़े कदम उठा पाए, तो यह कदम ऐतिहासिक सिद्ध हो सकता है. और इस हेतु मेरा पूरा समर्थन व अपनी तमाम दुआएं आपके साथ है. वहीं एक बात और कह दूं. इसमें कोई दो राय नहीं कि आपने नेक नीयत से नोटबंदी करके निश्चित ही देश के ईमानदार लोगों में उम्मीदें जगाई हैं. परंतु फिर भी मैं कहूंगा कि लोगों का आपकी नेक-नीयती पर पूरा भरोसा बैठना अति-आवश्यक है. ...और यह इतना आसान नहीं. क्योंकि भ्रष्टाचार के खिलाफ जंग छेड़ने का ऐलान करने के बावजूद हरकोई आप पर पूर्ण विश्वास नहीं कर पा रहा है. आपके मुख्यमंत्रित्व-काल में, गुजरात में वर्षों तक लोकायुक्त नियुक्त न करना...अब भी सबको याद है. और फिर आपको प्रधानमंत्री का पद सम्भाले तीन वर्ष हो गए, अबतक लोकपाल भी कहां नियुक्त हुआ है? ...तभी तो कहता हूँ कि अपनी पाक-नीयत को सिद्ध करने हेतु अभी तो कई कदम और उठाने हैं. और उम्मीद यही है कि आप वे तमाम कदम उठाकर क्रांति अवश्य ला देंगे.

मोदीजी, मैं बार-बार यदि कह रहा हूँ कि सबकुछ होने के बावजूद विश्वास करना मुश्किल हो जाता है...तो ऐसे ही नहीं कह रहा हूँ. अभी 2017 के यूपी चुनाव हेतु आपकी पार्टी ने जो उम्मीदवारों की सूची जारी की थी, उसमें एक भी मुसलमान को टिकट नहीं दिया गया था. अब एक तरफ जहां आप या आपकी पार्टी मुसलमानों को सत्ता में भागीदारी

देने तक को तैयार नहीं है, वहीं दूसरी तरफ आप दिन-रात “सबका साथ-सबका विकास” की बातें करते रहते हैं. ...यही दिक्कत है. ...बस इन्हीं सब ‘कथनी और करनी’ के फर्क के कारण ‘मैं’ चाहकर भी आपपर पूर्ण विश्वास नहीं कर पा रहा हूँ. आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि भारत विविधताओं से भरा देश है और यह विविधताएं ही भारत का गौरव है. ऐसे में ऐसी बातें तथा ऐसा व्यवहार होना ही नहीं चाहिए. आपके नेता बार-बार मुस्लिम विरोधी बयान देते रहते हैं, फिर भी उनमें से किसी पर आजतक कोई कार्रवाई नहीं हुई है. ...ऐसे में शंका उठना स्वाभाविक है कि कहीं इन बयानों के प्रति आपकी मौन स्वीकृति तो नहीं? और ऐसा नहीं, तो क्या मैं यह मानूँ कि छप्पन इंच की छाती का दावा करनेवाला व्यक्ति अपनी पार्टी को ही कन्ट्रोल नहीं कर पा रहा है? सो मैं एकबार फिर निवेदन करूंगा कि आप विकास की बातें करें तथा विकास के पथ पर चलकर ही आगे बढ़ें. आगे आप समझदार हैं. भला इशारों की भाषा आपसे बेहतर कौन समझ सकता है?

खैर, मुझे आपसे और भी विषयों पर खुलकर बात करनी है. पहले इस संदर्भ में शिक्षा पर चर्चा कर ली जाए. आप जानते ही हैं कि शिक्षा हर बच्चे का अधिकार है. वहीं हर माता-पिता भी अपने बच्चे को श्रेष्ठ शिक्षा देना चाहते ही हैं. बस इसी का फायदा शैक्षणिक संस्थाएं फीस बढ़ा-बढ़ाकर उठा रही है. इसका सबसे बड़ा नुकसान यह हो रहा है कि इससे फीस न भर पाने वाले बच्चों तथा उनके माता-पिता को मानसिक-हीनता पकड़ रही है. अतः कुछ भी कर प्रायवेट स्कूल-कॉलेज की फीस पर नियंत्रण किया जाना चाहिए. समूचे देश के बुद्धिजीवियों को इसके उपायों पर विचार करना चाहिए. क्योंकि इसका सीधा मानसिक असर देश के उन निन्यानवे प्रतिशत युवाओं पर पड़ रहा है, जो बड़ी शैक्षणिक संस्थाओं की फीस नहीं भर पा रहे हैं. सो, सौ बातों की एकबात यह कि पूरे देश को यह अच्छे से समझना चाहिए कि धर्म, शिक्षा, देशसेवा या समाजसेवा वगैरह वाकई ‘सेवा’ के विषय हैं. लेकिन देश का दुर्भाग्य यह है कि आज सर्वाधिक धन इन्हीं चार क्षेत्रों के लोग कमा रहे हैं. यहां किसी को नेता इसलिए नहीं बनना है कि उसमें देशसेवा की भावना जागी है. सबको धन कमाना है. और यही घातक है. क्योंकि जब सेवा के क्षेत्र ही धन कमाने का सबसे बड़ा जरिया बन जाए तो देश में “सेवाभाव” बचेगा ही कैसे? ...मोदीजी आप सब समझते हैं, तथा आप संकल्पवान भी हैं. एकबार स्वयं दृढ़ हो जाओ, मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपमें वह क्षमता है कि आप रातोंरात सबकुछ बदल सकते हो. यहां यह भी स्पष्ट कह दूं कि यह सबकुछ बदलने की क्षमता ही 56 इंच का सीना है. 56 इंच की छाती है या नहीं, यह बातों से नहीं, एक्शन से सिद्ध होता है. यह मत समझना कि मैं ताव पर चढ़ा रहा हूँ. मैं तो सिर्फ 56 इंच के सीने की जमीनी हकीकत बता रहा हूँ.

खैर, मुझे एक चीज का और अफसोस है. मैं पहले ही कह चुका हूँ मोदीजी कि मैं अपनी धरती पर पैदा होने वाले हर मनुष्य को पूरी तरह से जानता हूँ. मैं जानता हूँ कि नेहरूजी के बाद आप इस देश के दूसरे प्रधानमंत्री हैं जिनके हृदय में कलाकारों के प्रति

सम्मान है. फिर वे कलाकार आर्ट की दुनिया से हों या विज्ञान की, या फिर वे व्यवसाय के क्षेत्र से हों या फिलोसोफी के. यह सच भी है कि इन चारों का मनुष्य के उद्धार में सर्वाधिक सहयोग होता है. मैं आपके कला-प्रेम का सम्मान करता हूँ. आपने हमेशा कलाकारों को ना सिर्फ इज्जत बख्शी है बल्कि हरहमेशा उनकी हौसला अफजाई भी की है. आपने अपने व्यस्ततम कार्यक्रमों के बावजूद हमेशा कलाकारों के लिए समय निकाला है. यही नहीं, आपने सफलतापूर्वक अपने हर कार्यक्रम से कलाकारों को जोड़ा भी है. और-तो-और, धीरुभाई अंबानी व श्री श्री रविशंकरजी को पद्म पुरस्कारों से सम्मानित कर आपने एक नई मिसाल कायम की है. आप चूंकि कलाकारों का इतना सम्मान करते हैं इसलिए आप जानते भी हैं कि वे कितने कोमल हृदय व सेन्टीमेन्टल होते हैं. लेकिन यह बात आपकी पार्टी के अन्य नेता नहीं समझते हैं. आमिर खान, शाहरुख खान हो या अन्य कोई भी, उनके बयानों पर जिस प्रकार से आपकी पार्टी के नेताओं ने पलटवार किया, यह मुझे नहीं जंचा. मैं पोलिटिकल मजबूरी समझता हूँ. यदि उनपर पलटकर तेज हमले न किए जाएं तो दूसरे दस के खड़े होने की संभावना उत्पन्न हो जाती है. और यह शायद राजनैतिक रूप से पार्टी के लिए हानिकारक हो सकता है. सो मैं मानता हूँ कि उनपर हमले कर आपकी पार्टी ने भविष्य में उठनेवाली अन्य आवाजों को सफलतापूर्वक दबा दिया. लेकिन कई बातें राजनैतिक नफे-नुकसान से ऊपर होती है. कलाकार परमात्मा के सर्वाधिक निकट होता है. उसे प्रेमपूर्वक ही टेकल किया जाना चाहिए. यही गलती आपके पार्टी के नेताओं ने असहिष्णुता के नामपर अवार्ड लौटा रहे कलाकारों तथा वैज्ञानिकों के साथ भी की. उन्हें किसी एक विचारधारा का शिकार बताया. हो सकता है कि दो-चार के मामलों में यह सही भी हो. परंतु कलाकार, संगीतकार, साहित्यकार या वैज्ञानिक होना अपनेआप में एक उपलब्धि है. यह उपलब्धि कोई मनुष्य बिना परमात्मीय चेतना के जागृत हुए नहीं पा सकता है. और कुछ नहीं तो उस परमात्मीय चेतना का सम्मान तो होना ही चाहिए. आप सब नेताओं को एकबात ध्यान रखनी चाहिए कि प्रतिद्वंद्वी राजनैतिक दल आपस में जैसी भाषा का उपयोग करते हैं, ऐसी भाषा में आप कलाकारों या वैज्ञानिकों से बात नहीं ही कर सकते हैं. और यह बात मोदीजी आप समझते हैं कि इन कलाकारों तथा वैज्ञानिकों का स्तर आम नेताओं से कई गुना ऊपर होता है. इसलिए मैं आपके द्वारा अपनी पार्टी के ही नहीं, इस मामले में मैं आपसे तमाम पार्टी के नेताओं पर लगाम कसे जाने की उम्मीद रखता हूँ. ध्यान रख लेना कि जिस देश व समाज में कलाकारों को उचित सम्मान नहीं दिया जाता, उस देश या समाज का कोई भविष्य नहीं होता है. और फिर यदि किसी ने अवार्ड लौटाए हैं तो क्या उस हेतु आपकी स्वयं की पार्टी के नेताओं के चन्द बयान व कुछ व्यवहार जवाबदार नहीं हैं? सो आप राजनैतिक मजबूरी न पालें. आपकी आत्मा बड़ा ऊंचा सफर तय कर चुकी है, उसी की सुनें; मैं वादा करता हूँ कि देश तथा देश की जनता, दोनों की तकदीर बदल जाएगी. वादा तो मैं यह भी करता हूँ कि अगर हर निर्णय अपनी आत्मा से दृढ़तापूर्वक करेंगे,

तो आपको अन्य कोई फिक्र करने की कभी कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी. देश की जनता हरहमेशा आपका साथ देगी. अतः मेहरबानीकर मेरी जागी उम्मीदों पर पानी मत फेरना. पहली बार तो कोई फिलोसोफिकल हृदय का दृढ़ कलाप्रेमी प्रधानमंत्री बना है, यदि लाचारी के बादल उसे भी घेर लेंगे तो फिर मुझे व मेरे धरतीवासियों को ना जाने कितने और वर्ष “अच्छे दिन आने के इंतजार में” बिताने पड़ेंगे. लेकिन मुझे यकीन है कि ऐसा कुछ नहीं होगा. आप हर निर्णय आत्मा से लेंगे, लाचारी की तमाम दीवारों को तोड़ देंगे, और “देश के अच्छे दिन” अपने ही कार्यकाल में लाकर दिखा देंगे. मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि आप सब जानते व समझते हैं. आप जानते हैं कि बड़े पदों पर बैठे श्रेष्ठ ब्यूरोक्रेट्स इस देश की एक बड़ी असेट है. उनके सोचने व समझने के तरीके नेताओं से सर्वथा भिन्न होते हैं. आप यह भी जानते हैं कि अच्छे ब्यूरोक्रेट्स को स्वतंत्रता तथा सम्मान देना देशहित में कितना जरूरी है. आपकी ओर से मुझे कोई शिकायत नहीं. आपने हमेशा उनका सम्मान ही किया है. फिर भी आपकी पार्टी के नेताओं के चन्द बयान व व्यवहार इस मामले में चिंता में डालने वाले हैं. सर्वोच्च लीडरशिप तथा बड़े ब्यूरोक्रेट्स के बीच श्रेष्ठ तालमेल होना कितना जरूरी है, यह आप समझते हैं. सो मुझे उम्मीद है कि आगे से आप अपने नेताओं को उनके खिलाफ बयानबाजी करने से रोकेंगे. क्योंकि आप समझते ही हैं कि किसी भी नेता द्वारा एक सच्चे व प्रतिभाशाली ब्यूरोक्रेट्स का पब्लिकली अपमान करने से खराब और कुछ नहीं हो सकता है. आखिर ब्यूरोक्रेट्स नेताओं से ज्यादा प्रतिभाशाली होते ही हैं. फिर नेता तो आते और जाते रहते हैं, सो एकबार को उनकी सोच ‘शॉर्ट-टर्म’ हो सकती है. परंतु ब्यूरोक्रेट परमानेंट होता है, अतः प्रायः वह तात्कालिक लाभ या लोकप्रिय निर्णय लेने की नहीं सोच सकता है. और यह बात मैं ऐसे ही नहीं कह रहा हूँ. सभी जानते हैं कि देश में दो ही प्रमुख राजनैतिक पार्टियां हैं, बीजेपी और कांग्रेस. अब कांग्रेस जीएसटी बिल लाना चाहती थी, पर बीजेपी ने इसे पास नहीं होने दिया. और जब बीजेपी सत्ता में आयी तो वह जीएसटी बिल पास कराने हेतु मचल रही थी, पर दो वर्षों तक कांग्रेस ने उसमें रोड़े अटकाए. क्यों...? जब दोनों पार्टियां यह मानती है कि यह बिल देश-हित में है तो फिर क्यों विपक्ष में बैठते ही दोनों इसके विरोध पर उतर आती हैं? इससे स्पष्ट है कि दोनों पार्टियों के लिए देशहित से बढ़कर अपना-अपना राजनैतिक स्वार्थ है. मैं दोनों पार्टियों से सिर्फ इतना ही निवेदन कर रहा हूँ कि दोनों अपने गिरेबां में झांके व सुधरे. और कम-से-कम दोनों में से कोई यह दावा तो ना ही करे कि उनके लिए देशहित सर्वोपरि है. खैर, इतना अच्छा है कि अब जाकर दोनों ने मिलकर उसे पास करा लिया. ...फिर भी देरी का हिसाब तो दोनों को देना ही रहा.

वैसे ही एक बात मैं और कह दूँ. सब यह मानकर ही चलते हैं कि भारतीय राजनीति से भ्रष्टाचार की तरह गुंडागर्दी भी खत्म करना असंभव है. और यह हकीकत है कि चुनाव जीतने हेतु सभी दांवपेच करते हैं. बाहुबली नेता शायद इसमें बड़ी सहायता करते

हैं. पर यह सब भी आखिर कब तक? अपराधी आखिरकार अपराधी ही होता है. सो आपकी दृढ़ता तथा लोकप्रियता, दोनों कुछ ऐसी है कि आप राजनीति को भ्रष्टाचार-मुक्त ही नहीं, अपराध-मुक्त भी कर सकते हैं. बस दृढ़तापूर्वक तय कर अपनी पार्टी से अपराधियों को टिकट देना बंद करवा दो. कितने प्रतिशत वोटों का फर्क पड़ेगा? ...कुछ नहीं पड़ेगा. आप वैसे ही लोकप्रिय हैं, सामने वैसे ही कोई नहीं है, उसपर यह निर्णय ले लिया तब तो उल्टा आपके वोट बढ़ेंगे ही. मैं वादा करता हूँ कि अपराधियों को हटाने से यदि तीन-चार प्रतिशत वोट का नुकसान होगा, तो इस निर्णय से खुश हुई आमजनता के पांच प्रतिशत वोट ज्यादा मिलेंगे. बात सिर्फ देशहित में दृढ़ निर्णय करने की है. और फिर प्रधानमंत्री बनने के बाद जीवन के सारे मकसद यूँ ही समाप्त हो जाते हैं. फिर तो देशहित की रक्षा करने की तृप्ति महसूस करना ही बचता है. सो मुझे तो पक्का यकीन है कि आप सबकुछ बदल सकते हैं. बात सिर्फ दृढ़ता की है, और यह आपमें कूट-कूटकर भरी हुई है. मत देखो इधर-उधर, मत सुनो किसी की, मत सोचो कल की, मत बनो लाचार और मत आओ दबावों में; जो शक्ति अपने बलबूते पर पाई है, उसका उपयोग करो. एकबार दृढ़तापूर्वक तय कर लोगे तो काम भी ऐतिहासिक हो जाएगा और देश का एक नया इतिहास भी लिखा जाएगा.

अंत में देश की आम जनता से भी मैं कुछ कहना चाहता हूँ. वह भी देशहित के प्रति जरा भी सहिष्णु नहीं है. यहां तो मैं जिसे देखता हूँ वह अपनी ही फिक्र में खोया रहता है. उदाहरण के तौरपर अन्ना आंदोलन की ही बात कर लो. उस संत ने भ्रष्टाचार के खिलाफ कितनी बड़ी आवाज बुलंद की थी. दो-रोज बहकावे में सबने उनका साथ दिया और फिर सब भूल गए. यहां तक कि उनके साथियों ने भी उनका साथ छोड़ दिया. उन्होंने राजनैतिक दल भी बना लिया. चलो, उसमें भी बुराई नहीं. परंतु अंत में हुआ क्या? वे सिस्टम बदलने हेतु आए थे, आज वे भी इसी सिस्टम का हिस्सा हो गए. बस यही तो दिक्कत है. आत्मा जागे तो फिर जाग ही जानी चाहिए. फिर किसी बात हेतु समझौता क्यों करना? यदि एकबार देश से भ्रष्टाचार मिट गया, एकबार राजनीति में से अपराधीकरण लुप्त हो गया, एकबार धर्म के नाम पर चल रही झूठे आसरे-आश्वासनों की दुकानों पर नियंत्रण कस लिया गया, तथा एकबार शिक्षा के व्यवसायीकरण वगैरह पर लगाम कस दी गई; फिर इस देश को आसमान की ऊंचाइयां छूने से कौन रोक सकता है? एकबार देश के आम नागरिक को “स्वधर्म के मार्ग पर चलने का खयाल आ गया” फिर देश को स्वर्ग बनते क्या देर लगेगी? सो, सब जागो. जिस धरती पर जनम लिया है, जो धरती अन्न व खनिज दे रही है, उसके प्रति अपने कर्तव्यों को पहचानो.

वहीं मैं कुछ ताजे उदाहरणों से चन्द बातें और कहना चाहता हूँ, खासकर सफल व्यक्तियों व राजनेताओं से. सौ बातों की एक बात समझ ही लेना चाहिए कि किसी भी प्रकार की असहिष्णुता गलत ही है. और यदि असहिष्णुता सरकार में व्याप्त हो, तो फिर उससे गलत और कुछ नहीं हो सकता है. ...अभी हाल ही का उदाहरण लें. दिल्ली

यूनिवर्सिटी की एक 20 वर्षीय लड़की गुरमेहर कौर ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में आवाज उठाते हुए कहा कि वे अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद यानी एबीवीपी के दबाव में आकर अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं त्याग सकती. इस पर एबीवीपी समर्थक छात्र इस कदर बिफर गए कि उनकी ओर से उसे रेप करने की अनेक धमकियां मिलने लगी. अब ऐसी धमकियां देनेवाले वाकई एबीवीपी समर्थक थे या नहीं, यह जांच का विषय हो सकता है; परंतु बात तो गंभीर है ही. उधर चूंकि एबीवीपी बीजेपी की छात्र ईकाई है, तो बीजेपी ने इसे अपने खिलाफ उठी एक आवाज के तौर पर लिया. ...और यही गलत है. गुरमेहर एबीवीपी के खिलाफ नहीं, उनकी जबरदस्ती के खिलाफ बोली थी. यही हरकत कोई दूसरा छात्र संगठन करता तो वह उसके खिलाफ भी बोलती. परंतु सत्य समझने की सहिष्णुता कौन दिखाए? बस उस बीस वर्षीय लड़की को दबाने हेतु बड़े-बड़े केन्द्रीय मंत्री अखाड़े में कूद पड़े. एक मंत्री ने कहा कि कोई गुरमेहर को बहका रहा है. अब बीस वर्षीय लड़की को कौन बहका सकता है? यह तो सीधे तौरपर उसकी वैचारिक क्षमता का ही अपमान हो गया. अब उन मंत्री को कौन समझाए कि हरकोई यहां विचारधारा से प्रेरित नहीं होता है. अनेकों की अपनी जाती वैचारिक क्षमता भी होती ही है. हालांकि बात यहीं पर नहीं रुकी. तत्पश्चात तो अनेक केन्द्रीय मंत्रियों ने कूद-कूदकर उस लड़की के खिलाफ बयान दिए. आश्चर्य यह कि उनमें से एक ने भी नहीं पूछा कि तुम्हें बलात्कार की धमकियां कौन दे रहा है? किसी ने नहीं पूछा कि इस संदर्भ में शासन से तुम्हें क्या सहायता चाहिए? क्या स्वतंत्र भारत के मंत्री ऐसे होते हैं? और-तो-और, उसके एक वर्ष पुराने विडियो को लेकर भी उसपर हमला किया गया. ...भला क्यों? क्योंकि उस विडियो में उसने कहा कि मेरे पिता जिन्होंने एक सिपाही के तौरपर देश के लिए जान गंवाई थी, उन्हें पाकिस्तान ने नहीं, युद्ध ने मारा था. इस छोटी-सी उम्र में एक नई सोच उसने दुनिया को दी. उसके कहने का तात्पर्य इतना ही था कि दुनिया में शांति और समझ हो तो आपसी युद्ध न हो, और युद्ध न हो तो किसी को अपने पिता की जान न गंवानी पड़े. सीधा-सादा यही मतलब था उसके कहने का. अब इसमें क्या गलत कह दिया उसने? ठीक है, एक नई व अच्छी सोच के बावजूद वह अपने विचारों को ठीक से व्यक्त नहीं कर पायी. तो उसकी उम्र ही क्या थी उस समय? ...महज बीस वर्ष! ...अब देश पर मुसीबत हो तो देश के लिए शहीद होना गर्व की बात है, परंतु युद्धरहित विश्व की कल्पना करना और भी बड़े गौरव की बात है. और फिर किसी बीस वर्षीया छात्रा के अपने विचार होना ही अपनेआप में गौरव की बात है. उसका तो हरहाल में सम्मान होना चाहिए, फिर भले ही उसके विचार हमसे मेल खाते हों या नहीं. लेकिन यह तो हो न सका, और उल्टा सत्ता और ताकत के बलपर उसे दबाने की कोशिश पर उतर आए. ...यह कमाल बर्दाश्तगी के बाहर है. और यह कमाल एक-दो नहीं, सभी राजनैतिक संगठन करते हैं. इस संदर्भ में हाल ही का एक और उदाहरण दूं. एक्टर ऋषि कपूर ने एकबार ट्विट किया कि देश के अधिकांश ब्रिज, एयरपोर्ट व अन्य चीजें क्यों नेहरू-गांधी परिवार के नाम पर हैं?

अब सवाल उन्होंने सही ही उठाया था. निश्चित ही योगदान के मुकाबले उनका नाम कहीं ज्यादा जगहों पर अंकित है. लेकिन एक सीधी बात भी पचाना राजनैतिक संगठन के बस में नहीं होता है. बस काँग्रेसियों ने ऋषि कपूर के घर पर धावा बोल दिया. ...और यही गलत है. चलो, किसी के विचार आपसे मेल नहीं खाते तो उसका तार्किक जवाब दो, परंतु सत्ता व बल का प्रयोग? नहीं, यह बर्दाश्त नहीं किया जा सकता है. अभी हाल ही के उदाहरणों से कहूं तो गौरक्षा के नामपर जो कुछ हो रहा है, भला उससे बड़ी असहिष्णुता क्या हो सकती है? यहां सवाल यह भी कि वे लोग गौरक्षा के नामपर इतनी हिंसा लगातार कर कैसे पा रहे हैं? सच तो यह है कि क्या सही है और क्या गलत है यह कहने का अधिकार तो सबको है, परंतु दूसरा उसे माने ही, यह जबरदस्ती करने की छूट किसी को नहीं दी जा सकती है.

सबको यह समझ ही लेना चाहिए कि इस देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सबको है ही. हालांकि इसमें भी एक पेंच है. क्योंकि उसके भी अपने आत्मीय पैमाने होते ही हैं. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नामपर देशविरोधी नारे बर्दाश्त नहीं किए जा सकते हैं. दरअसल सच कहूं तो भगवद्गीता में मन के आधार पर स्थापित किए गए नियम ही हर बात का पैमाना है. परंतु भगवद्गीता भी समझे कौन? चलो, मैं ही समझा देता हूँ. आगे, मानना न मानना आपकी मरजी. सो भगवद्गीता के अनुसार ही कहूं तो अभिव्यक्ति की तो मनुष्य को पूर्ण स्वतंत्रता है, परंतु मन के हर वार की तरह इसका वार भी दो-तरफा है. एक तरफ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बावजूद वे अभिव्यक्तियां बर्दाश्त नहीं करी जा सकती हैं, जो अभिव्यक्त नहीं होना चाहिए. ...जैसे देश विरोधी नारे. ऐसी करतूत राष्ट्रद्रोह है ही और उसकी उस अनुसार सजा दी ही जानी चाहिए. वहीं इस बात के कई अन्य पहलू भी हैं ही. और मैं अभिव्यक्ति के बाबत भी बरती गई हर प्रकार की असहिष्णुता के खिलाफ हूँ. अभी हाल ही में इतिहास में तोड़-मरोड़ करने के नामपर संजय लीला भन्साली के सेट पर हमला कर दिया गया. अब इतिहास का कोई कैसे ठेका ले सकता है? और कैसे किसी को इतिहास का ठेका दिया जा सकता है? अरे, जब देश की आजादी के नायक गांधीजी के बाबत सबके अपने-अपने विचार हैं, तो पांच सौ व पांच हजार वर्ष पूर्व के मनुष्यों के बारे में कौन क्या दावे से कह सकता है? और ऐसे में कोई कैसे बात-बात पर झंडा लेकर खड़ा हो सकता है? और फिर हिंसा तो बर्दाश्त करी ही कैसे जा सकती है? उसपर कमाल यह कि संजय लीला भन्साली के मामले में राजस्थान सरकार कहीं से उनके साथ खड़ी हुई नजर नहीं आई. वहीं फिल्म इंडस्ट्री वाले भी कम कमाल नहीं है. वे भी अक्सर सहिष्णुता की ऊपरी बातें ही करते हैं. अभी ऋषि कपूर का ही उदाहरण लें. उन्होंने हाल ही में रिलिज़ अपनी बायोग्राफी में अपने जमाने की दो प्रसिद्ध अभिनेत्रियों के अपने पिता राजकपूर से संबंध होने की बात कही. अब सवाल यह कि यह कहने का अधिकार उन्हें किसने दिया? उन्हें समझना चाहिए था कि दोनों प्रतिष्ठित भी हैं, तथा शादीशुदा भी हैं. आप उनके बाबत कुछ कहनेवाले कौन होते हैं? ऋषि कपूर के लिए तो यह किताब बेचने का मसाला हुआ,

लेकिन इसका उनके परिवार पर क्या असर पड़ेगा, यह उन्होंने नहीं सोचा. ...यह असहिष्णुता है. और अभिव्यक्ति की आजादी का ऐसा दुरुपयोग भी गलत ही है. हर बात कानूनी दायरे से हल नहीं करी जा सकती है. अंततः तो हर बात आत्मीय आधार पर ही तय होती है. ...इसी बात के अन्य उदाहरण दू तो करण जौहर ने अपनी फिल्म 'ए दिल हे मुश्किल' में विश्व इतिहास के श्रेष्ठ गायक मोहम्मद रफी की हंसी उड़ाई. अब यह अधिकार उन्हें किसने दिया? और असहिष्णुता की हद तो यह कि विरोध करने पर भी उन्होंने ना तो माफी मांगी और ना ही फिल्म से वह सीन ही हटाया. अब यह भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का दुरुपयोग ही कहा जाएगा. वहीं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का एक और पहलू भी है. और वह यह कि जब जो अभिव्यक्त करना चाहिए वह न करना भी एक तरह की असहिष्णुता ही है. और इसी संदर्भ में आप अमिताभ बच्चन का उदाहरण रख सकते हैं. मोहम्मद रफी को उनके हर जन्म दिवस पर वे उन्हें याद करते हैं. करण जौहर उनके मित्र भी हैं. उन्होंने उन्हें क्यों नहीं समझाया? अरे, इस देश और यहां की जनता ने हर बड़े व्यक्ति को बहुत कुछ दिया है. ऐसे में देश व उसकी जनता के लिए लाभ-हानि के दायरे से बाहर आकर कुछ करना सबका कर्तव्य है. और यहां मैं सदी के महानायक अमिताभ बच्चन से एक बात और कहना चाहूंगा कि भगवान ने आपको वह सबकुछ दिया है जिसकी एक मनुष्य कल्पना कर सकता है. मैं यह भी जानता हूँ कि आप इस देश व इसकी जनता से बहुत प्यार करते हैं. ...तो उनकी खातिर एक काम अवश्य करो. आपके पिता डॉ. हरिवंश राय बच्चन विश्व इतिहास के चंद श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं. उनकी कविताएं सहिष्णुता का सही पाठ सिखाती हैं. और आज देश को इसकी बहुत जरूरत है. अपनी आवाज तथा अपने व्यक्तित्व के जादू के सहारे उनकी कविताओं को घर-घर में फैला दो. इसके लिए आपको सिर्फ एक मजबूत चाह की जरूरत है. इसके पश्चात कार्य को अंजाम कैसे देना, यह आपसे बेहतर कोई नहीं जानता है. और मेरा विश्वास करिए अमिताभजी कि यह वह अभिव्यक्ति है जो आपको समय रहते करना ही चाहिए. सच कहूं तो मैं अमिताभ बच्चन के बहाने यह सब बातें इसलिए कह रहा हूँ कि यदि हर सफल व्यक्ति देश के प्रति अपने कर्तव्यों के बाबत थोड़ा बहुत सहिष्णु हो जाए, तो देश व देशवासियों की तकदीर बदलते देर नहीं लगेगी.

वहीं असहिष्णुता के चंद और उदाहरण दू तो बिहार के एक मिनिस्टर ने लोगों को भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री की तस्वीर पर जूते मारने हेतु उकसाया. भीड़ ने यह कृत्य किया भी. फिर हंगामा खड़ा होने पर उन्होंने माफी मांगकर छुटकारा पा लिया. क्या यह इतना छोटा कृत्य है कि जिसका माफी मांगकर छुटकारा हो सके? देश के प्रधानमंत्री के साथ किया गया यह कृत्य राष्ट्रद्रोह नहीं है? और फिर सुशासन बाबू नीतीश कुमार को तो उन्हें मंत्रिमंडल से निकाल देना चाहिए था. परंतु वे भी ऐसा नहीं करनेवाले. ...फिर क्या सुशासन? चलो, इसी बात का एक और उदाहरण देता हूँ. गुरमेहर के संबंध में हरियाणा के बीजेपी के एक मंत्री ने कहा कि जो कोई गुरमेहर का समर्थन करता है, उन्हें पाकिस्तान

भेज दिया जाना चाहिए. अब देश की अधिकांश जनता गुरमेहर के साथ खड़ी है. तो क्या पाकिस्तान को एक ही दिन में भारत से बड़ा देश बनाओगे? क्यों न ऐसे बयान देनेवालों को ही पाकिस्तान भेज दिया जाए? पर मैं जानता हूँ कि बीजेपी से उन्हें हटाते तक नहीं बनेगा. और फिर देशद्रोही और देशप्रेमी के सर्टीफिकेट बांटने का आजकल एक नया फैशन चल पड़ा है. यह बड़ा ही खतरनाक है. सवाल यह कि सर्टीफिकेट देने वाले स्वयं कहां खड़े हैं? क्या थिएटर में राष्ट्रगान पर खड़े हो जाने वाला देशप्रेमी हो जाता है? तो फिर वे ही लोग सड़क पर ऐक्सीडेंट से तड़पते व्यक्ति को अस्पताल पहुंचाने की बजाए उनका विडियो उतारते रहते हैं, तब क्या? सो देशप्रेम व देशद्रोह, कोई ऊपरी बात नहीं है. सही मायनों में तो जो पूरी तरह से सच्चा सहिष्णु नहीं है, वह कभी एक सच्चा देशप्रेमी हो ही नहीं सकता है. अतः यह स्पष्ट कर दूं कि इस सहिष्णु धरती पर यह सब लंबा नहीं चलनेवाला है. अंतिम जीत यहां उसी की होती आई है जो सहिष्णुता के मार्ग पर चला है. वहीं एक बात और याद रख लेना कि जिस रोज यह निष्पक्ष व स्वतंत्र विचारवाले लोग एक मंच पर आ गए, उस दिन उनकी आवाज सबसे तेज होगी. छोड़ो, मैं अभी तो वर्तमान प्रधानमंत्री से ही बात कर लूं. क्योंकि मोदीजी चाहें तो सबकुछ तेजी से परिवर्तित हो सकता है. और मैं चाहूंगा कि वे सबसे पहले अपनी पार्टी तथा उनके समर्थन देनेवाले संगठनों को सहिष्णुता सिखाएं. क्योंकि उनको समझना ही रहा कि असहिष्णुता चाहे उनके मंत्री दिखाएं, उनके समर्थक दिखाएं या उनके समर्थक संगठन; नाम व काम तो ले-देकर उनका ही खराब होता है. सो कुल-मिलाकर अंत में मैं यही निवेदन करूंगा कि सब मिलकर अपना और इस देश का उद्धार करो.

लो, इतनी सारी बातचीत में पूरी बात मेरी यानी भारत की और पश्चिमी देशों की सहिष्णुता के बीच में ही उलझकर रह गई. इस चक्कर में विश्व की बहुत बड़ी जनसंख्या से तो बातचीत करना ही भूल गया. ...शायद इसलिए कि बात ओबामा के भारत में दिए वक्तव्य से शुरू हुई थी. लेकिन कोई बात नहीं, देर आए दुरुस्त आए. सो मेहरबानीकर यह मत समझ लेना कि जिनकी चर्चा नहीं हुई है, वे भूमि सहिष्णु हैं. जी हां, आप ठीक समझे, मुस्लिम-बहुल देशों की अबतक हमने अलग से कोई चर्चा नहीं की.

सो, अब मैं सीधे मुस्लिमों की सहिष्णुता पर आता हूँ. पूरी दुनिया बदल जाए, चाहे मनुष्य अपनी मेहनत व लगन से चांद-तारों पर पहुंच जाए, परंतु उनमें से कई रूढ़िवादियों

ने जैसे न बदलने की कसम खा रखी है. और यह गलत है.... बदलाव इस संसार का पहला व अंतिम सत्य है, तथा समय के साथ सबको कहीं-न-कहीं व कुछ-न-कुछ बदलना ही पड़ता है. विश्व में कुल 196 स्वतंत्र देश हैं, और उसमें करीब 50 मुस्लिम-बहुल देश हैं. वहीं आज की तारीख में विश्व की जनसंख्या करीब साढ़े सात सौ करोड़ है, और उसमें मुस्लिमों की कुल आबादी एक सौ साठ करोड़ के करीब है. यानी विश्व की कुल आबादी का करीब तेइस प्रतिशत. सो कहना मैं यह चाह रहा हूँ कि यह विश्व की बहुत बड़ी आबादी है. और विश्व को प्रगति करना है, चांद-तारों पर राज करना है तो सबको समय के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलना ही पड़ेगा. थोड़ा सोचो, क्या मुस्लिम युवक-युवतियों में प्रतिभा की कमी है? मुझे तो ऐसा नहीं लगता. तो फिर क्यों जहां तेल के कुएं नहीं, वहां का मुस्लिम दूसरों से पिछड़ा हुआ है? क्योंकि चन्द कट्टरवादियों के कारण मुस्लिम बहुल देशों में युवक-युवतियों के लिए अपनी प्रतिभा सिद्ध करने के अवसर उत्पन्न ही नहीं हो पा रहे हैं. सच कहूं तो मुस्लिमों को इन चन्द कट्टरपंथियों ने कितना नुकसान पहुंचाया है, उनकी कितनी खानाखराबी करी है; इसका अंदाजा ही किसी को नहीं है. कहने को तो बहुत से बड़े-बड़े मुस्लिम राष्ट्राध्यक्ष और धर्मगुरु हैं जो दिन-रात दावा करते रहते हैं कि वे मुस्लिमों के शुभचिंतक हैं. मैं उन्हीं से पूछना चाहता हूँ कि उन मुस्लिम कट्टरपंथियों का आपने क्या कर लिया जिनके कारण प्रतिभा होने के बावजूद आज तक मुस्लिम युवाओं को नाकामी व लाचारी का जीवन गुजारना पड़ रहा है? विश्व की छोड़ो, इनके कारण खुद मुस्लिम राष्ट्र भी दहशत में जी रहे हैं. थोड़ा सोचो, रोज-रोज के खूनखराबे व दहशतगर्ती के इस वातावरण से वहां के बच्चों तथा युवाओं पर इसका क्या सायकोलोजिकल असर पड़ता होगा? ऐसे माहौल में प्रतिभा निखरना तो दूर, उल्टा एक सायकोलोजिकल डर हमेशा के लिए उनके जहन में बैठ जाता है. और यह एक सायकोलोजिकल सत्य है कि एकबार जिस मनुष्य के जहन में डर बैठ जाए, तो फिर वह किसी काम का नहीं रहता है.

यह मत समझना कि मुझे सिर्फ अपनी धरती की चिंता है. यह भी मत समझ लेना कि धरती के सारे टुकड़े अलग-अलग हैं. नहीं, हम सब एक ही पृथ्वी के अलग-अलग हिस्से हैं. हमें बांटा तुम इन्सानों ने है. तुम्हीं आपस में हमारे लिए झगड़ते रहते हो. बाकी हमारे लिए तो विश्व की सारी “मनुष्यता” हमारी ही संतानें हैं. हमें सबसे बराबरी पर प्रेम है. ...आखिर एक धरती चाहती ही क्या है? यही कि उसकी छाती पर पल रही संतानें रोज-रोज सुख और सफलता के शिखर छूए. झूमते-गाते, मस्ती से जीए. और यह स्पष्ट कह दूं कि जब भी कोई इन्सान कष्ट में जीता है, या कहीं भी...किसी के भी द्वारा, किसी भी कारण से इन्सानियत भुला दी जाती है; तो जितने खून के आंसू इन्सान रोता है...उससे कहीं ज्यादा हम धरती के टुकड़े रोते हैं. अतः मेरी करुणा समझो. मेरे साथ एक लंबा अनुभव है. मेरी बात सुनोगे और समझोगे तो पूरे विश्व की तस्वीर बदल जाएगी.

सो मुस्लिम देशों की तथा मुस्लिमों की सबसे बड़ी समस्या वे चन्द मुठ्ठीभर कट्टरवादी हैं, जो आतंक फैला रहे हैं. कुछ अपने कट्टर विचारों से तथा कुछ खूनखराबा कर. अब वे विश्व के अन्य देशों में कितना आतंक फैला पाते हैं, और उससे विश्व के अन्य देशों को कितना नुकसान होता है, यह तो एक विषय है ही. ...लेकिन आंकड़ों पर गौर किया जाए तो वे बताते हैं कि मुस्लिम आतंकवाद गैर मुस्लिम राष्ट्रों को इतना नुकसान नहीं पहुंचा पा रहा है जितना कि मुस्लिम देशों को. क्योंकि कम या ज्यादा हर देश अपनी सुरक्षा करने में सक्षम है ही. ...और आज नहीं तो कल एकदिन विश्व की संयुक्त ताकतें इन खूनखराबा करनेवाले आतंकियों को मिटा भी देगी ही. सो, उनकी छोड़ मुस्लिम देशों की चर्चा की जाए तो आंकड़े ये चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे हैं कि आतंकवाद से सबसे ज्यादा नुकसान मुस्लिम देशों को ही हो रहा है. क्योंकि कट्टरवादी वे हैंड बॉम्ब हैं जो अक्सर अपने ही हाथ में फूटते हैं. सो कहने का तात्पर्य इतना ही कि आतंकवाद एक ऐसा शैतानी जुनून है जो कभी किसी का नहीं हो सकता. और फिर यह क्यों भूलते हैं कि सिर्फ मरनेवाला ही नहीं मरता है, उसके साथ उसके परिवारवाले तथा दस-बीस चाहनेवाले भी मरते ही हैं. यही क्यों, इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि जो नहीं मरते, वे भी इन घटनाओं को देख तथा सुनकर सायकोलोजिकली तो मर ही जाते हैं. और एकबार जो सायकोलोजिकली मर गया, उसका जीना क्या और मरना क्या? अतः आतंकवाद से उन्हीं देशों को निपटना होगा, जहां इन्होंने पनाह ले रखी है. उनका खात्मा उन्हीं देशों को करना होगा जहां ये फल-फूल रहे हैं. और उस हेतु मुस्लिम राष्ट्रों को आतंकवाद की जड़ को समझना होगा. आतंकवाद की जड़ आतंकवादी नहीं, बल्कि कट्टर विचार के वे धर्मगुरु हैं जो आतंकवाद को हवा देते हैं. ये कट्टर विचार के धर्मगुरु वे वृक्ष हैं, जिनकी शाख पर आतंकवाद की लताएं फल-फूल रही हैं. अतः वाकई आतंकवाद से मुक्ति पाना चाहते हैं तो आतंकवादियों के साथ-साथ कट्टर सोच से भी मुक्ति पानी ही होगी.

समझते क्यों नहीं कि मनुष्य खुदा की सबसे हसीन रचना है, तथा मनुष्यजीवन खुदा का बख्शा सबसे हसीन तोहफा. मनुष्य तथा उसके हसीन जीवन से बढ़कर कुछ नहीं. अतः अपनी व अपनों के जीवन की कीमत पहचानें. चारों ओर एक ऐसा वातावरण पैदा करें जहां सिर्फ जीने की तथा प्रगति करने की चाह अंगड़ाई ले रही हो. चारों ओर वातावरण में सहिष्णुता की हवाएं बह रही हो. एक ऐसा माहौल पैदा करें जहां पर मानवीय स्वतंत्रता को सर्वाधिक तवज्जो दी जा रही हो. फिर देखें, न कट्टरवाद बचेगा न आतंकवाद. कुछ बचेगा तो जीवन, प्यार, खुशहाली और प्रगति. और उस दिन मुस्लिम राष्ट्रों को भी तथा बचे हुए विश्व को भी पता चलेगा कि मुस्लिम युवक-युवतियां कितने प्रतिभावान हैं.

सो कुल-मिलाकर इतना समझें कि अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है. एक कट्टरता ही आपका सबसे बड़ा शत्रु है. ...वही आतंकवाद को हवा दे रहा है. और आतंकवाद का सीधा नियम यह कहता है कि उनकी जड़ें जिन देशों में फैली हैं, ...उन्हें ही उन जड़ों को काटना

है. और आपने आतंकवाद की जड़ें काटी तो इसके फायदे आपको ही हैं. सबसे पहले तो इससे आपको रोज-रोज के व्यर्थ के खूनखराबे से छुटकारा मिलेगा. दूसरा, पूरे विश्व की आपके प्रति निगाह बदलेगी. और मेरी दृष्टि में यह बहुत बड़ा फायदा है. कोई माने या न माने परंतु सत्य यही है कि आज की तारीख में मुस्लिमों के प्रति कई देशों की निगाह में परिवर्तन आया है. दरअसल सत्य वह बला है जो न कोई कहता है, न कोई मानता है. लेकिन मजा यह कि बावजूद इसके सत्य कम या ज्यादा समझता हरकोई है. अब मैं तो विशाल हृदय धरती हूँ, सो मैं तो सत्य कहूंगा भी और समझाऊंगा भी. और सत्य यह है कि आतंकवाद की जड़ों को ना काट पाने के कारण विश्व में सीधा संदेश यही जा रहा है कि उन्हें मुस्लिम राष्ट्रों का सीधा या परोक्ष समर्थन प्राप्त है. और इसका सबसे खतरनाक दुष्परिणाम यह हो रहा है कि इन चन्द मुठ्ठीभर कट्टरवादियों के कारण पूरे विश्व ने बिना अपवाद के सभी मुस्लिमों को शंका से देखना शुरू कर दिया है. हालांकि यह गलत है, परंतु शायद वे भी क्या करें? क्योंकि लोग सायकोलोजिकली इन कट्टरवादियों से इतने सचेत हो गए हैं कि वे एक सच्चे मुसलमान को भी सावधानी की निगाह से देखने लग गए हैं. और इसका भुगतना किसको पड़ रहा है? निश्चित ही उन सच्चे मुसलमानों को जिनका आतंकवाद से कुछ लेना-देना नहीं है. उन्हें जो स्वयं आतंकवाद से परेशान हैं. और क्यों...? वो ही, चन्द कट्टरवादी मुसलमानों के कारण.

और मैं आज की तारीख में इसे सबसे बड़ी समस्या के रूप में देखता हूँ. क्योंकि किसी भी इन्सान को किसी दूसरे इन्सान के साथ अकारण दोषम दर्जे का व्यवहार करने का कोई अधिकार नहीं. सच कहूं तो यह इन्सानियत भी नहीं. किसी को हीन दृष्टि से देखना या किसी को शंकित निगाह से देखना, सामनेवाले को भीतर से कितना खत्म कर देता है; इस बात का यहां किसी को सायकोलोजिकल अंदाजा ही नहीं है. कोई जानता ही नहीं कि हीन दृष्टि से देखना, मनुष्य की आत्मा को खत्म कर देता है. उसका आत्मविश्वास मार देता है. और यही हथ्र युवा मुस्लिम प्रतिभाओं का हो रहा है. इन व्यवहारों का असर कहीं-न-कहीं कम या ज्यादा उनके आत्मविश्वास पर पड़ ही रहा है. मैं यह सीधे व सच्चे सायकोलोजिकल सत्य निश्चित ही करुणावश सबके भले के लिए कह रहा हूँ. अतः समझाने हेतु कहे शब्दों तथा वाक्यों का दुरुपयोग मत करना. कट्टरपंथी हरहमेशा ऐसी कोशिशें करते हैं, परंतु यह आम मनुष्य का कर्तव्य है कि उन्हें सच्चाई का आइना दिखाकर उनकी हरएक ऐसी कोशिश को नाकाम करें. क्योंकि अंत में तो लाख कड़वा होने के बावजूद 'सत्य' ही वह आइना है जिसमें झांककर आगे की राह पकड़ी जा सकती है. और हमें आगे बढ़ना है.... अतः यह सत्य स्वीकारना ही पड़ेगा कि प्रतिभा के बावजूद सिर्फ खोए आत्मविश्वास के कारण दुनिया का कोई भी देश हो, वहां मुसलमान अपनी जनसंख्या के आधार पर "प्रपोरशनेट प्रगति" नहीं कर पा रहा है. और मैं यह दावे से कह रहा हूँ कि इस हेतु उनकी प्रतिभा नहीं, उनका यह खोया आत्मविश्वास ही जवाबदार है. थोड़ा सोचो,

एयरपोर्ट पर आपकी अतिरिक्त चेकिंग हो, या आपको वीसा देते वक्त ज्यादा सवाल किए जाएं; तो इसका आपकी मानसिकता पर क्या असर पड़ेगा? आपकी आत्मा ही मर जाएगी. निश्चित ही विश्वसमुदाय का यह व्यवहार योग्य नहीं. परंतु स्पष्ट समझ लो कि ताली हमेशा दो हाथों से बजती है. मैंने आजतक मुस्लिम बुद्धिजीवियों या खुले विचारों के लोगों को भी धर्मगुरुओं की कट्टरता और आतंकवादियों के आतंक का कड़े शब्दों में विरोध करते कम ही देखा है. और इसी कारण विश्व समुदाय को ठीक संदेश नहीं जा रहा है. ...जा भी नहीं सकता है.

सच कहूं तो मुझे तो यह पूरी बात ही समझ में नहीं आ रही है. समझ में आए, ऐसी है भी नहीं. क्योंकि आतंकवाद पनप ही उन धरतियों पर रहा है, जो स्वयं आतंकवाद से सबसे ज्यादा परेशान हैं. अब जब आतंकवाद उन्हीं देशों में पनप रहा है जो उनसे सबसे ज्यादा परेशान है, तो बताओ उनका खात्मा कौन करेगा? निश्चित ही उनका खात्मा इन्हीं मुल्कों को बुलाना होगा. और यदि ऐसा नहीं किया गया तो दिन-ब-दिन मुस्लिम व गैर-मुस्लिम की खाई बढ़ती चली जाएगी. और यह बढ़ती खाई एक दिन अच्छे खासे हसीन विश्व को खत्म कर देगी. मेरी दृष्टि में यह मुसलमान तथा गैर-मुसलमान में बढ़ती खाई 'आतंकवाद' से भी बड़ी समस्या है. और इससे निपटने हेतु ताली दोनों हाथों से बजानी पड़ेगी. दोनों को मिलकर ना सिर्फ मुस्लिम आतंकवाद का खात्मा करना होगा, बल्कि मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिमों के बीच बढ़ते अविश्वास के वातावरण को भी खत्म करना होगा. सबको यह समझना ही होगा कि एक आम मुस्लिम मनुष्यता के प्रति उतना ही सहिष्णु है, जितना अन्य कोई.

चलो, विश्व को बचाए रखने के लिए यह सब तो करना ही होगा. लेकिन घूम-फिरकर विचारणीय सवाल यही कि इतनी कट्टरता, इतना आतंकवाद; आखिर यह सब क्यों? जेहाद के नाम पर. तो क्या जेहाद छेड़ने हेतु सिर्फ मुस्लिम धर्म में कहा गया है? अरे, आप जिन-जिन धर्मों में मानते हैं, वे सब हजार, दो हजार तथा बहुत हुआ तो पांच-दस हजार वर्ष पुराने हैं. मैंने तो पिछले करोड़ों वर्षों में न जाने कितने भगवान, उसके बंदे व पैगंबरों को आते-जाते व उभरते तथा लीन होते देखा है. कितने ही धर्म आए और गए, उनका तो काम ही आना और जाना है. स्थिर तो धरती है, स्थिर तो उसकी छाती पर पल तथा बढ़ रही यह मनुष्यता है. बाकी भगवानों, उनके संदेश लाने वालों तथा धर्मों का आना-जाना तो मेरे लिए हर दो-पांच हजार वर्ष की बात है. सो मैं इन धर्मों तथा उनके बनाए भगवानों की बजाए मनुष्यों और मनुष्यता की ज्यादा चिंता करता हूँ. मूल्यवान भी यही दोनों ज्यादा हैं. मैं करोड़ों वर्षों से आने तथा जानेवाले धर्मों को देखता आ रहा हूँ, और 'जेहाद' हमेशा से सभी धर्मों का मूल रहा है. हां, परंतु जेहाद का अर्थ वह कतई नहीं जो मुस्लिम कट्टरपंथी समझाने में लगे हुए हैं. धर्म हो या ईश्वर, फिर चाहे उसे तुम खुदा कह लो या गॉड, कोई फर्क नहीं पड़ता है; अंत में तो सब मनुष्यता के उद्धार के लिए ही बने हैं. और

मनुष्य का उद्धार होता है मन की ऊंचाइयां छूने से. अतः कुल-मिलाकर सरल भाषा में समझें तो धर्म है मन की सरलता. धर्म है सबके प्रति प्रेम की भावना. और खुदा है उसके मन की वह अंतिम उंचाई जहां पर पहुंचकर वह इतना करुणावान हो जाए कि सबको अपने हृदय में समा ले. बस, और यह अंतिम मंजिल पाने हेतु यहां हर मनुष्य को अपने मन के अवगुणों जैसे भय, लोभ, चिंता, क्रोध, ईर्ष्या वगैरह से एक जेहाद छेड़ उसपर विजय पानी होती है. और यह जेहाद ही धर्म है, तथा यह हर व्यक्ति का अपना जाती जेहाद है. यूं भी धर्म का ताल्लुक मनुष्य का अपने स्वयं से होता है. सीधा क्यों नहीं समझते हैं कि धर्म बाहर करने, दिखाने या पालने का विषय ही नहीं है.

खैर, यह तो धर्म और उसके इतिहास की बात हुई. लेकिन यदि फिर वर्तमान पर आ जाऊं तो यह स्पष्ट समझ लो कि आज की तारीख में विश्व की सबसे बड़ी समस्या यदि कोई है तो वह मुसलमानों तथा गैर-मुसलमानों के बीच बढ़ता अविश्वास है. और उसकी जड़ में कट्टर मुस्लिमों द्वारा फैलाया जा रहा आतंकवाद ही है. ...हालांकि कई लोग इस हेतु अन्य देशों की नीतियों को भी जवाबदार मानते हैं. कई इसे मुस्लिम देशों में उपलब्ध तेल के झगड़े से भी जोड़कर देखते हैं. मैं इन बातों व संभावनाओं को भी पूरी तरह से नहीं नकार रहा हूँ. परंतु चाहे जो हो, यह सब कारण भी कुल-मिलाकर दस प्रतिशत से ज्यादा जवाबदार नहीं है. मैं एकबार फिर जोर देकर कहूंगा कि मुख्य समस्या मुस्लिम कट्टरता की ही है. और उससे मुस्लिम देशों को ही निपटना पड़ेगा. यूं भी जिसमें नुकसान अपना हो रहा हो, उस हेतु दूसरों को दोष दे देने से समस्या नहीं निपट जाती है. और एक बात मैं पूरे विश्व को कहना चाहूंगा. यह सबको समझना चाहिए कि देश के आधार पर धरती बांटने से या धर्मों के आधार पर मनुष्यों को बांटने से न तो धरती बंट सकती है और ना ही मनुष्यता को ही बांटा जा सकता है. जैसे ब्रह्मांड में करोड़ों तारे, ग्रह व उपग्रह हैं, परंतु फिर भी सब ब्रह्मांड की एक डोर से ना सिर्फ संयुक्त हैं, बल्कि एकदूसरे पर निर्भर भी हैं. ठीक वैसा ही पृथ्वी के मनुष्यों का है. चलो, इसी बात को एक साधारण उदाहरण से समझाता हूँ. मनुष्य का शरीर न जाने कितने अंगों से बना होता है. ये सारे अंग ना सिर्फ अलग-अलग होते हैं, बल्कि सबके अपने-अपने कार्य तथा अपनी-अपनी कैरेक्टरिस्टिक्स भी होती है. तो भी एक अंग के बिगड़ते ही भुगतना सिर्फ उस अंग को ही नहीं, पूरे शरीर को भी पड़ता ही है. बस वैसा ही पृथ्वी के मनुष्यों का है. भले ही वे अपने को अलग-अलग धर्म या देश का मान रहे हों; लेकिन ध्यान रख लो कि यदि कोई एक कष्ट या संकट में होगा, या कोई एक गलत राह पकड़ लेगा तो उसका भुगतना सभी मनुष्यों को पड़ेगा. ब्रह्मांड हो, मनुष्य-शरीर हो या पृथ्वी की मनुष्यता हो, सबके बीच हार्मोनी जरूरी है. बिना हार्मोनी बिठाए, तथा बिना सबको साथ लिए न तो कोई बच सकता है और ना ही कोई बढ़ सकता है. आप यह कभी तय नहीं कर सकते हैं कि आपके शरीर में आंख कीमती है या कान? हाथ जरूरी है या

पांव? आप यह तय नहीं कर सकते कि किडनी ज्यादा उपयोगी है या लिवर. क्योंकि कोई एक बिगड़ा नहीं कि उसका असर पूरे शरीर पर आया नहीं.

अतः मेरा यह निवेदन है कि भले ही आपलोगों ने अपने को धर्म या देश के आधार पर बांट रखा हो, पर इतना समझ लो कि आखिर में तो आप सभी एक ही शरीर, यानी “मनुष्यता” के हिस्से हैं. कोई मनुष्यता की किडनी है तो कोई मनुष्यता का लिवर. सो मेहरबानीकर सब मिल-जुलकर हार्मोनी में रहें. आप यह मानकर ही चलें कि आप सब मनुष्यता नामक एक महान शरीर के भिन्न-भिन्न अंग हैं. कोई बड़ा-छोटा नहीं है, ना ही कोई महान या तुच्छ ही है. यह ध्यान रख ही लो कि कोई अकेला पूर्ण नहीं है, और कोई सिर्फ अपनी सोचकर जी नहीं सकता है. ऐसा समझें कि पेट को भूख लगी हो, मुंह खाना खाए भी; पर फिर सोचे कि मैं यह खाना पेट तक पहुंचाऊं ही क्यों? पेट से मेरा क्या लेना-देना? ...मरने दो उसे भूखा. या फिर हाथ भी उसी तर्जपर सोचे कि खाना उठाया तो मैंने, मैं उसे मुंह तक पहुंचाऊं ही क्यों? या फिर बोन मेरो सोचे कि खून तो मैंने बनाया, मैं उसे भिन्न-भिन्न नसों में पहुंचाऊं ही क्यों? ...तो क्या होगा? बस यही मैं आपको समझाना चाह रहा हूँ. कोई धरती या किसी धर्म के लोग कलाकार हैं तो अन्य धरती या धर्म के लोग वैज्ञानिक सोच के हैं. किसी को किसी एक चीज में महारत हासिल है तो किसी को किसी अन्य चीज में. लेकिन अंत में तो इन सबकी सभी प्रतिभाओं पर सम्पूर्ण मनुष्यता का अधिकार है ही. कभी कोई एडीसन कहे कि बल्ब मैंने बनाया है, मैं उससे सिर्फ अमेरिका को रोशन करूंगा; तो क्या होगा. हालांकि महान लोग ऐसा कहते भी नहीं, तथा वे इस तरीके से सोचते भी नहीं. अरे भाई, तभी तो वे महान हैं. तभी तो कहते हैं कि कलाकार को कभी भी देश या धर्म की सीमा में नहीं बांधा जा सकता है. अतः मेहरबानीकर आपलोग आपस में तहेदिल से हार्मोनी बिठाएं. आप लोग धर्म या देश की सीमा में बंधने की बजाए “मनुष्यता की एक डोर से” बंध जाएं. मेहरबानीकर सभी इस ओर ईमानदार कोशिश करें.

हालांकि इस ओर पहला कदम मुस्लिम राष्ट्रों को ही उठाना है. उन्हें ही सबसे पहले “मुस्लिम कट्टरवाद तथा आतंकवाद से” अपने को अलग करके दिखाना है. और फिर एक सत्य यह भी है ही कि अधिकांश मुस्लिम राष्ट्रों ने अपने को सहूलियतपूरता तो धार्मिक कट्टरवाद से अलग किया ही हुआ है. ऐसे कितने मुस्लिम देश हैं जहां शराब नहीं पी जा रही है? बमुश्किल दो-चार...! वहीं यह बताओ कि क्या बड़ी तादाद में मुस्लिम महिलाएं बिना बुर्के के नहीं घूम रही हैं? तो क्या हो गया? खान-पान हो या पहिरान, समय के साथ बदल ही जाता है. और समय के साथ सबकुछ बदल जाना भी चाहिए. सबको यह ध्यान रख ही लेना चाहिए कि बीज मौसम के अनुसार बोए जाते हैं, बोए बीजों के अनुसार मौसम नहीं बदलता है. बस वैसे ही मनुष्य को समय अनुसार बदलना पड़ता है, समय कभी आपकी सोच के अनुसार नहीं बदलता है. और यह समय के साथ सबकुछ बदल जाना तो मैं करोड़ों वर्षों से देखता आ रहा हूँ. और आजतक मैंने कोई चीज इतनी कट्टर नहीं देखी जो समय के

साथ बदल न गई हो. मैंने तो अपनी धरती पर ही सतीप्रथा से लेकर इन्द्रपूजा तक सबकुछ बंद होते देखा है. अतः मुख्य बात मैं यह कहना चाह रहा हूँ कि समय के साथ यहां सबकुछ बदल ही जाता है. और जब समय के साथ सबकुछ बदलना ही है तो फिर बेमतलब इन दो-पांच हजार वर्ष पुरानी बातों पर इतना उछलना क्यों? और फिर मुख्य सवाल यह भी कि किसी भी कारण से महिलाओं को दबाना ही क्यों? कुल जनसंख्या का ये पचास प्रतिशत हैं. यदि उन्हें कंधे-से-कंधा मिलाकर साथ चलने का अवसर नहीं दिया, तो राष्ट्र प्रगति करेगा ही कैसे? आप इतिहास देखें, प्रगति उन्हीं राष्ट्रों ने करी है जहां महिलाएं 'मर्द' के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर निकल पड़ी हैं. यहां पर मुझे मेरी धरती के एक महान शायर कैफी आजमी की "औरत" नामक एक कविता याद आ रही है. कैफी आजमी एक प्रगतिशील विचारोंवाले मुसलमान थे. वे समाज और धर्म में महिलाओं की बराबरी की भागीदारी के पक्षधर थे. पढ़िए उनकी यह कविता, आप खुद समझ जाएंगे.

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
कल्ब-ए-माहौल में लरजां शरर-ए-जंग है आज
हौसले वक्त के और जीस्त के यक रंग है आज
आबगीनों में तपा वलवला-ए-संग है आज
हुस्न और इश्क हम आवाज व हम आहंग है आज
जिसमें जलता हूँ उसी आग में जलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
जिन्दगी जहद में है सब्र के काबू में नहीं
नब्ज-ए-हस्ती का लहू कांपते आंसू में नहीं
उड़ने खुलने में है नक्हत खम-ए-गोसू में नहीं
जन्नत इक और है जो मर्द के पहलू में नहीं
उसकी आजाद रविश पर भी मचलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
गोशे-गोशे में सुलगती है चिता तेरे लिए
फर्ज का भेस बदलती है कजा तेरे लिए
कहर है तेरी हर इक नर्म अदा तेरे लिए
जहर ही जहर है दुनिया की हवा तेरे लिए
रुत बदल डाल यदि फूलना-फलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
कद्र अब तक तेरी तारीख ने जानी ही नहीं

तुझमें शोले भी हैं बस अशकफिशानी ही नहीं
तू हकीकत भी है दिलचस्प कहानी ही नहीं
तेरी हस्ती भी है इक चीज, फक्त जवानी ही नहीं
अपनी तारीख का उनवान बदलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
तोड़कर रस्म के बुत बन्द-ए-कदामत से निकल
जोफ-ए-इशरत से निकल वहम-ए-नजाकत से निकल
नफस के खींचे हुए हल्का-ए-अजमत से निकल
कैद बन जाए मुहब्बत तो मुहब्बत से निकल
राह का खार ही क्या गुल भी कुचलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
तोड़ ये अज्म शिकन दगदगा-ए-पन्द भी तोड़
तेरी खातिर है जो जंजीर वह सौगन्ध भी तोड़
तौक यह भी है जमरुद का गुल बंद भी तोड़
तोड़ पैमाना-ए-मरदान-ए-खिरदमन्द भी तोड़
बन के तूफान छलकना है उबलना है तुझे

उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे
तू फलातून व अरस्तु तू जोहरा परवीं
तेरे कब्जे में गरदूं तेरी ठोकर में जमीं
हां उठा जल्द उठा पा ए-मुकद्दर से जबीं
मैं भी रुकने का नहीं, वक्त भी रुकने का नहीं
लड़खड़ाएगी कहां तक कि संभलना है तुझे
उठ मेरी जान! मेरे साथ ही चलना है तुझे

सो, इस महान कविता से सबक लो. इन धर्मगुरुओं के चक्कर में मत पड़ो. वे तो चाहे किसी भी धर्म के क्यों न हों, कट्टरता पर उकसाएंगे ही. वे महिलाओं को दबाना चाहेंगे ही. उनका तो युगों-युगों से एक ही सपना है कि सब उनकी सुने. क्योंकि उनकी तो हमेशा से एक ही चाह रही है कि बिना कुछ किए धन व सम्मान से भरा शानदार जीवन मिलता रहे. सो वे तो बार-बार अपने ही शास्त्रों की दुहाई देते रहेंगे. वे तो चिल्लाते ही रहेंगे कि शास्त्रों में यह लिखा है, और यह नहीं लिखा है. उनसे पूछो कि शास्त्रों में तो हवाईजहाज में घूमने का भी नहीं लिखा है, फिर आपलोग हवाईजहाजों में क्यों घूम रहे हो? मैं इतना ही कहना चाह रहा हूँ कि धर्मगुरु तो किसी भी धर्म के हों, कट्टरता हेतु उकसाते ही रहेंगे.

क्योंकि उनकी तो दुकानें ही कट्टरता पर टिकी हैं. ...परंतु जैसे विश्व के दूसरे राष्ट्र अपने-अपने धर्मगुरुओं की कट्टरता का समर्थन नहीं करते हैं, वैसे ही मुस्लिम राष्ट्रों को भी कट्टरपंथी धर्मगुरुओं की अवेहलना प्रारंभ कर देनी चाहिए. और तभी वे अपनी धरती पर पल रहे आतंकवाद को जड़-मूल से उखाड़ फेंक सकेंगे. ...मेहरबानीकर यह दो कार्य कर लीजिए; फिर देखिए कि पूरे विश्व में आपका सम्मान क्या से क्या हो जाता है. और फिर यदि एक मलाला युसुफजई 15 वर्ष की उम्र में इन कट्टरवादियों की गोली खाने के बावजूद उनके खिलाफ अपनी आवाज बुलंद कर सकती है; शांति का नोबल पुरस्कार पाकर तमाम मुस्लिम राष्ट्रों का नाम रोशन कर सकती है; तो आप सब मिलकर कट्टरवाद का सामना क्यों नहीं कर सकते हैं? क्यों अपने को बुद्धिजीवी समझने वाले मुस्लिम भी कट्टरवाद तथा आतंकवाद के खिलाफ चुप्पी साधे रखते हैं? एक मलाला को अपना आदर्श बना लो, सारा काम हो जाएगा. मुस्लिम देशों में पल रहे मुठ्ठीभर कट्टरवादी तो रातोंरात गायब हो जाएंगे. फिर क्या है; तस्वीर मुस्लिम राष्ट्रों की भी बदल जाएगी, तथा विश्व की भी.

और मैं जो मुस्लिम स्त्रियों की आजादी बाबत कह रहा हूँ, वही वेदना और वही सब कारण सऊदी अरब की प्रिन्सेस सुल्ताना के माध्यम से लेखक जीन सैसन द्वारा लिखी गई किताब “प्रिन्सेस-सिक्रेटस टू शेर” में भी दर्शाई गई है. उसने उसमें बताया है कि कैसे रसूखदार लोग सिर्फ अपनी हवस के लिए पैसे के बल पर स्त्रियों का शादियों के नाम पर शोषण करते हैं, और वह भी 10-12 वर्ष की लड़कियों का. यही नहीं, उनका शारीरिक शोषण उस हद तक होता है कि वे बेचारी 14-15 वर्ष की होते-होते अपनी जान गंवा देती है. प्रिन्सेस सुल्ताना ने अपनी किताब में यह भी कहा है कि ये लड़कियां अपने पर हो रहे जुल्म के खिलाफ आवाज भी नहीं उठा सकती. कहीं कोई नहीं है जो उन्हें न्याय दिलवाए. क्योंकि सब जगह एक ही बात कही जाती है कि स्त्रियां मर्दों की सेवा करने तथा उनके जुल्म सहने हेतु ही पैदा हुई हैं. उन्हें फरियाद करने की बजाए अपनी सहनशक्ति बढ़ाने पर ध्यान देना चाहिए. अब आप ही फैसला करें. क्या महिलाओं के हृदय नहीं? उनमें आत्मा नहीं? वे मनुष्य नहीं? क्या उनके अरमान नहीं? क्या उन्हें जीने का अधिकार नहीं? सो, कुल-मिलाकर ये बातें करना ही मत कि हम उन्हें घर की चारदीवारी में या परदे में उनके हित के लिए रखते हैं. मैं बार-बार इस बात पर जोर इसलिए दे रहा हूँ कि इन्सान होने के नाते किसी दूसरे इन्सान के अरमानों को कुचलने का यहां किसी को कोई अधिकार नहीं. और फिर कोई मुल्क कभी भी महिलाओं को घर की चारदीवारी में कैद करके प्रगति नहीं कर सकता है. जबकि आज का युवा प्रगति और खुशहाली चाहता है. और यह उसका जन्मसिद्ध अधिकार भी है. मेरी बात ध्यान में रख लेना कि ज्यादा दिनों तक यदि युवाशक्ति से उनका हक छीनोगे तो वे विद्रोह पर उतर आएंगे. और वह खतरनाक होगा, क्योंकि वैसे ही अधिकांश मुस्लिम देशों में गृहयुद्ध छिड़ा हुआ है. और फिर यह क्यों नहीं समझते कि यह फतवे जारी करनेवाले, तथा अपने को धर्म के ठेकेदार माननेवाले आजतक शिया और

सुन्नी तक का झगड़ा नहीं सलटा पाए हैं. सच तो यह है कि उल्टा वे ही शिया-सुन्नी के झगड़ों की आग में घी डालने का ही काम करते आ रहे हैं. जब वे आपको आपस में एक नहीं रहने देते तो वे आपको पूरे विश्व से एक क्या होने देंगे? सो जागो, अपने जीवन का मूल्य समझो तथा जितनी जल्दी हो सके संकुचित विचारों से बाहर आओ.

आप यह बात क्यों नहीं समझते कि आज का जमाना बैलगाड़ियों में घूमने का नहीं है. आज का युवा चांद-तारों पे उड़ना चाहता है. आज का युग आर्थिक तथा वैज्ञानिक प्रगति का युग है. और वह तभी संभव है जब बाकी मुल्कों से आपके बेहतर रिश्ते हों. वहीं मुल्क में विदेशी सैलानियों को आकर्षित करने हेतु भी अमन व शांति का वातावरण होना बेहद जरूरी होता है. आप जानते ही हैं कि विदेशी सैलानी देश की अर्थव्यवस्था को कितना सुदृढ़ करते हैं. लेकिन दुर्भाग्य से इन कट्टरपंथियों तथा आतंकवादियों के कारण आपकी धरती पर विदेशी सैलानी ना के बराबर आते हैं. और यह बात ना सिर्फ मुल्क की अर्थव्यवस्था के, बल्कि मुल्क की रेप्युटेशन के भी खिलाफ जाती है. सो कुल-मिलाकर समझ ही लो कि युगों से “सहिष्णुता” मनुष्यों तथा मनुष्यता के लिए एकमात्र मार्ग है. एक सीधी बात हमेशा के लिए जहन में बिठा ही लो कि धर्म अंदर की बात है, और इन्सानियत सहिष्णुता की बात है. चलो आपको यह समझाने हेतु मैं एक खूबसूरत किस्सा सुनाता हूँ. ठंड का मौसम था. तापमान शून्य डिग्री के करीब था. एक बेसहारा बूढ़ा शहर की प्रसिद्ध मजार के सामने वाले फूटपाथ पर लेटा ठंड से बुरी तरह कांप रहा था. उसके ठीक सामने मजार पर चादर चढ़ाने वालों की कतार लगी हुई थी. वह हर चादर में अपना जीवन देख रहा था. परंतु कोई उसे चादर देगा क्यों ? हरेक को चादर चढ़ाकर अपने लिए उज्ज्वल भविष्य जो मांगना था! तभी एक मजदूर उसी फुटपाथ से गुजर रहा था. उसकी नजर इस बूढ़े पर पड़ी. उसकी हालत देख वह समझ गया कि यदि आज की रात इसने ऐसे ही काटी तो वह मर भी सकता है. उसने हाथ पकड़कर बूढ़े को उठाया और अपने घर चलने को कहा. बूढ़ा भी हैरान था. क्योंकि वह अकेला ही था जो सड़क से गुजरने के बाद भी मजार पर नहीं जा रहा था. बूढ़े ने आश्चर्य से पूछा भी कि भाई मेरे, तुम्हें अल्लाह से कुछ नहीं मांगना है?

वह बोला- मांगना तो है, पर वह देता है कि नहीं इसका यकीन नहीं. जबकि मेहनत करने पर मजदूरी मिल ही जाती है. खैर, वह सब छोड़ो और घर चलो. बूढ़ा तो कोई आसरा चाहता ही था. सो चल पड़ा चुपचाप उसके साथ. उधर वह मजदूर बड़ा ही कोमल हृदय था. उसने बूढ़े को ना सिर्फ भोजन कराया, बल्कि रातभर सिकुड़कर उसे अपने साथ एक ही चादर में सुलाया भी. सुबह तक बूढ़े की हालत काफी सम्भल चुकी थी. बस उसने आसमान की तरफ ऐलान करते हुए कहा- वाह रे खुदा. तू पता तो नक्काशीदार कारीगरी से बनी आलीशान मस्जिदों और मजारों का देता है, और रहता रहमदिल गरीबों के दिल में है!

अतः यह समझ ही लो कि इन्सान का खूबसूरत हृदय ही खुदा का एकमात्र घर है. तथा इन्सानी विवेक तथा उसकी स्वतंत्रता का सम्मान खुदा का एकमात्र पैगाम है. अतः आप स्त्रियों को या किसी को भी दबाने या मारने वाले होते कौन हैं? खुदा सबको जंगल का शेर बनाकर पैदा करता है. हरेक के हृदय में वह बैठा है, उसने हर हृदय में विवेक दे रखा है. हरेक को अपने विवेक से चलना है. यही खुदा का वास्तविक सम्मान है. थोड़ा समझना, सत्य किसी ने भी कहा हो, वह हमेशा प्रकृति की त्रिगुणी-माया के अधीन होता है. कहने का तात्पर्य यह कि सत्य के भी तीन प्रकार होते ही हैं:

पहला है सनातन सत्य: अर्थात् जो हर युग के हर मनुष्य पर बिना किसी पक्षपात या अपवाद के बराबरी पे लागू होता है. इन सत्यों को हम नियम भी कह सकते हैं. जैसे कुरान की एक आयात कि “कोई खुदा नहीं एक खुदा के सिवाय”. ...अब यह एक ऐसा सत्य है जिसे बदला नहीं जा सकता है. और एक खुदा है, अर्थात् सिर्फ मुस्लिम धर्म माननेवालों का, या सिर्फ मनुष्यों का नहीं, ब्रह्मांड की हर चल-अचल वस्तु का एक ही खुदा है.

दूसरा होता है समय का सत्य: ये बातें “कहे जाते वक्त की स्थिति को देखकर” कही गई होती हैं. अर्थात् इन बातों को कहते वक्त उस समय की परिस्थितियों का ध्यान रखा गया होता है. एक पुरुष अनेक विवाह या स्त्रियों को परदे में रखने जैसी बातों को आप इस श्रेणी में रख सकते हैं. ये सत्य समय व परिस्थिति बदलते ही बदल जाते हैं. फिर इन्हें ढोना बुद्धिमानी कतई नहीं कही जा सकती है.

वैसे ही तीसरा होता है व्यक्तिगत सत्य: इसमें वे बातें आती हैं जो किसी व्यक्ति विशेष को उसकी परिस्थिति तथा आदतों के आधार पर उसके भले के लिए कही जाती है. इन बातों का तो उस वक्त के भी किसी अन्य मनुष्य से कुछ लेना-देना नहीं होता है. यह बात सिर्फ जिसे कही गई है, उसी के लिए होती है. अब उन्हें भी आजतक ढोना तो हद ही हो गई.

...यहां यह स्पष्ट कर दूं कि महान लोगों द्वारा कही गई बातों को ‘सत्य’ के इस पैमाने यानी प्रकृति की त्रिगुणी-माया के आधार पर समझने में एक-दो नहीं, बल्कि सभी देशों के सभी लोगों ने मार खाई है. कोई किसी भी धर्म में माननेवाला हो, यहां हरकोई अनेक ऐसी बातों को आज भी ढोए हुए ही है; जिनका आज के युग से कुछ लेना-देना नहीं. जिनका वर्तमान परिस्थितियों से कोई संबंध ही नहीं. ...हां, परंतु एक बारीक फर्क यहां भी मुस्लिम अनुयायियों तथा अन्य धर्मों के अनुयायियों में है. जहां मुस्लिम समाज में आज भी फतवे यानी ऑर्डर जारी कर दिए जाते हैं, वहीं अन्य धर्मों के धर्मगुरु ऐसा नहीं करते हैं. और फतवे भी कैसे-कैसे? चलो, मैं आपको चन्द फतवे याद करवाता हूँ. इन्हें पढ़कर आपके होश उड़ जाएंगे.

1) **सूरज और पृथ्वी की स्थिति पर फतवा**

सऊदी अरब के मुफ्ती शेख इब्न बाज़ ने एक फतवा जारी किया था जिसमें ये कहा गया था कि पृथ्वी समतल है और सूर्य पृथ्वी के चक्कर लगा रहा है. फतवे में आगे कहा गया था कि इसके विपरीत सोचना ईश्वर की तौहीन होगी.

2) **सलमान रुशदी के खिलाफ फतवा**

1988 में ईरान के सबसे पहले और सबसे बड़े नेता रुहोल्लाह खोमैनी ने अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त लेखक सलमान रुशदी के खिलाफ उनकी किताब सेटैनिक वर्सेस के लिए फतवा जारी किया था. फतवे के मुताबिक रुशदी ने उस किताब में ईश्वर की निंदा की थी. फतवे में ये कहा गया था कि रुशदी को जान से मारने वाले को इनाम से नवाजा जाएगा. इस फतवे के चलते रुशदी छुपते-छुपाते अपने आप को बचाते रहे. इतना ही नहीं, जापान के एक लेखक हितोशी इगरासी को सलमान रुशदी की किताब का अनुवाद करने के लिए चाकू से गोंदकर मार भी दिया गया था.

3) **बलात्कार और शादी पर फतवा**

भारत के दारुल उलूम देवबंद ने एक फतवा जारी किया जिसमें उन्होंने बलात्कार के अपराधी ससुर और बलात्कार से पीड़ित उनकी बहू को पति-पत्नी करार दिया. हैरानी की बात तो ये कि पीड़िता और उसके पति ने इस फतवे को बेझिझक मान भी लिया.

4) **सानिया मिर्जा के खिलाफ फतवा**

भारत के सुन्नी उलेमा बोर्ड ने टेनिस खिलाड़ी सानिया मिर्जा पर ये कहते हुए फतवा जारी किया था कि उनके स्कर्ट और टी शर्ट इस्लाम के अनुसार नहीं है. फतवे में सानिया को निर्देश दिया गया था कि वे अपने-आप को ढककर टेनिस कोर्ट में खेलने उतरें. सानिया पर आरोप लगाया गया था कि वे युवाओं को गलत रास्ते पर ले जाएंगी.

5) **पुरुष और महिला के एकसाथ काम करने पर फतवा**

इजिप्ट के अल हजार विश्वविद्यालय के स्वास्थ्य विभाग के अध्यक्ष इज़ात अथिया ने एक फतवा जारी करते हुए कहा था कि इस्लाम में अन्जान पुरुष और महिला एक साथ, एक जगह तथा एक ही वक्त में कार्य नहीं कर सकते हैं. ऐसे में इस कायदे से निजात पाने के लिए उन्होंने पुरुषों को अन्जान महिलाओं का पांच बार स्तनपान करने की नसीहत दी. इससे पुरुष उस महिला का बेटा बन जाएगा.

6) **लड़का-लड़की के साथ पढ़ने के खिलाफ फतवा**

भारत के दारुल उलूम देवबंद ने लड़का और लड़की के साथ पढ़ने के खिलाफ ये कहते हुए फतवा जारी किया था कि इस्लाम में इसकी अनुमति नहीं है.

7) **मिकी माऊस के खिलाफ फतवा**

सऊदी अरब के मौलवी शेख मुहम्मद मुनाजिद ने एक फतवा जारी करते हुए ये कहा था कि मशहूर कार्टून किरदार मिकी माऊस को मरना होगा. उनके अनुसार मिकी माऊस शैतान का सिपाही है और ऐसे में वह जिस किसी चीज को भी छूता है वह अपवित्र हो जाती है. उन्होंने इस बात पर चिंता जताई कि कैसे बच्चे मिकी माऊस और टॉम एण्ड जेरी जैसे किरदारों को पसंद करते हैं. मुनाजिद ने ये फतवा एक टीवी शो के दौरान जारी किया था.

शेख मुहम्मद मुनाजिद मौलवी बनने से पहले अमेरिका में सऊदी सरकार के राजदूत रह चुके हैं.

8) **मधुशाला के खिलाफ फतवा**

लखनऊ के मौलाना अबुल इरफान मिया फरंगी महली ने हरिवंशराय बच्चन की मधुशाला के खिलाफ ये कहकर फतवा जारी किया था कि मधुशाला में से मदिरा के पक्ष में लिखी गई पंक्तियों को हटा देना चाहिए क्योंकि मदिरा पीना इस्लाम के विरुद्ध है. साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि मुस्लिमों को मधुशाला नहीं पढ़नी चाहिए.

9) **मोबाइल फोन पर तलाक का फतवा**

भारत के दारुल उलूम देवबंद ने एक फतवा जारी किया था जिसमें फोन पर तीन बार तलाक शब्द के उच्चारण को जायज ठहराया गया. इसमें कहा गया कि नेटवर्क या किसी अन्य कारण से अगर महिला तलाक शब्द को ठीक से नहीं सुन पाती तो भी ये तलाक जायज होगा.

10) **मृत पत्नियों के साथ यौन संबंध**

मोरक्को के मौलवी अब्दुल-बरी जमजमी ने एक फतवा जारी किया था जिसमें उन्होंने पति को अपनी पत्नी की मृत्यु के 6 घंटे बाद तक यौन संबंध बनाने की अनुमति दी थी. फतवे में कहा गया था कि इस्लाम में मृत शरीर के साथ यौन संबंध बनाने पर कोई रोक-टोक नहीं है.

11) **केले और ककड़ी पर फतवा**

यूरोप के एक मौलवी ने फतवा जारी करते हुए महिलाओं के केले और ककड़ी को छूने पर प्रतिबंध लगाया था. फतवे में कहा गया था कि केले और

ककड़ी दोनों पुरुषों के गुप्तांग जैसे दिखते हैं जिससे महिलाओं में उत्तेजना जाग सकती है. अगर फिर भी महिलाओं को इन्हें खाने की इच्छा हो तो उन्हें किसी पुरुष की सहायता लेनी होगी जो उन्हें ये फल काटकर दे सके.

12) पोलियो के खिलाफ फतवा

साल 2014 के नवम्बर महीने में उत्तर प्रदेश के एक मौलवी ने पोलिओ के खिलाफ फतवा जारी करते हुए पोलिओ का टीका लगवाने वालों पर 500 रुपये का जुर्माना भी लगाया था. इसके चलते संभल इलाके के 20 में से 10 गांवों ने पोलिओ की बूंदों का पूर्ण रूप से बहिष्कार किया था. ...फिर उन 10 गांवों का क्या हुआ, यह कहने की जरूरत नहीं.

13) बाल को काले रंगने के खिलाफ फतवा

भारत के दारुल उलूम देवबंद ने एक फतवा जारी किया था जिसमें बालों को काला करने को इस्लाम के विरुद्ध बताया गया था.

14) फोटोग्राफी के खिलाफ फतवा

भारत के दारुल उलूम देवबंद के मुफ्ती अब्दुल कासिम नोमानी ने फोटोग्राफी के खिलाफ फतवा जारी किया था. मुफ्ती नोमानी का कहना है कि फोटोग्राफी करना गैरकानूनी और पाप है.

15) मंगल यात्रा के खिलाफ फतवा

जनरल अथॉरिटी ऑफ इस्लामिक अफेअर्स एंड इन्डोमेन्ट्स ने मंगल ग्रह की यात्रा के खिलाफ फतवा जारी किया था. दरअसल इस्लाम में आत्महत्या को अनुमति नहीं है और संगठन का यह मानना है कि मंगल तक की यात्रा आत्मघाती सिद्ध होगी. ये फतवा मार्स वन के मंगल ग्रह तक की वन-वे ट्रिप के विज्ञापन के बाद जारी किया गया था. संगठन का कहना है कि इस दौरान अन्तरिक्ष यात्री बिना किसी कारण के मरेंगे और इसी के चलते मरने के बाद भी सजा के हकदार होंगे.

16) बुफे सिस्टम पर फतवा

सऊदी अरब के मौलवी सलेह अल-फजवान ने बुफे सिस्टम के खिलाफ फतवा जारी किया था. फतवे में कहा गया कि खाना खाने से पहले खाने की मात्रा तय होनी चाहिए. जो भी बुफे में बिना अपनी भूख की जांच किए 10 या 50 रियाल देकर प्रवेश करता है, वह शरिया का उल्लंघन करता है.

17) किडनी दान के खिलाफ फतवा

भारत के दारुल उलूम देवबंद ने किडनी दान के खिलाफ एक फतवा जारी किया था. देवबंद का कहना था कि अधूरे शरीर का जन्नत में जाना शरीयत के खिलाफ है.

18) फुटबॉल के खिलाफ फतवा

पश्चिम बंगाल के मालदा में प्रशासन को उस वक्त झुकना पड़ा जब एक स्थानीय मौलवी ने महिलाओं के फुटबॉल खेलने के खिलाफ आपत्ति जताई. फतवा दरअसल महिलाओं के कपड़ों को लेकर जारी किया गया था. इस फतवे में फुटबॉल को शरीयत के खिलाफ बताया गया था.

सऊदी अरब में एक मौलवी ने महिलाओं के फुटबॉल देखने को ये कहते हुए हराम घोषित किया कि महिलाएं खिलाड़ियों की जांघों पर नजर डाले रहती हैं. उन्हें जीत या हार से कोई फर्क नहीं पड़ता.

19) पत्नी को खा जाने का फतवा

सऊदी अरब के मुख्य मौलवी मुफ्ती अब्दुल अजीज बिन अब्दुल्लाह ने एक फतवा जारी किया था जिसमें कहा गया था कि अगर कोई पति भूख से त्रस्त है तो वह अपनी पत्नी को या उसके शरीर के हिस्सों को खा सकता है. फतवे में आगे कहा गया था कि इसे पत्नी की कुर्बानी मानी जाएगी और साथ ही इससे वह पतिव्रता भी कहलाएगी.

20) मुस्लिम महिला के काम करने पर फतवा

बरेली के दरगाह अल हजरत के मुफ्ती मुहम्मद सलीम नूरी ने मुस्लिम महिलाओं के काम करने के खिलाफ ये कहते हुए फतवा जारी किया था कि वे पुरुषों के साथ लेन-देन के मामले में सहभागी नहीं हो सकती. फतवे में कहा गया कि मुस्लिम महिलाओं को उन्हीं जगह अपना हाथ आजमाना चाहिए जिसमें परदा को कोई खतरा न हो.

21) नमाज के दौरान कुर्सी के इस्तेमाल पर फतवा

बांग्लादेश के सरकारी संस्थान इस्लामिक फाउंडेशन ने नमाज के वक्त कुर्सी के इस्तेमाल के खिलाफ फतवा जारी किया था. संस्थान का कहना था कि हजरत मुहम्मद कुर्सी का इस्तेमाल नहीं करते थे, इसीलिए नमाज के दौरान कुर्सी के इस्तेमाल पर रोक लगनी चाहिए.

22) ए आर रहमान के खिलाफ फतवा

मुंबई के रजा एकेडमी ने मशहूर संगीतकार ए आर रहमान के खिलाफ फतवा जारी किया था. दरअसल रहमान के खिलाफ इसलिए फतवा जारी किया गया था क्योंकि उन्होंने फिल्म “मुहम्मद- मसेंजर ऑफ गॉड” के लिए संगीत दिया था. फतवे में फिल्म को इस्लाम के खिलाफ बताया गया था क्योंकि इस्लाम में हजरत मुहम्मद के चित्रण पर प्रतिबंध है.

23) अपाहिज नवजात शिशु पर फतवा

खतरनाक आतंकी संगठन आईएसआईएस ने एक फतवा जारी किया था जिसमें उसने अपने कब्जे वाले इलाके में जन्में अपाहिज नवजात शिशुओं को मारने का हुक्म दे दिया था. इसके चलते 38 अपाहिज शिशुओं को दवाइयों के सहारे मौत के घाट उतार भी दिया गया था.

यहां तक कि एक उदारवादी इस्लामिक देश समझे जानेवाले पाकिस्तान में भी मई 2016 में “द काउन्सिल ऑफ इस्लामिक आयडियोलॉजी” द्वारा मॉडल नारी सुरक्षा बिल पर विचार करते हुए कहा गया है कि जरूरत पड़ने पर पुरुषों को यह अधिकार है कि वे अपनी पत्नियों को पीट सकते हैं. इस बिल में स्कूल, हॉस्पिटल तथा ऑफिसों में स्त्री-पुरुषों को परस्पर मिलजुलकर बैठने का भी निषेध है. उपरोक्त संस्था के बिल के अनुसार शरिया में वर्णित सारे अधिकार महिलाओं को मिलेंगे, परंतु उन्हें “ना-मेहराम” यानी जिसके साथ कोई रक्त-संबंध नहीं है, उससे किसी भी प्रकार के मेलजोल की सख्त मनाही होगी. साथ ही वे नृत्य, संगीत या कला के नामपर शिल्प यानी मूर्ति-निर्माण का कार्य नहीं कर सकती हैं.

सो, कुल-मिलाकर मैं चाहता हूँ कि बुद्धिजीवी मुस्लिम होने का दावा करनेवाले इन फतवों पर विशेष रूप से गौर करें. वे ध्यान से पढ़ें व समझें कि क्या इनमें से एक भी आज के युग या आज के समय में कहीं से भी प्रासंगिक है? मेहरबानीकर तमाम मुस्लिम बुद्धिजीवी थोड़ा गौर करें कि क्या ये सारे फतवे इन फतवों को जारी करनेवालों की संकुचित मानसिकता को उजागर नहीं करते हैं? ...तो फिर कम-से-कम उदारवादी मुस्लिम होने का दावा करनेवाले लोग इन फतवों को जारी करनेवालों के खिलाफ जंग क्यों नहीं छेड़ देते हैं? अरे मनुष्य...जिसे खुदा ने स्व-विवेक दिया है, जिसे जंगल के शेर की दहाड़ दी है; वह किसी के कहने पर बकरी तथा भेड़ जैसा व्यवहार करे ही क्यों? कोई होता ही कौन है किसी को कहनेवाला कि यह करो और यह मत करो, वह भी बलपूर्वक?

लेकिन मैंने देखा है कि न मुस्लिम राष्ट्राध्यक्ष, न मुस्लिम धर्मगुरु और ना ही मुस्लिम बुद्धिजीवी; इनमें से कोई भी वास्तव में मुसलमानों की स्वतंत्रता तथा प्रगति की चिंता नहीं करता है. और यही कारण है कि मुस्लिम समाज में बदलाव की गति काफी धीमी है. मैं सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि सऊदी अरब में हाल ही में महिलाओं को वोट का अधिकार

दिया गया. निश्चित ही यह एक स्वागत योग्य कदम है. मैं भी इसका स्वागत करता हूँ. लेकिन यदि इसकी ठीक से सायकोएनालिसिस करी जाए तो इससे दो बातें स्पष्ट तौरपर सामने आती हैं. पहली तो यह कि महिलाओं को आज वोट का अधिकार देने में यह मान ही लिया गया कि उन्हें वोट के अधिकार से वंचित रखना गलत था. और दूसरा यह कि यदि गलत था तो यह गलती ठीक करने में इतना समय क्यों लगा? ...बस यही समस्या है. आज नहीं तो कल, बदल तो सबकुछ जाने ही वाला है. परंतु सवाल समय का है. जितनी जल्दी बदलाव आएगी, उतना मुस्लिम युवक-युवतियों के लिए अच्छा है. क्योंकि इससे इन्हें विश्व के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने तथा अपनी प्रतिभाएं सिद्ध करने का अवसर मिलेगा. ...अब यह तो मुस्लिम राष्ट्राध्यक्षों, उनके धर्मगुरुओं तथा बुद्धिजीवी मुस्लिम होने का दावा करनेवालों को तय करना है कि क्या वे वास्तव में मुस्लिम समाज की खुशहाली चाहते हैं, या ऐसे दावे वे लोग सिर्फ दिखाने के लिए करते हैं? क्योंकि आप क्या कहते हैं, यह महत्वपूर्ण नहीं. सच पूछा जाए तो कहने की कोई कीमत भी नहीं. महत्वपूर्ण यह है कि आपके कहने और करने के परिणाम क्या आ रहे हैं? और परिणाम पूरी दुनिया के सामने है. तमाम प्रतिभाओं के बावजूद मुस्लिम युवक-युवतियों को अपनी प्रतिभा सिद्ध करने के उतने अवसर आप लोग मिलकर उपलब्ध नहीं करवा पा रहे हैं जितने कि गैर-मुस्लिम राष्ट्रों के युवाओं को उपलब्ध हैं.

और मैं एकबार फिर कह दूँ कि मुझे मुस्लिम महिलाओं की चिंता खास तौरपर सता रही है. हर धरती एक समान होती है तथा उसे 'माता' के रूप में ही देखा जाता है. और एक माता से ज्यादा स्त्रियों का दर्द और कौन जान सकता है? अतः स्त्रियों को घर की चारदीवारी में बांधकर रखना या उन्हें बुर्के में रहने पर मजबूर करना कोई भी मां-स्वरूप धरती सहन नहीं कर सकती है. मैं मुस्लिम कट्टरपंथियों के इस तर्क से कतई सहमत नहीं कि ऐसा कर वे महिलाओं को सुरक्षा दे रहे हैं, या ऐसा कर वे उनके मान-सम्मान की रक्षा कर रहे हैं. नहीं, ये सब तो कहने की बात है. वे यह सब कर सिर्फ स्त्रियों का शोषण कर रहे हैं. उन्हें उपयोग की वस्तु मान रहे हैं. बाकी सत्य तो यह है कि उपयुक्त अवसर मिलने पर मुस्लिम महिलाओं ने दुनियाभर में ऐसा क्या-कुछ नहीं कर दिखाया है जो अन्य धर्म की प्रतिभावान महिलाओं ने कर दिखाया है? सो यह स्पष्ट समझ लो कि मुस्लिम लड़कियों तथा अन्य संप्रदाय की लड़कियों की प्रतिभा में कोई भेद नहीं है. सवाल अवसर के साथ-साथ स्वतंत्रता देने का है. और फिर याद करो कि पैगम्बर मोहम्मद ने स्त्रियों को बराबरी का दर्जा देने हेतु कितना कुछ किया था. आप लोगों को याद ही होगा कि पहले लड़कियों को पैदा होते ही तुरंत गर्म रेत में जिंदा जला दिया जाता था. यह मोहम्मद ही थे जिन्होंने इस कुरीति के खिलाफ ना सिर्फ आवाज उठाई बल्कि इस प्रथा को बंद भी करवाया. अतः कुल-मिलाकर सबको यह समझना ही रहा कि मनुष्य का धड़कता दिल ही खुदा है. और उसकी

चिंता करना ही खुदा की एकमात्र इबादत है. और उस हेतु सबको सहिष्णुता बढ़ाने की जरूरत है.

सो, अंत में मैं सभी पृथ्वीवासियों से यह निवेदन करते हुए अपनी बात समाप्त करता हूँ कि सभी सहिष्णुता बढ़ाएं. ...वह भी एक-दो नहीं हर मामले में. सभी आपसी तालमेल व सामंजस्य बढ़ाएं. ...फिर आपकी इस धरती का ब्रह्मांड पर राज होगा, यह मैं आपसे सत्य वचन कहता हूँ. अतः मेरी बात हमेशा के लिए ध्यान में रख लेना कि सहिष्णुता ही जीवन जीने का सही तरीका है. मनुष्य बिना सहिष्णुता के फल-फूल नहीं सकता. और कम या ज्यादा सहिष्णुता की कमी बिना अपवाद के सभी में है. बस अनुभवों के आधार पर मेरा निवेदन इतना ही है कि सब सहिष्णुतापूर्वक मिल-जुलकर रहें. देखिए पृथ्वीवासियों का पूरे ब्रह्मांड पर राज हो जाता है कि नहीं. मुझे इतनी शांति व खुले मन से पढ़ने के लिए मैं आप सभी का आभार मानते हुए आप सबसे इजाजत लेता हूँ.

...धन्यवाद!

भारत